

॥ श्रीहित वंदे ॥

॥ श्रीहित राधावल्लभो जयति ॥

महाप्रभु श्रीहित हरिवंशचंद्र जु द्वारा रचित

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्रं



हिंदी पद्यानुवाद

श्रीबिहारीदास'वृन्दावनी' जु कृत





भावार्थ

श्रीललिताचरण गोस्वामी जी महाराज (घाट वाले)

प्रेरणा

भक्तमाता श्रीऊषा बहिन जी

संकलन एवं प्रस्तुतीकरण: ड़ॉ गिरजेश सिंह

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्रं



ll श्री हित वंदे ll

ll श्रीहित राधावल्लभो जयति ll

ll श्रीहित हरिवंशचंद्रो जयति ll

ll श्री सेवक जु महाराज की जय ll

ll श्री ध्रुवदास जु महाराज की जय ll

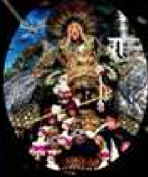
ll श्री वृन्दावन धाम की जय ll

ll श्री यमुना रसरानी की जय ll

ll जय जय श्री राधे ll



श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्रं







राधावेष्टः संप्रदायैक कर्ताचार्यो राधा मंत्रदः सद्गुरुश्च।
मंत्रो राधा यस्य सर्वात्मनैवं वंदे राधा-पाद-पद्म-प्रधानम् ॥

"श्रीराधा" ही जिनकी इष्ट हैं, "श्रीराधा" ही जिनके सम्प्रदाय की एकमात्र प्रवर्तक आचार्य हैं, जिनकी मंत्रदाता सद्गुरु "श्रीराधा" ही हैं, जिनका मंत्र भी "श्रीराधा" ही है, श्रीराधा चरण-कमल-प्रधान उन श्रीहित हरिवंशचन्द्र महाप्रभु जी की मैं वन्दना करता हूँ ।

श्री हरिलालव्यास जी, रसकुल्या टीका, मंगलाचरण

Salutation to Shri Hita Harivansh Mahaprabhu, whose worshipful deity is Shri Radha, whose sect is led by none other than Shri Radha as its Acharya, the spiritual master who bestows the mantra is Sri Radha, the mantra itself is "ShriRadha", and whose devotion is centered around the lotus feet of Sri Radha..

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्रं



(गो. श्रीहित चिम्मनलाल जी महाराज, अहमदाबाद के सौजन्य से)

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्रं

समर्पण



जिन महिमामयी की सद्प्रेरणा और स्नेह सम्बल के वशीभूत हुआ रस की अगाध बीचियों में डूबता उतरता लिखिया की भाँति इस रस ग्रन्थ का पद्यानुवाद लिखने में निमित्त बना हूँ उन्हीं पूजनीया बहन श्रीऊषाजी के सतत प्रेरणा प्रदायी अदृश्य कर कमलों में सादर सप्रेम समर्पित...



बिहारीदास 'वृंदावनी'
व्रज/वृन्दावन

|| सुधानिधि विषयक भावाभिव्यक्ति ||

जगत् की उत्पत्ति आदि का निमित्त कारण वेदांत वेद्य सच्चिदानन्दस्वरूप परब्रह्म है, जिसे श्रुति "रसो वै सः" कहती है। निराकार ब्रह्म 'साकार' निराकार माधुर्यादि गुण-गण विशिष्ट होता है। "रसो वै सः" का अर्थ साकार भगवान में ही चरितार्थ होता है, निर्विशेष अद्वय ब्रह्म में नहीं। सर्वव्यापक निराकार ब्रह्म का स्वरूप भी सगुण-साकार के बिना असमोर्ध्व ऐश्वर्य-माधुर्य आदि की अभिव्यक्ति कथमपि नहीं कर सकता। रस-निष्पत्ति हेतु एक ही ब्रह्मज्योति 'श्रीराधामाधव' के रूप में द्विधा अवतरित हुई - श्रीराधा के आलंबन-विभाव 'श्रीकृष्ण' हैं और श्रीकृष्ण के आलंबन-विभाव अशेष माधुर्य की अधिष्ठात्री भगवती 'श्रीकिशोरीजी' हैं। "रसो वै सः” इस वाक्य से भगवती श्रुति ब्रह्म के जिस रसमय स्वरूप का लक्ष्य कराती है, उसका ही रसज्ञ महानुभाव, महात्मा-गणों ने श्रीवृन्दावन-विलास के रूप में सविस्तार गान किया है। उसी गान की एक तान 'श्रीराधा सुधा-निधि'है।

श्री राधासुधानिधि, सहचरी (दासी) भाव के स्वरूप में श्रीराधारानी की सेवा के लिए समर्पित श्रीश्यामाश्याम की नित्य बिहार लीलाओं का 270 श्लोकों (पदों) से युक्त, रस महाकाव्य है। इसकी रचना अनंत श्रीविभूषित, वंशी अवतार,रसिकाचार्य शिरोमणि, परात्पर प्रेम स्वरूप - श्री हित सजनी जू के रूप में श्रीहित हरिवंशचंद्र महाप्रभु ने की है। जब वे छः मास के ही थे तब ही उनके मुखारविन्द से राधारससुधानिधि स्तव की मधुर रसमयी धारा प्रवाहित होने लगी, जिसे स्वामी श्री नृसिंहाश्रम जी (श्री व्यास मिश्र जी के बड़े भाई), ने लिपीबद्ध किया।

सर्वांग सहज सुंदरी, सहज सोभा धाम, सहज शोभा मूर्ति, सहजानंद कादंबिनी, सहज कृपा मूर्ति, नित्य नवल किशोरी, वृषभानु नंदिनी 'श्रीराधा' के असमोर्द्धव रूप लावण्य, केलि, रस-विलास, वैदग्ध्य अनुराग, वात्सल्य कृपा, सहज प्रेमोत्सव, नित्य विहार आदि दिव्य एवं अवर्णनीय गुण धर्मों का जैसा और जितना सांगोपांग, गान-वर्णन उज्ज्वल रस के माध्यम से "श्रीराधासुधा निधि" स्तोत्र काव्य में उपलब्ध है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ हैं। वृन्दावनीय रसोपासना क्षेत्र में श्रीराधा-सुधानिधि का स्थान ब्रजभाषा एवं संस्कृत साहित्य के मूर्धन्य पर है।
श्री राधासुधानिधि वस्तुतः अनन्य रसिक महानुभावों के लिए तो सम्प्रदाय भेद से हटकर उनके हृदय की अनुपम गुप्त निधि है

क्रमशः...

वेदादि शास्त्र दुरूह हैं, 'अष्टाङ्ग योग की साधना' जनसामान्य की क्षमता का विषय नहीं है;अर्थात् अव्यक्त तत्त्व कष्ट-साध्य है। रसिक वैष्णवाचार्यों की सरस उपासना चित्तवृत्ति के निरोध में सक्षम होने के साथ ही अति सुलभ भी है, इस दृष्टि से “श्रीराधासुधा निधि” की उपादेयता स्वतः सिद्ध होती है। श्रीराधासुधानिधि अपनी अनुपम सरसता के कारण अनाभिमुख मानव को भी भगवदाभिमुख करने में सर्वथा सक्षम है। इसीलिए श्रीवृन्दावन-रस के प्रिया-पक्षपाती उपासकों के लिए, यह अनुपम कृति रस-पदवी का प्रकाश स्तम्भ है। श्रीराधाचरणद्वयी के विचित्र आलोक की चन्द्रिका इसमें सर्वत्र विखरी पड़ी है । वृन्दावन, सहचरी, रसिक और रसमय लाड़ -चाव की चर्चा "श्रीराधासुधानिधि” रसकाव्य में प्रवाहित हो रही है।

विद्वन्मुकुटमणि श्री हरिलालव्यास जी ने रसकुल्या टीका में काव्य की दृष्टि से इस ग्रन्थ को अतुलकान्ति मुक्तक-मोतियों की मञ्जूषा कहा है, सहृदय रसिकों के लिए यह रसकलसों का संग्रह है, भगवद्भक्तों के लिए हित-हिमवत्-सानु-समुद्भूत भक्ति रसामृत वाहिनी भगवती भागीरथी है।
"श्रीराधासुधानिधि” रसकाव्य ग्रन्थ पर संस्कृत एवं ब्रजभाषा में अनेक विशद टीकायें उपलब्ध हैं। जिनमें से कुछ प्राचीन टीकाओं का उल्लेख आगे सलंग्न है |

अधुना रसिकसन्त श्रीबिहारीदासजी (वृंदावनी) ने इस रस ग्रन्थ पर खड़ी बोली (हिन्दी) में पद्यानुवाद किया है। उनका यह प्रयास रसोपासना की दिशा में एक आदरणीय योगदान है। 'रसध्वनि' ही काव्य का जीवन दायक आत्मतत्त्व है, इसकी कमी में उत्तम काव्य की कल्पना भी नहीं की जा सकती; इस दृष्टि से सुधानिधि अति महत्वपूर्ण स्थान पर है। भक्त कवि ने इस पद्यात्मक अनुवाद में श्लोक के प्रत्येक शब्द को अनुवादित करने का प्रयास न करके ग्रन्थकार के आत्मभाव को प्रकटित किया है। यह एक गंभीर एवं रसदायक शैली है। रसग्राही पाठक को गुदगुदा देने वाला यह काव्य कौतुक अपने आप में विलक्षण है। पद्यों में गुम्फित शब्दावलि सन्तुलित एवं गम्भीर है इसलिये भी अनुवाद की गरिमा सराहनीय है। इस पद्यात्मक अनुवाद के साथ सहज सरल हिन्दी गद्य अनुवाद (भावार्थ) जो की रसिकवर श्रीहित ललिताचरण गोस्वामी जी (घाट वाले) महाराज द्वारा किया गया है वह भी मणि-काञ्जन योग का काम कर रहा है। दोनों ही रसिकवर भाषा एवं भाव के धनी हैं। इस अनुपम कृति से अवश्य प्रेमी हृदयों को परम सुख का अनुभव होगा; एवं श्रीराधा-पादारविन्द की भक्ति-दिशा में एक सरस अवलम्ब प्राप्त होगा, ऐसा हमारा पूर्ण विश्वास है।

[redacted]

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्र

श्रीहित हरिवंशचन्द्र महाप्रभु जी विरचित "श्रीमद राधारससुधा निधि स्तोत्र" की

अनन्य रसिक महानुभावों द्वारा रचित हिंदी टीका


संत शिरोमणि श्री किशोरी शरण जी महाराज (सूरदास बाबा)


धर्मसम्राट स्वामी श्री हरिहरानंद सरस्वती जी महाराज (श्री करपात्री)


श्री नरोत्तम दास ठाकुर जी महाराज

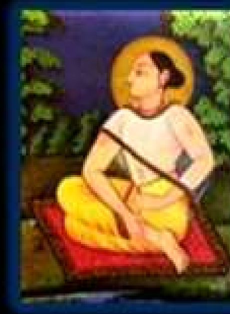

श्रीहित स्वामिनी शरण जी महाराज


श्रीहित वृन्दावन दास जी महाराज (चाचा जी)


श्रीहित चन्द्रलाल गोस्वामी जी महाराज


श्री हित भोलानाथ जी (भोरी सखी)


श्री हितदास जी महाराज


श्रीहित कृष्णचन्द्र गोस्वामी महाप्रभु


श्रीहित किशोरी शरण "अलि" जी महाराज


श्रीहित किशोरी लाल जी महाराज


श्रीहित ललिता चरण गोस्वामी जी महाराज


श्रीहित बिहारीदास जी महाराज (वृंदावनी)


संत श्री रमेश बाबा जी महाराज बरसाना


श्री भक्ति विजय जी

प्राचीन टीकायें

- जयदेव कवि कृत राधासुधानिधि-टीका
- सन्तदासजी कृत राधासुधानिधि-टीका
- तुलसीदासजी कृत राधासुधनिधि-टीका
- लोकनाथजी कृत राधासुधानिधि-टीका ब्रजभाषा गद्य (हस्तलिखित)
- भोलानाथजी 'भोरीसखी' कृत 'राधासुधानिधि-टीका
- वृंदावनदासजी (चाचाजी से अलग) कृत राधासुधानिधि-टीका
- गो. कृपालालजी एवं नरोत्तमदासजी कृत राधासुधानिधि-टीका
- हितदासजी कृत राधासुधानिधि-टीका (संस्कृत गद्य में)
- हितदासजी कृत राधासुधानिधि-टीका (पद्यानुवाद)
- हरिलालव्यासजी कृत राधासुधानिधि-टीका (बृहद वर्णन)
- हरिलालव्यासजी कृत राधासुधानिधि टीका (मध्य व्याख्या)
- हरिलालव्यासजी कृत राधासुधानिधि टीका (लघु व्याख्या)
- गो. चन्द्रलालजी कृत राधासुधानिधि-टीका
- रतनदासजी कृत राधासुधानिधि-टीका
- यमुनादासजी कृत राधासुधानिधि-टीका
- सदाशिवलालजी उपनाम सुन्दरदासजी कृत राधासुधानिधि-टीका
- गो. रंगीलालजी कृत राधासुधानिधि-टीका
- गो. मनोहरवल्लभजी कृत राधासुधानिधि-टीका
- ब्रजगोपालदासजी कृत राधासुधानिधि-टीका
- हरीदासजी कृत राधासुधानिधि-टीका
- श्री हित किशोरी लाल जी कृत राधासुधानिधि-टीका(ब्रज भाषा)

- गो. लड़ैतीलालजी कृत राधासुधानिधि-टीका
- गो. जुगलबल्लभजी कृत राधासुधानिधि-टीका
- स्वामिनीशरणजी कृत राधासुधानिधि-टीका
- बैजनाथजी कृत राधासुधानिधि-टीका
- भोलानाथजी सक्सैना कृत राधासुधानिधि-टीका (पद्यानुवाद)
- भोलानाथजी सक्सैना कृत राधासुधानिधि-टीका (गद्यानुवाद)
- ओंकारदत्तजी शास्त्री कृत राधासुधानिधि-टीका
- सुश्री हितलताजी शर्मा कृत राधासुधानिधि-टीका
- गोस्वामी श्रीहित ललिताचरण जी महाराज कृत राधासुधानिधि-टीका
- बाबा बिहारीदासजी उपनाम 'वृंदावनी' कृत राधासुधानिधि-टीका
- धर्मचन्द्रजी छाप-'निज हित' कृत राधासुधानिधि-टीका
- श्री किशोरी शरण "अलि" कृत श्रीमदराधा सुधा निधि (*हार्द प्रकाश नामनी टीका सहित*)
- महाप्रभु श्रीहित कृष्णचन्द्र प्रणीत श्रीराधा-उपसुधा-निधि (हिन्दी भावानुवाद सहित)
- पूज्यपाद स्वामी श्री हरिहरानन्द सरस्वती (श्री करपात्रीजी) महाराज प्रणीत श्रीराधा-सुधा (*श्रीराधासुधानिधि-प्रवचन-माला*)
- संत श्री रमेश बाबा जी महाराज कृत राधासुधानिधि-टीका
- श्री भक्ति विजय जी कृत राधासुधानिधि-टीका

यस्याः कदापि वसनाञ्चल खेलनोत्थ धन्यातिधन्य पवनेन कृतार्थमानी ।
योगीन्द्र-दुर्गम-गति-र्मधुसूदनोऽपि तस्या नमोऽस्तु वृषभानुभुवो दिशेऽपि ॥१॥



कबहुँ जिनके खेलत परस्यो,
उर अंचल को अतिधन्य पवन
मानों कृतार्थ तन पुलकित है,
जोगीस अगम गति मधुसूदन
चढ़ि ऊँची अटा अवलोकति है,
अपलक नैनं प्रिय नंद नंदन
वृषभानु लली राधा जु की,
वा दिव्य दिशा को नित्य नमन
॥1॥

भावार्थ

योगीन्द्रों (शिव-नारद-शुक-सनकादिक) की पहुँच से सर्वथा दूर रहने वाले मधुसूदन (श्रीराधा-मुख-कमल के मधुमय मकरन्द के अनन्य मधुकर श्रीलालजी) भी, किसी समय जिनके वस्त्र के छोर के फरहराने से निकली, धन्य से भी अति धन्य वायु के स्पर्श से, स्वयं को कृतकृत्य अनुभव करते हैं, उन धर्म की प्रकाशक (गुरुवर्य श्रीराधा) की निवास स्थली (वृन्दावन) की दिशा को मेरा/मेरी नमस्कार हो।

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्र

ब्रह्मेश्वरादि-सुदुरूह-पदारविन्द – -श्रीमत्पराग-परमाद्भुत-वैभवायाः ।
सर्वार्थसार-रसवर्षि-कृपार्द्र-दृष्टेस् -तस्या नमोऽस्तु वृषभानुभुवो महिम्ने ॥२॥



विधि हरि दुर्लभ
पादारबिंद,
मकरंद विभव
अद्भुत अपार
सर्वाथ सार
वर्षी सुद्रष्टी,
राधा महिमा को
नमस्कार
॥2॥

भावार्थ

जो ब्रह्मा, शिव आदि के लिए अत्यन्त दुर्लभ हैं, जिनके चरण-कमलों का शोभा सम्पन्न पराग परम अद्भुत वैभव से संयुक्त है, जो पुरुषार्थ चतुष्ट्य (धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष) के सारभूत रस की वर्षा करती रहती हैं, जिनकी दृष्टि कृपा-रस से भींजी रहती है, उन धर्म की प्रकाशक (गुरुवर्य श्रीराधा) की निवास स्थली (वृन्दावन) की महिमा को मेरा/मेरी नमस्कार हो।

यो ब्रह्म-रुद्र-शुक-नारद-भीष्ममुख्यै -रालक्षितो न सहसा पुरुषस्य तस्य ।
सद्यो-वशीकरण-चूर्ण-मनन्त-शक्तिम् तं राधिका-चरणरेणु-मनुस्मरामि ॥३॥



जो महाभागवत ब्रह्मा शिव,
शुक नारद भीष्म आदि हरिजन
उनको भी सुलभ नहीं सहसा,
वे परम पुरुष दुर्लभ दर्शन
है प्रतिक्षण उनका वशीकरण,
जो चूर्ण अमोघ सहज साधन
मैं करता हूँ श्री राधा की,
उस चरण रेणु का सदा स्मरण
॥3॥

भावार्थ

जो ब्रह्मा, शिव, शुक, नारद, भीष्म आदि मुख्य धर्मज्ञों को एकाएक दिखाई नहीं पड़ता, उस परम पुरुष (श्रीलालजी) को अति शीघ्र वश में करने वाले, अनन्त शक्ति सम्पन्न चूर्ण रूपी उस श्रीराधिका-चरण-रेणु का, मैं बार-बार स्मरण करता/करती हूँ।

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्र

आधाय मूर्द्धनि यदापुरुदारगोप्यः काम्यं पदं प्रियगुणैरपि पिच्छमौलेः ।
भावोत्सवेन भजतां रसकामधेनुम् तं राधिका चरणरेणुमहं स्मरामि ॥४॥



जिनको उदार बृज बालाएं,
सिन्दूर सदृश कर सिर धारण
पा गयी सहज ही वांछित पद,
प्रिय गुण मंडन शिखण्ड भूषण
नव रस प्रद कामधेनु उनके,
जो निरत निरंतर भाव भजन
मेरी स्मृति पथ के दीपक हो,
वे राधा चरणाम्बुज रज कण
॥4॥

भावार्थ

उदार गोपियों (श्रीराधाकिंकरीगणों) ने जिसे मस्तक पर धारण करके अपने वाञ्छित पद (श्रीराधा-पद-दासी) को प्राप्त किया है, मयूरपिच्छधारी (श्रीलालजी) ने भी अपने प्रिय गुणों (श्रीराधा-चरण-विलोड़ित होना, आत्मोत्सर्ग करना, सर्वस्व हारकर भी अपने को विजयी मानना आदि-आदि) के द्वारा अपने वाञ्छित पट (श्रीराधा-प्रिय प्रेमी) को प्राप्त किया है, जो भाव-चाव से भजने वालों के लिए रम की देने वाली कामधेनु स्वरूपा है,
मैं उसी राधा-चरण-रेणु का स्मरण करता/करती हूँ।

दिव्य-प्रमोद-रससार-निजाङ्गसङ्ग – -पीयूषवीचि-निचयै-रभिषेचयन्ती ।
कन्दर्पकोटि-शर-मूच्छित-नन्दसूनु -सञ्जीवनी जयति कापि निकुञ्जदेवी ॥५॥



कंदर्प कोटि शत शर आहत,
जब होते श्री ब्रिजपति कुमार
तब द्रवित हृदय अर्पित करतीं,
निज अंग संग आहलाद सार
नव नव रस लोल लहरियों से,
करतीं अभिसिंचित बार बार
जय नवनिकुंज अधिदैवी की,
जो ब्रज जीवन जीवनाधार
ll5ll

भावार्थ

जो अलौकिक आनन्द और रस के सार स्वरूप अपने अंग-संग (अंग सांस्पर्श) की अमृत लहरियों का सिंचन करती रहती हैं, जो काम के करोड़ों बाणों से मूर्छित नन्दनन्दन (श्रीलालजी) की संजीवनी (जीवनदायिनी) हैं, उन किसी अनिर्वचनीय निकुञ्ज देवी (श्रीप्रियाजी) की जय हो।

तन्नः प्रतिक्षण-चमत्कृत-चारुलीला – लावण्य-मोहन-महा-मधुराङ्गभङ्गिः ।
राधाननं हि मधुराङ्ग-कलानिधान – माविर्भविष्यति कदा रससिन्धुसारम् ॥६॥



लीला लावण्य चमत्कारी,
नव नव आभा मंडित प्रतिक्षण
मधु मधुर भंगिमाएं अपूर्व,
मनमोहन के मन का मोहन
कल केलि कलाओं का निधान,
रस सिंधु सार सौंदर्य सदन
मम हृदय गगन में कब होगा,
वह उदित राधिका चन्द्रवदन
॥6॥

भावार्थ

जो क्षण-क्षण में मोहित करने वाली अत्यन्त मधुर अंग-चेष्टाओं के सुन्दर लीला-सौन्दर्य से चमत्कृत है, जो निश्चित रूप से माधुर्य से पूर्ण अंगों वाली कलाओं की निधि (उत्पत्ति और निलय का स्थान) है एवं जो रस के समुद्र का सार है, वह श्रीराधा का मुख हमारे सामने कब प्रकट होगा ?

यत्-किंकरीषु बहुशः खलु काकुवाणी नित्यं परस्य पुरुषस्य शिखण्डमौलेः ।
तस्याः कदा रसनिधे-वृषभानुजाया – स्तत्केलिकुञ्ज भवनाङ्गणमार्जनीस्याम् ॥७॥



जिनकी किङ्किरियों की प्रतिदिन,
पर पुरुषोत्तम शिखण्ड मंडन
बहु विधि मनुहार किया करते,
कहते प्रेमातुर नम्र वचन
उन रसनिधि भानुनन्दिनी का,
अति अनुपम केलि निकुंज भवन
क्या कभी मार्जनी होकर मैं,
प्रति प्रातः बुहारूंगी आँगन
॥7॥

भावार्थ

जिनकी दासियों (श्रीराधार्किंकरीगणों) के प्रति मोर-मुकटधारी परम पुरुष (श्रीलालजी) की निश्चय ही प्रतिदिन अनेकों बार चाटुकारिता पूर्ण वचन-रचना होती रहती है, उन रस की निधि वृषभानुनन्दिनी (श्रीप्रियाजी) की क्रीड़ा के कुञ्ज भवन के आँगन की सोहनी-सेवा करने वाली (बुहारी देने वाली) मैं कब होऊँगी ?

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्र

वृन्दानि सर्वमहतामपहाय दूराद् – -वृन्दाटवीमनुसर प्रणयेन चेतः ।
सत्तारणीकृत सुभाव सुधारसौघम् राधाभिधानमिह दिव्य निधानमस्ति ॥८॥



अब त्याग दूर से महत सकल,
रे चपल चित्त हो सावधान
कर वृन्दावन पथ पर प्रयाण,
गाता चल उसके प्रणय गान
सज्जन निस्तारक भाव सुधा,
अति दिव्य जँहा है प्रवहमान
हों तेरी नित्य समाश्रय वे,
श्रीराधा नवरस की निधान
॥8॥

भावार्थ

हे मेरे चित्त ! सभी प्रकार की महत्ताओं को दूर से छोड़कर प्रीतिपूर्वक वृन्दावन का अनुसरण कर, क्योंकि इसमें ही श्रीराधा नामक वह दिव्य निधि है, जो सच्चे अर्थों में तारने को तत्पर सुन्दर भाव रूपी अमृत-रस के प्रवाह से पूर्ण है।

केनापि नागरवरेण पदे निपत्य सम्प्रार्थितैक-परिरम्भ-रसोत्सवायाः ।
सभ्रू-विभंग-मतिरंगनिधेः कदा ते श्रीराधिके नहि नहीति गिरः शृणोमि ॥९॥



पद प्रणति निरत हो
नागर बल,
परिरम्भन रस के
याचक बन
भ्रू भृंग सहित अति रंग निधे,
मैं कभी सुनुँगी नेति वचन
॥9॥

भावार्थ

हे अति रंग निधि श्रीराधिके ! किसी अनिर्वचनीय चतुर शिरोमणि (श्रीलालजी) द्वारा आपके चरणों में गिरकर, केवल एक बार आलिंगन प्रदान करने के रसमय उत्सव की सम्यक् प्रकार से प्रार्थना किये जाने पर, आप उन्हें (प्रत्युत्तर स्वरूप) भौंहों की कुटिल भंगिमाओं के साथ 'नहीं-नहीं' कह रहीं हों- मैं आपकी ऐसी वाणी कब सुनूँगी ?

यत्पादपद्म-नखचन्द्र-मणिच्छटायाः विस्फूर्जितं किमपि गोपवधूष्वदर्शि ।
पूर्णानुराग-रससागर-सारमूर्तिः सा राधिका मयि कदापि कृपां करोतु ॥१०॥



जिनकी पद नख मणि
छटा लेस,
बृज वधु वृन्द
वश श्रीवलेष
पूर्णानुराग रस सिंधु सार,
हों सदै राधिका एक बार
ll10ll

भावार्थ

जिनके चरण-कमल की नख-चन्द्रमणि की कान्ति का कुछ अनिर्वचनीय चमत्कारी प्रभाव
गोप वधुओं में देखा गया है, वह पूर्ण अनुराग-रस-सागर-सार-मूर्त्ति श्रीराधिका कभी मुझ पर कृपा करें।

उज्जृम्भमाण-रसवारि-निधेस्तरंगै – रङ्गैरिव प्रणयलोल-विलोचनायाः ।
तस्याः कदा नु भविता मयि पुण्यदृष्टि – -वृन्दाटवी-नवनिकुञ्ज-गृहाधिदेव्याः ॥११॥



उन्मद रस निधि जो अंग अंग,
उठती नव नव छवि की तरंग
अधिदैवी नवल निकुंज भवन,
नव प्रणय लोल जिनके लोचन
करते निज जन पर सुधा वृष्टि,
कब होगी मुझ पर दया दृष्टि
ll11ll

भावार्थ

जो उत्कृष्ट रूप से उच्छलित रस-सागर की तरंगों के समान अंगों वाली हैं, जिनके नेत्र प्रणय-रस से चंचल हो रहे हैं, वृन्दावन के नव निकुञ्ज भवन की उन अधिष्ठात्री देवी (श्रीप्रियाजी) की पुण्य दृष्टि क्या कभी मुझ पर होगी ?

वृन्दावनेश्वरि तवैव पदारविन्दम् प्रेमामृतैक-मकरन्द-रसौघपूर्णम् ।
हृद्यर्पितं मधुपतेः स्मरतापमुग्रम् निर्वापयत्-परमशीतल-माश्रयामि ॥१२॥



प्रेमामृत रस
मकरन्द पूर्ण,
शीतलकारी जन
मन मिलिंद
मधुमती उर उग्र तापहारी,
आश्रय राधा पादारबिन्द
॥12॥

भावार्थ

हे वृन्दावनेश्वरी (श्रीराधे) ! आपके चरण-कमल एकान्त प्रेम के अमृतमय मकरन्द के रस-प्रवाह से परिपूर्ण हैं, जिन्हें हृदय में अर्पण करने से मधुपति (श्रीलालजी) का तीव्र काम-ताप शान्त हो जाता है, मैं उन्हीं अत्यन्त शीतल चरण-कमल का आश्रय ग्रहण करता/करती हूँ।

राधाकरावचित-पल्लव-वल्लरीके राधापदाङ्क-विलसन्-मधुरस्थलीके ।
राधायशो-मुखर-मत्त-खगावलीके राधा-विहार-विपिने रमतां मनो मे ॥१३॥



राधा कर स्पर्श पुलकित,
पल्लव वल्ली नव कुसुम कली
राधा के पद अंक लसित,
यह हृदय हारिणी मधुर थली
राधा रस यश गान मुखर,
मधुमत वाली सी खग अवली
श्रीराधा विहार वन में मन,
रमा रहे वन लुब्ध अली
॥13॥

भावार्थ

श्रीराधा के कर-कमलों से लालित-पालित बेलियों, मंजरियों एवं पत्तों से युक्त, श्रीराधा के चरण-चिन्हों से सुशोभित अत्यन्त प्रिय स्थलियों से मण्डित एवं श्रीराधा के यशोगान में मत्त चहचहाते पक्षी समूह से राजित श्रीराधा के विहार वन में मेरा मन रमण करे।

कृष्णामृतं चल विगादु-मितीरिताहम् तावत्-सहस्व रजनी सखि यावदेति ।
इत्थं विहस्य वृषभानुसुतेह लप्स्ये मानं कदा रसद-केलिकदम्ब-जातम् ॥ १४॥



चल री सखी चलें कर आयें,
कृष्णामृत रस अवगाहन
जब तक रात नहीं होती,
श्रीराधे करो धैर्य धारण
तुम लज्जित हो, रीझ खीझ,
सुन कर मेरे परिहास वचन
केलि कदम्ब मार कर दोगी,
कब रस दान मान भाजन
ll14ll

भावार्थ

श्रीराधा जब मुझसे यह कहेंगी कि "हे सखि ! कृष्णामृत में अवगाहन (यमुना-जल में स्नान) करने चलो", तब मैं कृष्णामृत में अवगाहन का श्लेषार्थ' श्याम रूपी अमृत का उपभोग' समझकर प्रत्युत्तर में उनसे कहूँगी कि "जब तक रात्रि न हो जाय, तब तक धैर्य धारण करो"। मेरे इस परिहास से आपके हृदय में रसदायक केलि समूहों का आविर्भाव होगा और आप मुझसे मान करने का उपक्रम करोगी-ऐसा कब होगा ?

पादाङ्गुली-निहित-दृष्टि-मपत्रपिष्णुम् दूरादुदीक्ष्य रसिकेन्द्र-मुखेन्दुबिम्बम् ।
वीक्षे चलत्पदगतिं चरिताभिरामाम् झङ्कार-नूपुरवतीं बत कर्हि राधाम् ॥ १५॥



वे देख दूर से रसिक मौली का,
नव आभामय चन्द्रवदन
निज पादांगुली सन्निहित दृष्टि,
होगी मंथर गति नमित नयन
शत सुधा तिरस्कारी शिंजन,
वह पद नुपुर की झनन झनन
चरिताभिराम श्री श्यामा के,
क्या कभी सुलभ होंगे दर्शन
ll15ll

भावार्थ

रसिक शेखर (श्रीलालजी) के मुख रूपी चन्द्र की छटा को दूर से देखकर, श्रीराधिकाजी ने अपनी दृष्टि को चरणों की अँगुलियों में निहित कर रखा है, फिर गति विशेष से चल पड़ी हैं, उस समय उनके नूपुर झंकृत हो उठे हैं। अपने चारु चरित्रों से अति रम्य उन श्रीराधा को मैं कब देखूँगा/देखूँगी ?

उज्जागरं रसिकनागर-सङ्गरङ्गैः कुञ्जओदरे कृतवती नु मुदा रजन्याम् ।
सुस्नापिता हि मधुनैव सुभोजिता त्वम् राधे कदा स्वपिषि मत्करलालितांघ्रिः ॥ १६॥



नागर रसिक संग कर
स्वामिनी,
नव निकुंज रस केलि
जागरण
मंजन भोजन शयन
करोगी,
चरण कमल कब अंक
आभरण
ll16ll

भावार्थ

हे श्रीराधे ! तुमने कुञ्ज के एकान्त स्थान में रसिक नागर (श्रीलालजी) के साथ रात्रि भर आनन्दपूर्वक प्रेम-विहार करते हुए निश्चय ही जागरण किया है; किन्तु अब तुम मेरे द्वारा अच्छी तरह स्नान कराने, मधुर-पदार्थों का भोजन कराने और शैयासीन होकर अपने श्रीचरणों का मेरे द्वारा लालन-संवाहन कराते हुए फिर कब सोओगी ?

वैदग्ध्यसिन्धु-रनुराग-रसैकसिन्धु – -र्वात्सल्यसिन्धु-रतिसान्द्र-कृपैकसिन्धुः ।
लावण्यसिन्धु-रमृतच्छवि-रूपसिन्धुः श्रीराधिका स्फुरतु मे हृदि केलि सिन्धुः ॥१७॥



चातुरी सिंधु कृष्णानुराग रस,
की जो है साकार सिंधु
वात्सल्य सिंधु अति
सबल कृपा की,
एक मात्र आधार सिंधु
लावण्य सिंधु छवि रूपामृत,
माधुर्य सार की सार सिंधु
मेरे उर में हो स्फूर्त सदा,
श्रीराधा नित्य विहार सिंधु
॥17॥

भावार्थ

(चतुरता का समुद्र (नव्यता का प्रतीक जल-सिंधु), अनुराग रस का अद्वितीय समुद्र (स्निग्धता का प्रतीक दधि-सिंधु), वत्सलता का समुद्र (पाल्यता का प्रतीक क्षीर-सिंधु), अत्यंत घनीभूत कृपा का एकमात्र समुद्र (पुष्टता का प्रतीक घृत-सिंधु), लावण्य का समुद्र (मादकता का प्रतीक सुरा-सिंधु), अमृतमयी शोभा वाले रूप का समुद्र (उद्दिपकता एवं सम्वर्धकता का प्रतीक इक्षु रस -सिंधु), एवं क्रीड़ाओं का समुद्र (तृषा का प्रतीक क्षार-सिंधु) – ऐसे सात समुद्रों को धारण करने वाली श्रीराधिका मेरे हृदय में स्फुरित हों।

दृष्ट्वैव चम्पकलतेव चमत्कृताङ्गी वेणुध्वनिं क्व च निशम्य च विह्वलाङ्गी ।
सा श्यामसुन्दर-गुणै-रनुगीयमानैः प्रीता परिष्वजतु मां वृषभानुपुत्री ॥१८॥



देख चपल चम्पक
लतिका सी,
वंशी धुन सुन
बिहवल अंगी
प्रिय के गुण गण गान
श्रवण कर,
श्यामा अंकमाल
कब देगी
ll18ll

भावार्थ

अपने प्रियतम श्रीश्यामसुन्दर को देखते ही जिनके प्रत्येक अंग चम्पक लता की भाँति चमत्कृत हो उठते हैं और कभी वंशी की ध्वनि को सुनकर जिनके अंग-अंग विह्वल हो जाते हैं, वह वृषभानु-पुत्री (श्रीराधा), मेरे द्वारा गाये गये अपने प्रीतम के गुणों को सुनकर, मेरा प्रीतिपूर्वक आलिंगन कब करेंगी ?

श्रीराधिके सुरतरङ्गि-नितम्बभागे काञ्चीकलाप-कलहंस-कलानुलापैः ।
मञ्जीर-शिञ्जित-मधुव्रत-गुञ्जितांघ्रि – पङ्केरुहैः शिशिरय स्वरसच्छटाभिः ॥१९॥



कांची कलाप कल हंस मुखर,
रति रंग सलोल नितम्ब देश
नूपुर सिंजन मधुकर गुंजन,
पादारबिन्द मधुमय अशेष
हे कृपा सुधा सरिते राधे,
अति ताप तप्त उर मरू प्रदेश
आओ अब तो शीतल कर दो,
सिंचित उज्जवल रस छटालेख
॥19॥

भावार्थ

सुरत के रंग में रँगी हुई हे श्रीराधिके ! नितम्ब भाग में सुशोभित किंकिणी समूह के कलहंसों के मधुर आलाप-गान द्वारा एवं भ्रमरों के गुञ्जार जैसे नूपुर की झनकार वाले चरण-कमलों के द्वारा, अपनी रस की छटाओं से मुझे शीतल करो।

श्रीराधिके सुरतरङ्गिणि दिव्यकेलि – कल्लोलमालिनि लसद्-वदनारविन्दे ।
श्यामा-मृताम्बुनिधि-सङ्गम-तीव्रवेगि – न्यावर्त्त-नाभिरुचिरे मम सन्निधेहि ॥२०॥



अति दिव्य केलि कल्लोल ललित,
वदनारबिन्द शोभानिधान
रस सिंधु श्याम सम मिलन हेतु,
तुम वेगवती प्रणयाभीयान
आवर्त नाभि सर रुचिर मध्य,
वन मीन लीन हरि तृषित प्राण
हे सूरत रंगीनी श्रीराधे,
अति शीघ्र करो सानिध्य दान
॥20॥

भावार्थ

हे श्रीराधिके ! आप सुर-तरंगिणी (देवनदी-श्रीगंगाजी) जैसी हो, जिसमें अलौकिक केलि रूपी नई-नई तरंगें माला की तरह आदि-अन्त विहीन होकर उठ रही हैं, आपका श्रीमुख कमल जैसा खिल रहा है, आपकी नाभि गंभीर भँवर जैसी प्रतीत हो रही है और आप अपने प्रियतम श्रीश्यामसुन्दर रूपी सुधा-सागर से मिलने के लिए तीव्र वेग से जा रही हो। आप मुझे अपना सानिध्य प्रदान कीजिये।

सत्प्रेमसिन्धु-मकरन्द-रसौघधारा – सारा-नजस्त्र-मभितः स्रवदाश्रितेषु । ।
श्रीराधिके तव कदा चरणारविन्दम् गोविन्द-जीवनधनं शिरसा वहामि ॥२१॥



सत प्रेम सिंधु मकरंद सार,
धारा अजस्त्र वर्षी उदार
आश्रित जन आप्ला वनकारी,
ब्रिज वन वीथी के अलंकार
श्रीराधे तव पादारबिन्द,
गोविंद देव जीवनाधार
कब मेरे मस्तक ऊपर तुम,
हंस कर धर दोगी सहित प्यार
ll21ll

भावार्थ

हे श्रीराधिके ! जो अपने आश्रितजनों पर सभी ओर से अमन्द प्रेम-समुद्र के मकरन्द रस की प्रबल धारा को निरन्तर बरसाते रहते हैं एवं जो गोविन्द (श्रीलालजी) के जीवन सर्वस्व हैं, आपके उन चरण-कमलों को, मैं अपने सिर पर कब धारण करूँगी ?

सङ्केतकुञ्ज-मनु-कुञ्जर-मन्दगामि – -न्यादाय दिव्य-मृदु-चन्दन-गन्धमाल्यम् ।
त्वां कामकेलि-रभसेन कदा चलन्तीम् राधेऽनुयामि पदवी-मुपदर्शयन्ती ॥२२॥



ले दिव्य मृदुल मलयज सुगंध,
बहुरंग कुसुम आभरणमान
संकेत कुञ्ज की ओर चलोगी,
तुम कुंजर मदमत्त चाल
नव प्रणय केलि उल्लास भरी,
श्रीराधे वन के लता जाल
उलझे पट सुलझाऊँगी कब,
दिखला वल्ली मंडित तमाल
॥22॥

भावार्थ

हे श्रीराधे ! जब आप काम-केलि के आवेग से, गज जैसी मन्द गति से, संकेत कुञ्ज की ओर प्रस्थान करेंगी, तब आपके पीछे-पीछे, आपको अभीष्ट मार्ग दिखाती हुई, दिव्य और कोमल चन्दन तथा सुगन्धित माला लिये हुए, मैं कब चलूँगी ?

गत्वा कलिन्दतनया-विजनावतार – मुद्वर्त्तयन्त्य-मृत-मङ्ग-मनङ्गजीवम् ।
श्रीराधिके तव कदा नवनागरेन्द्रम् पश्यामि मग्न नयनं स्थितमुच्चनीपे ॥२३॥



कालिंदी तट सुरम्य निर्जन,

करवाऊंगी उबटन मंजन

तब अंग अनंग रंग जीवन,

दर्शन रसिया सुन्दर नवघन

बैठे कदम्ब की डाड़ सघन,

देखूंगी कब मैं मग्न नयन

॥23॥

भावार्थ

हे श्रीराधिके ! श्रीयमुनाजी के एकान्त घाट पर जाकर, कामदेव को जीवित कर देने वाले आपके अमृतमय अंगों का उबटन करती हुई, तट पर स्थित कदम्ब के वृक्ष पर बैठे हुए आपके नव नागर शिरोमणि (श्रीलालजी) को, आपकी ओर बिना पलक झपकाये हुए नेत्रों से कब देखूँगी ?

सत्प्रेमराशि-सरसो विकसत्-सरोजम् स्वानन्द-सीधु-रससिन्धु-विवर्द्धनेन्दुम् ।
तच्छ्रीमुखं कुटिल-कुन्तल-भृङ्गजुष्टम् श्रीराधिके तव कदा नु विलोकयिष्ये ॥२४॥



सत प्रेम राशि सरसी विकसित,
अद्भुत अपूर्व मधुमय सरोज
स्वानंद सुधा रस सिंधु विवर्धन,
इंदु कहुँ या नव मनोज
वह कुंतल कुटिल मधुप अवली,
आवृत अनुपम छवि का निधान
श्रीमुख दर्शन कर श्रीराधे,
कब शीतल होंगे नयन प्राण
ll24ll

भावार्थ

हे श्रीराधिके ! जो प्रेम-रस से परिपूर्ण सरोवर का खिलता हुआ कमल है एवं जो स्वयं के आनन्द रूपी अमृत-रस-समुद्र को बढ़ाने वाले पूर्ण चन्द्र के समान है, आपके उस शोभाशाली मुख को मैं निरन्तर कब देखूँगी ?

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्र

लावण्यसाररससारसुखैकसारे कारुण्यसारमधुरच्छविरूपसारे
वैदग्ध्यसाररतिकेलिविलाससारे राधाभिधे मम मनोऽखिलसारसारे ॥२५॥



लावण्य सार रस सार सही,
सर्वोपरि सुख आधार यही
कारुण्य सार माधुर्य सार,
छवि रूप रसामृत सार यही
चातुर्य सार रस केलि सार,
नव नव विहार का सार यही
मन रमा रहे राधा निधि में,
है सब सारों का सार यही
॥25॥

भावार्थ

जो लावण्य का सार, रस का सार, एकान्त सुख का सार, करुणा का सार, मधुर शोभाशाली रूप का सार, चतुरता का सार एवं रति की क्रीड़ा-विलासों का सार है, ऐसे समस्त सारों के सार श्रीराधा नामक स्वरूप में मेरा मन रमण करे।

चिन्तामणिः प्रणमतां व्रजनागरीणाम् चूडामणिः कुलमणिर्वृषभानुनाम्नः ।
सा श्यामकामवरशान्तिमणिर्निकुञ्ज -भूषामणिहृदयसम्पुटसन्मणिर्नः ॥२६॥



चिंतामणि प्रिय प्रणत जनों की,
चूड़ामणि ब्रज नागरी गण की
कामपूर मणि पूर्ण काम की,
भूषण मणि नव कुंज भवन की
कुलमणि श्रीवृषभानु भूप की,
गोपन मणि अनन्य जन मन की
अन्य कौन जाने मम स्वामिनी,
मणिविहीन फणि सम जीवन की
॥26॥

भावार्थ

जो चरणाश्रितजनों के लिये चिन्तन मात्र से फल देने वाली हैं, जो व्रज सुन्दरियों की शिरोभूषण स्वरूपा हैं, जो (वृषभानु के गृह में कृपा वपु से अवतरित होने के कारण) वृषभानु नामक गोप कुल की मणि हैं अथवा धर्म-प्रकाशक नामक आचार्य कुल की मणि हैं, वे (श्रीराधा) प्रियतम श्रीश्यामसुन्दर के उग्र काम-ताप को शान्त करने वाली मणि, निकुञ्ज भवन को भूषित करने वाली मणि और हमारे हृदय रूपी सम्पुट की श्रेष्ठतम मणि हैं।

मनुस्वभावमधिकल्पलतानिकुञ्जम् व्यञ्जन्तमद्भुतकृपारसपुञ्जमेव ।
प्रेमामृताम्बुधिमगाधमबाधमेतम् राधाभिधं द्रुतमुपाश्रय साधु चेतः ॥२७॥



मंजुल स्वभाव अति कल्प लता की,
नव निकुंज में विद्यमान
अद्भुत रसपुंज कृपा की नव निधि,
मुक्त हस्त कर रही दान
प्रेमामृत की अंबुधि अगाध,
बाधा विहीन करुणा निधान
मत भटक कहीं रे साधु चित्त,
स्वामिनी कहाँ राधा समान
॥27॥

भावार्थ

जो सहज ही कोमल प्रकृति हैं, जो सब प्रकार के संकल्पों को पूर्ण करने वाली कल्पलता की निकुञ्ज में विराजमान हैं, जो अद्भुत कृपा-रस के समूह को निश्चय ही प्रकट करती हैं; हे मेरे मन ! तू इस प्रकार के श्रीराधा नामक अथाह और समस्त बाधाओं को दूर करने वाले प्रेमामृत-सागर का शीघ्र भली-भाँति आश्रय ग्रहण कर।

श्रीराधिकां निजविटेन सहालपन्तीम् शोणाधरप्रसृमरच्छविमञ्जरीकाम् ।
सिन्दूरसंवलितमौक्तिकपंक्तिशोभाम् यो भावयेद्दशनकुन्दवतीं स धन्यः ॥२८॥



श्रीराधा प्रियतम से करतीं,
मधुर मृदुल स्वर संभाषण
अरुण अधर की प्रभा मंजरी,
अनुरंजित नव कुंञ्ज सदन
मुक्तावली सिन्दूरी रंगी अति,
शोभित अद्भुत कुंद दसन
करें भावना इस छवि की,
वे धन्य महासहृदय सज्जन
ll28ll

भावार्थ

जो अपने रस-लम्पट प्रियतम श्रीश्यामसुन्दर के साथ मीठी-मीठी बातें कर रही हैं, जिनके लाल-लाल ओष्ठों से शोभा समूह का विस्तार हो रहा है, जिनकी कुन्द कलिका के समान दन्तावलि, पान के लाल रंग में रँगी होने के कारण, सिन्दूर से सनी हुई मोतियों की पंक्ति जैसी शोभायमान हो रही है; उन श्रीराधिकाजी की जो कोई भावना करता है, वह धन्य है।

पीतारुणच्छविमनन्ततडिल्लताभाम् प्रौढानुरागमदविह्वलचारुमूर्तिम् ।
प्रेमास्पदां व्रजमहीपतितन्महिष्यो – र्गोविन्दवन्मनसि तां निदधामि राधाम् ॥२९॥



पीतारुणं तणित
लता छवि तन,
प्रौढ़ानुराग
ज्यों मूर्तिमान
बृजरानी ब्रजपति
स्नेह पात्र,
हों मुझे सदा
राधिका ध्यान
।।29।।

भावार्थ

जिनकी शोभा लालिमा युक्त पीले रंग अर्थात् स्वर्ण-कान्ति जैसी है, जिनकी अंग-कान्ति अनन्त बिजलियों के समान है, जिनका दर्शनीय वपु सब प्रकार से पूर्ण और गम्भीर अनुराग के मद से विह्वल है; मैं अपनी प्रेमपात्री श्रीराधा को ठीक उसी प्रकार अपने मन में धारण करती हूँ, जिस प्रकार व्रज महीपति (श्रीनन्दरायजी) और उनकी पटरानी (श्रीयशोदाजी) अपने प्रेमपात्र श्रीकृष्णजी को अपने हृदय में धारण किये रहते हैं।

निर्माय चारुमुकुटं नवचन्द्रकेण गुञ्जाभिरारचितहारमुपाहरन्ती ।
वृन्दाटवीनवनिकुञ्जगृहाधिदेव्याः श्रीराधिके तव कदा भवितास्मि दासी ॥३०॥



रच मोर पंख के
मुकुट सुभग,
लाऊँ गूँजा के
गूँथ हार
वृन्दावन अधिदैवी दासी,
कब मुझे करोगी
कुंञ्ज द्वार
॥30॥

भावार्थ

वृन्दावन के नव निकुञ्ज भवन की अधिष्ठात्री देवी हे श्रीराधिके ! नवीन मोर पंखों का सुन्दर मुकट एवं गुञ्जाओं से भली भाँति गूँथी हुई माला बनाकर, उन्हें आपको समर्पित करती हुई, मैं आपकी दासी कब बनूँगी ?

संकेतकुञ्जमनुपल्लवमास्तरीतुम् तत्तत्प्रसादमभितः खलु संवरीतुम् ।
त्वां श्यामचन्द्रमभिसारयितुं धृताशे श्रीराधिके मयि विधेहि कृपाकटाक्षम् ॥३१॥



संकेत कुंञ्ज में कोमल नव,
पल्लव के रचूँ सुखद आसन
मधु मिलनोत्तसव के वे रहस्य,
सर्वथा रखूँ सबसे गोपन
श्रीकृष्णचंद्र अभिसार हेतु,
है प्रणय पूर्णिमा तुम्हें नमन
मम आशा लतिका को राधे,
सींचो कर करुणा अवलोकन
॥31॥

भावार्थ

हे श्रीराधिके ! आशा है कि आप मुझे संकेत कुञ्ज में नये-नये पल्लवों की शैया बिछाने एवं आपको श्याम-चन्द्र (श्रीलालजी) के प्रति अभिसार कराने जैसे उन कृपा-प्रसादों को, निश्चित रूप से सब प्रकार से भली-भाँति छिपाने की आज्ञा प्रदान करेंगीं। इन आशाओं को पूरा करने के लिये आप मुझ पर अपनी कृपा पूर्ण दृष्टि डालिये।

दूरादपास्य स्वजनान्सुखमर्थकोटिम् सर्वेषु साधनवरेषु चिरं निराशः ।
वर्षन्तमेव सहजाद्भुतसौख्यधाराम् श्रीराधिकाचरणरेणुमहं स्मरामि ॥३२॥



तज स्वजन संग
सम्पद विलास,
सब साध्य
साधनों से निराश
राधा पद रज
सर्वस्व सार,
बरसे संतत सुख
सुधा धार
॥32॥

भावार्थ

अपने सगे-सम्बन्धियों को, समस्त सुखों को और कोटि-कोटि सम्पत्तियों को दूर से ही छोड़कर तथा सब प्रकार के पारमार्थिक श्रेष्ठ साधनों को दीर्घ कालतक करने के बाद निराश होकर, मैं सहज ही अद्भुत सुख की धारा बरसाने वाली श्रीराधिकाजी के चरणों की रज का स्मरण करता/करती हूँ।

वृन्दाटवीप्रकटमन्मथकोटिमूर्तेः कस्यापि गोकुलकिशोरनिशाकरस्य ।
सर्वस्वसम्पुटमिव स्तनशातकुम्भ – कुम्भद्वयं स्मर मनो वृषभानुपुत्र्याः ॥३३॥



वृन्दावन प्रकट
कोटि मनमथ,
मोहन किशोर जु
चन्द्रवदन
सर्वस्व स्वर्ण
सम्पुट से ये,
वृषभानुसुता के
कुम्भ स्तन
॥33॥

भावार्थ

हे मेरे मन ! श्रीवृन्दावन में नित्य विराजमान एवं करोड़ों कामदेव से भी सुन्दर विग्रह वाले किसी अनिर्वचनीय गोकुल किशोर चन्द्र (श्रीलालजी) के प्राणों को रखने की पिटारी के समान, वृषभानुनन्दिनी (श्रीप्रियाजी) के स्वर्ण-कलश जैसे दोनों स्तनों का स्मरण कर ।

सान्द्रानुरागरससारसरः सरोजम् किं वा द्विधा मुकुलितं मुखचन्द्रभासा ।
तन्नूतनस्तनयुगं वृषभानुजायाः स्वानन्दसीधुमकरन्दघनं स्मरामि ॥३४॥



वार्णानुराग सर के
सरोज,
ये मुकुलित मुखविधु
के प्रकाश
वृषभानुसुता के
नव कुच युग,
आनंद सुधा मकरंद राशि
॥34॥

भावार्थ

सघन अनुराग रस के सार वाले सरोवर का कमल, श्रीप्रियाजी के मुख रूपी चन्द्रमा का प्रकाश पाकर, दो कलिकाओं के रूप में परिणत हो गया है; श्रीराधा के स्वयं के आनन्द रूपी अमृत के घनीभूत मकरन्द से पूर्ण, उन नवीन स्तन-युगल का मैं स्मरण करता/करती हूँ।

क्रीडासरः कनकपङ्कजकुड्मलाय स्वानन्दपूर्णरसकल्पतरोः फलाय ।
तस्मै नमो भुवनमोहनमोहनाय श्रीराधिके तव नवस्तनमण्डलाय ॥३५॥



क्रीड़ासर मुकुलित
कनक कमल,
आनंद कल्पतरु
के ये फल
मोहन मनमोहन
मम् प्रणम्य,
राधे तब नवल
स्तन मंडन
॥35॥

भावार्थ

हे श्रीराधिके ! आपके उस नवीन स्तन-मण्डल को मेरा नमस्कार है, जो केलि रूपी सरोवर के स्वर्ण-कमल की कली जैसा है, जो स्वयं के आनन्द से पूर्ण रसमय कल्पवृक्ष के फल के समान है, जो त्रिभुवन को मोहित करने वाले (श्रीलालजी) को भी मोहित करने में समर्थ है।

पत्रावलीं रचयितुं कुचयोः कपोले बड्डुं विचित्रकबरीं नवमल्लिकाभिः ।
अङ्गं च भूषयितुमाभरणैर्धृताशे श्रीराधिके मयि विधेहि कृपावलोकम् ॥ ३६॥



बाँधूँ विचित्र कबरी सुकेश,
मंडित कर नव मल्लिका सुमन,
पत्रावली रचना कुच कपोल,
प्रति अंग करुँ भूषित भूषण,
यह आशा लेकर बैठी हूँ,
नव कुंज धाम श्रीवृन्दावन
कब स्वीकृति दोगी श्रीराधे,
कर सकृत कृपामय अवलोकन
॥36॥

भावार्थ

हे श्री राधिके ! मेरी इन आशाओं- मैं आपके स्तनों एवं कपोलों पर पत्रावली की रचना करूँ, मालती के नवीन पुष्पों से आपकी वेणी को विचित्र रूप से गुँचूँ तथा आपके श्रीअंगों को विविध आभूषणों से विभूषित करूँ- को पूर्ण करने के लिये, अपनी कृपा पूर्ण दृष्टि डालने का विधान करें।

श्यामेति सुन्दरवरेति मनोहरेति कन्दर्पकोटिललितेति सुनागरेति ।
सोत्कण्ठमह्नि गृणती मुहुराकुलाक्षी सा राधिका मयि कदा नु भवेत्प्रसन्ना ॥३७॥



शत कोटि काम सु ललित नागर,
है श्याम मनोहर सुन्दर वर
यूँ आकुल लोचन बिह्वल स्वर,
प्रीतम के गुण गण गा गा कर
वृन्दावन विधु आराधन में,
जो करती हैं व्यतीत वासर
वे प्रेम परावधि श्रीराधा,
होंगी प्रसन्न कब मुझ जन पर
॥37॥

भावार्थ

हे श्याम ! हे सुन्दरवर ! हे मनोहर ! हे करोड़ों कामदेव से भी सुन्दर ! हे नागर ! - इस प्रकार दिन में बार-बार उत्कंठा पूर्वक उच्चारण करती हुई, व्याकुल नैंनों वाली श्रीराधिका, क्या कभी मुझ पर प्रसन्न होंगीं ?

वेणुः करान्निपतितः स्खलितं शिखण्डम् भ्रष्टं च पीतवसनं व्रजराजसूनोः ।
यस्याः कटाक्षशरपातविमूर्च्छितस्य तां राधिकां परिचरामि कदा रसेन ॥३८॥



कर मुरली कहीं कहीं शिखण्ड,
बृजराज तनयगत पीत वसन
जिनके कटाक्ष शरहत चेतन,
कब होगा सुलभ सुरस सेवन
रस सागर सार विलास मूर्ति,
आनंदकंद आह्लाद सघन
विधि दुर्गम गति वृषभानुसुता पद,
जन्म जन्म मम वांछित धन
II38II

भावार्थ

जिनके कँटीले नयनों रूपी वाणों के प्रहार से व्रजराजकुमार (श्रीलालजी) के हाथ से वंशी गिर गई है, मोर-मुकट खिसक गया है और पीताम्बर धूल धूसरित हो गया है, मैं उन श्रीराधिकाजी की प्रेम पूर्वक सेवा कब करूंगा/करूंगी ?"

तस्या अपाररससारविलास मूर्ते -रानन्दकन्दपरमाद्भुतसौम्यलक्ष्याः ।
ब्रह्मादिदुर्गमगते वृषभानुजायाः कैङ्कर्यमेव मम जन्मनि जन्मनि स्यात् ॥ ३९॥



पूर्णानुराग रसमयी मूर्ति,
जो तड़ित लता सुन्दर घन की
परपुरुषोत्तम की रति रहस्य,
आभा शोभा वृन्दावन की
वृषभानु भवन जो प्रकट कृपावश,
अभिलाषा मेरे मन की
सौभाग्य उदित होगा ऐसा,
क्या दासी होउंगी उनकी
॥39॥

भावार्थ

जो असीम रस के विलासों की प्रत्यक्ष मूर्त्ति हैं, जो आनन्द के कन्द (श्रीलालजी) की परम अद्भुत, मृदुल एवं श्रेष्ठ सम्पत्ति हैं, जिनकी गति ब्रह्मादिकों के लिये भी दुर्गम है, मुझे उन वृषभानुनन्दिनी (श्रीप्रियाजी) का कैंकर्य ही प्रत्येक जन्म में प्राप्त हो।

पूर्णानुरागरसमूर्ति तडिल्लताभम् ज्योतिः परं भगवतो रतिमद्रहस्यम् ।
यत्प्रादुरस्ति कृपया वृषभानु गेहे स्यात्किङ्करी भवितुमेव ममाभिलाषः ॥४०॥



उल्लसित प्रणय
मधुरिम विलास,
आनंद कंद रस
संवर्धन
गोविंद विलोचन
युग चकोर का,
युग युग सेवित
संजीवन
॥40॥

भावार्थ

जो पूर्ण अनुराग-रस की मूत्ति हैं, जिनकी अंग-कान्ति बिजली के प्रकाश जैसी है, जो परात्पर ज्योति है, जो भगवान की रति पूर्ण रहस्यमय वस्तु है तथा जो कृपा करके श्रीवृषभानजी के गृह में प्रकट हैं, उनकी दासी बनना ही मेरी अभिलाषा हो।

प्रेमोल्लसद्रसविलासविकासकन्दम् गोविन्दलोचनवितृप्तचकोरपेयम् ।
सिञ्चन्तमद्भुतरसामृतचन्द्रिकौघैः श्रीराधिका वदनचन्द्रमहं स्मरामि ॥४१॥



सिंचित ब्रज वृंदावन
कण कण,
अद्भुत पीयूष रश्मिवर्षण
श्रीराधा वदन
चंद्र क्षण क्षण,
आता है फिर फिर
मुझे स्मरण
ll41ll

भावार्थ

जो प्रेम के उल्लास से उत्पन्न रस विलासों को विकसित करने वाला मूल रूप है, जो गोविन्द (श्रीलालजी) के प्यासे नैंन रूपी चकोरों का पान किये जाने वाला पदार्थ रूप है और जो अद्भुत रस की अमृतमयी चाँदनी के प्रवाह से सभी को सिंचित करता रहता है, मैं श्रीराधिकाजी के उस मुख रूपी चन्द्र का स्मरण करता/करती हूँ।

संकेतकुञ्जनिलये मृदुपल्लवेन कृप्ते कदापि नवसंगभयत्रपाढ्याम् ।
अत्याग्रहेण करवारिरुहे गृहीत्वा नेष्ये विटेन्द्रशयने वृषभानुपुत्रीम् ॥४२॥



संकेत निकुंज निलय मृदुतर,
पल्लव प्रसून से सज्जित कर
पथ देख रहा होगा कोई,
आकुल अधीर बृज सुन्दर वर
नव संगम लज्जा भीतियुता,
वृषभानुसुता के कोमल कर
धरसाग्रह ले जाऊँगी कब,
लम्पट किशोर की शैय्या पर
॥42॥

भावार्थ

संकेतित कुञ्ज के भीतर, कोमल-कोमल पत्तों से रचित, लम्पट-शिरोमणि (श्रीलालजी) की शैया पर, नव संगम के भय और लज्जा से भरी हुई वृषभानु-पुत्री (श्रीप्रियाजी) को, अत्यन्त आग्रह के साथ, उनका हस्त कमल पकड़कर, क्या कभी मैं ले जाऊँगी ?

-सद्गन्धमाल्यनवचन्द्रलवङ्गसङ्ग –ताम्बूलसम्पुटमधीश्वरि मां वहन्तीम् ।
श्यामं तमुन्मदरसादभिसंसरन्ती श्रीराधिके करुणयानुचरीं विधेहि ॥४३॥



जब श्याम प्रेम
रसमत्त करोगी,
कुंजर गामिनी
कुञ्ज गमन
सदगन्ध माल
ताम्बूल सरस,
स्वामिनी करुँगी
कभी वहन
॥43॥

भावार्थ

हे स्वामिनी श्रीराधिके ! प्रेम-रस के उन्माद से पूरित होकर, उन श्यामसुन्दर से मिलने के लिये जाते समय, कृपया आप मुझे सुगन्धित मालायें, नवीन कपूर और लौंग से युक्त पानों का डिब्बा ले जाने वाली दासी बना लीजिये।

श्रीराधिके तव नवोद्गमचारुवृत्त – वक्षोजमेव मुकुलद्वयलोभनीयम् ।
श्रोणीं दधद्रसगुणैरुपचीयमानम् कैशोरकं जयति मोहनचित्तचोरम् ॥४४॥



नव उदित मुकुल
वक्षोज युगल,
राधे तब लोभिनीय
मधुकर
रसमय श्रोणि
श्रीसंवर्धित,
कैशोर जयति
मोहन मनहर
॥44॥

भावार्थ

हे श्रीराधिके ! आपके नये निकले हुए सुन्दर गोल-गोल उरोज, अभी-अभी खिलने वाले दो फूलों के समान मोहित करने वाले हैं। आपका नितम्ब प्रदेश विशेष रूप से विकसित हो रहा है। आपमें रसमय गुणों की वृद्धि हो रही है। आप मोहन (श्रीलालजी) के चित्त को चुराने वाली हैं। इस प्रकार आपकी नव किशोरावस्था निश्चय ही विजय को प्राप्त हो रही है।

संलापमुच्छलदनङ्गतरङ्गमाला – -संक्षोभितेन वपुषा व्रजनागरेण ।
प्रत्यक्षरं क्षरदपाररसामृताब्धिम् श्रीराधिके तव कदा नु शृणोम्यदूरात् ॥४५॥



उच्छलित अनंग
तरंग माल,
आंदोलित अंग
संग नागर
संलाप कभी
श्रुति गोचर हो,
वे सुधास्त्रोत
अक्षर अक्षर
॥45॥

भावार्थ

हे श्रीराधिके ! कामदेव की उछलती हुई लहरों से अत्यन्त दुःखित श्रीविग्रह वाले व्रजनागर (श्रीलालजी) के साथ होने वाले आपके वार्तालाप, जिसका प्रत्येक अक्षर अपार रसमय अमृत सागर को प्रवाहित करने वाला है, को क्या कभी मैं निकट से सुनूँगी ?

अङ्कस्थितेऽपि दयिते किमपि प्रलापम् हा मोहनेति मधुरं विदधत्यकस्मात् ।
श्यामानुरागमदविह्वलमोहनाङ्गी श्यामामणिर्जयति कापि निकुञ्जसीम्नि ॥४६॥



प्रिय अंक स्थित
करती प्रलाप,
कहतीं मोहन
हा मनमोहन
श्यामानुराग मद
विह्बल तन,
श्यामा मणि जयति
निकुंज भवन
॥46॥

भावार्थ

प्रियतम की गोद में विराजमान होते हुए भी, अचानक ' हा मोहन ! हा मोहन !' इस प्रकार का प्रलाप करने वाली एवं श्यामसुन्दर (श्रीलालजी) के अनुराग के मद से विह्वल मनोहर अंगों वाली कोई अनिर्वचनीय श्यामा-मणि (श्रीप्रियाजी) निकुञ्ज की सीमा के भीतर सर्वोत्कृष्ट रूप से विराजमान हैं।

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्रं

कुञ्जान्तरे किमपि जातरसोत्सवायाः श्रुत्वा तदालपितशिंजितमिश्रितानि ।
श्रीराधिके तव रहः परिचारिकाहम् द्वारस्थिता रसहदे पतिता कदा स्याम् ॥४७॥



सलंग्न रसोस्तव
कुञ्जातर,
आलाप मधुर
भूषण कल स्वर
मिश्रित धुनि सुन
मैं द्वार स्थित,
कब विवश पढ़ूंगी
रस सरवर
।।47।।

भावार्थ

हे श्रीराधिके ! कुञ्ज के भीतरी भाग में उत्पन्न हुए किसी अनिर्वचनीय रसोत्सव के समय, वहाँ आप दोनों के मध्य चल रहे वार्तालाप एवं बीच-बीच में बज रहे आपके पहने हुए आभूषणों की ध्वनि को सुनकर, कुञ्ज के द्वार पर खड़ी आपकी एकान्त सेविका, मैं कब रस-सरोवर में डूब जाऊँगी ?

वीणां करे मधुमतीं मधुरस्वरां ता – माधाय नागरशिरोमणिभावलीलाम् ।
गायन्त्यहो दिनमपारमिवाश्रुवर्षे – -र्दुःखान्नयन्त्यहह सा हृदि मेऽस्तु राधा ॥४८॥



मधुमती मधुतम स्वर वाली,
अपनी प्यारी वीणा लेकर
बैठी एकांत भवन भीतर जो,
छेड़ रही विरहाकुल स्वर
नागर कुल तिलक श्याम घन के,
रस वलित ललित गुण गा गा कर
करतीं व्यतीत युग सम बासर,
दृग युगल बने मुक्ता निर्झर
हों सदा विराजित श्री राधा,
मम् रिक्त हृदय कमलासन पर
॥48॥

भावार्थ

अहो ! जो मधुर स्वरों वाली उस मधुमती नामक वीणा को हाथ में लेकर, नागर शिरोमणि (श्रीलालजी) की भाव-लीलाओं का गान कर रही हैं, अहह! जो उस क्षणिक वियोग काल को अत्यन्त दुःख के साथ आँसू बहाते हुए एवं बहुत बड़े दिन जैसा अनुभव करते हुए व्यतीत कर रही हैं; ऐसी प्रेम-विह्वला श्रीराधा मेरे हृदय में निवास करें।

अन्योन्यहासपरिहासविलासकेलि – वैचित्र्यजृम्भितमहारसवैभवेन ।
वृन्दावने विलसतापहृतं विदग्ध – द्वन्द्वेन केनचिदहो हृदयं मदीयम् ॥४९॥



सविलास हास
परिहास केलि,
अद्भुत रस वैभव
दिखलाकर
वृन्दावन नव्य युगल कोई,
ले गया हठात हृदय को हर
II49II

भावार्थ

अहो ! जो एक दूसरे से हास-परिहास कर रहे हैं, जिनकी विलासमयी क्रीड़ायें अत्यन्त अद्भुत एवं रसमय वैभव से पूर्ण हैं; वृन्दावन में विलास करने वाले उन किन्हीं चतुर युगल ने मेरे हृदय को चुरा लिया है।

महाप्रेमोन्मीलन्नवरससुधासिन्धुलहरी – -परीवाहैर्विश्वं स्नपयदिव नेत्रान्तनटनैः ।
तडिन्मालागौरं किमपि नवकैशोरमधुरम् पुरन्ध्रीणां चूडाभरणनवरत्नं विजयते ॥५०॥



वे महाप्रणय उन्मीलित नवरस,
सुधा सिंधु लहरी समान
नैनों के नर्तन से संसृति को,
करा रहीं है रसस्नान
विद्युन माला सी गौर नवल,
कैशोर सुरुभि शुष्मा निधान
कोई बृज गोपवधू चूड़ामणि,
सर्वोपरि शोभायमान
॥50॥

भावार्थ

अपने नेत्र-कटाक्षों के नर्त्तन के द्वारा जिसने प्रेम की अधिकता से विकसित, नवीन रसामृत-सागर की तरंगों की बाढ़ से, विश्व को स्नान जैसा करा दिया है, वह विद्युत-माला के समान गौर वर्ण, नवीन किशोरावस्था से मधुर एवं व्रज नागरियों के शिरोभूषण का कोई अनिर्वचनीय नव रत्न (श्रीराधा) सर्वोत्कृष्ट रूप से विराजमान है।

अमन्द प्रेमाङ्क श्लथ सकल निर्बन्ध हृदयम् दयापारं दिव्यच्छवि मधुर लावण्य ललितम् ।
अलक्ष्यं राधाख्यं निखिलनिगमैरप्यतितराम् रसाम्भोधेः सारं किमपि सुकुमारं विजयते ॥५१॥



सबल प्रेम के अंक सुविलसित,
शिथिल अंग उन्मुक्त हृदय
मधुर दीप्त लावण्य ललित छवि,
निगम अलिक्षित अमित सदय
रस घन मोहन मुग्ध सकत,
सेवा में जिसकी रति अनुनय
रस सागर की सार किसी,
सुकुमारी की सर्वदा विजय
ll51ll

भावार्थ

जिसका हृदय, तीव्र प्रेम के वशीभूत होकर, लज्जा, शील, संकोच, भय, मान, मर्यादा आदि सभी बन्धनों से मुक्त हो गया है, जो परम दयालु है, जो अलौकिक कान्ति के मधुर लावण्य से ललित हो रहा है एवं जो समस्त वेदों से भी अत्यन्त अलक्षितहै; उस रस-सागर के सार स्वरूप किसी अनिर्वचनीय राधा नामक सुकुमार तत्व की जय हो।

दुकूलं बिभ्राणामथ कुचतटे कञ्चुकपटम् प्रसादं स्वामिन्याः स्वकरतलदत्तं प्रणयतः ।
स्थितां नित्यं पार्श्वे विविधपरिचर्यैकचतुराम् किशोरीमात्मानं किमिह सुकुमारीं नु कलये ॥५२॥



मैं पहन स्वामिनी
का प्रसाद,
कंचुकी दुकूल
मनोहारी
कब रस में परिचर्या,
कभी सेविका बनूँगी
सुकुमारी
॥52॥

भावार्थ

जिसने स्वामिनी (श्रीराधिकाजी) के द्वारा दी गई प्रसादी ओढ़नी को सिर पर तथा चोली को वक्षस्थल पर धारण कर रखा है, जो नित्य आपके समीप स्थित है, जो अनेक प्रकार की सेवाओं में निपुण है; क्या मैं इस जीवन में, निश्चय ही, स्वयं को एक ऐसी अद्वितीय सुकुमारी किशोरी के रूप में अनुभव करूँगी ?

विचिन्वन्ती केशान् क्वचन करजैः कञ्चुकपटम् क्व चाप्यामुञ्चन्ती कुचकनकदीव्यत्कलशयोः ।
सुगुल्फे न्यस्यन्ती क्वचन मणिमञ्जीरयुगलम् कदा स्यां श्रीराधे तव सुपरिचारिण्यहमहो ॥५३॥



घुंघराले काले केश कभी,
मृदु कर नख से सुलझाऊँगी
युग योद्धा कनक कलश जैसे,
कंचुकी कवच पहनाऊँगी
सुकुमार चपल चरणों में मैं,
मणि नूपुर मुखुर सजाऊँगी
क्या कभी स्वामिनी श्रीराधे,
ऐसी दासी बन पाऊँगी
॥53॥

भावार्थ

कभी अपने हाथों के नखों से आपके उलझे हुए बालों को सुलझाते हुए, कभी आपके स्वर्ण-कलश जैसे देदीप्यमान कुच युगल पर चोली पहनाते हुए और कभी आपके चरणों में मणि जटित युगल नूपुरों को बाँधते हुए, क्या कभी मैं आपकी सुन्दर सेविका बन सकूँगी ?

अतिस्नेहाद्-उच्चैरपि च हरिनामानि गृणतस् – तथा सौगन्धाद्यैर्बहुभिरुपचारैश्च यजतः ।
परानन्दं वृन्दावनमनुचरन्तं च दधतो –मनो मे राधायाः पदमृदुलपद्म निवसतु ॥५४॥



अति स्नेह सरस उच्च स्वर से मैं,
करूँ नित्य हरि नाम गान
गन्धादि विविध उपचार युक्त,
अर्चना करूँ भाव प्रधान
विचरूँ वृन्दावन नृत्य निरत,
आनंद जहाँ है मूर्तिमान
यह सब करते भी रहे सदा,
श्री राधा मृदु पद पद्म ध्यान
॥54॥

भावार्थ

अत्यन्त स्नेह से तथा उच्च स्वर से श्रीहरि (श्रीलालजी) के नामों का उच्चारण करते हुए भी तथा सुगन्धित अनेक प्रकार की सामग्रियों से उनका पूजन करते हुए भी और वृन्दावन में विचरण करते हुए परम आनन्द को धारण किये हुए भी, मेरा मन श्रीराधा के सुकोमल चरण-कमलों में निवास करे।

निजप्राणेश्वर्याः यदपि दयनीयेयमिति माम् मुहुश्चुम्बत्यालिङ्गतिसुरतमाध्व्या मदयति ।
विचित्रां स्नेहर्द्धिं रचयति तथाप्यद्भुतगतेस् – तवैव श्रीराधे पदरसविलासे मम मनः ॥५५॥



निज प्राणेश्वरी स्नेह भाजन,
वे जान मुझे श्यामल नवघन
कर कर्षण फिर फिर मधु वर्षण,
कर सुरत माधुरी मत्त मगन
नव नव विचित्र विधि श्रीराधे,
वे करते प्रीती वेलि वर्धन
अद्भुत गति तब पद रस विलास,
लोलुप तथापि रहता है मन
॥55॥

भावार्थ

'यह किंकरी मेरी प्राणेश्वरी की दया की पात्र है' ऐसा सोचकर यद्यपि -आपके प्रियतम (श्रीलालजी) मेरा बार-बार चुम्बन करते हैं, आलिंगन करते हैं. सुरत-वार्ता की मदिरा से उन्मद करने की चेष्टा करते है तथा विचित्र प्रकार से स्नेह-वैभव की वृद्धि भी करते हैं; हे श्रीराधे ! फिर भी मेरा मन अद्भुत प्रभाव वाले आपके चरणों के रस विलास में ही संलग्न है।

प्रीतिं कामपि नाममात्रजनितप्रोद्दामरोमोद्गमाम् राधामाधवयोः सदैव भजतोः कौमार एवोज्ज्वलाम् ।
वृन्दारण्यनवप्रसूननिचयानानीय कुञ्जान्तरे गूढं शैशवखेलनैर्बत कदा कार्यो विवाहोत्सवः ॥५६॥



युगल परस्पर नाम
श्रवण कर,
पुलकित तन हो
भूषित शैशव
नव कुञ्जातर नव
प्रसूनधर,
कभी करुँगी
परिणय उत्सव
॥56॥

भावार्थ

मुकुलित वय नव किशोरावस्था में ही, उस अनिर्वचनीय प्रीति, जिसमें एक दूसरे का नाम लेने मात्र से ही दोनों के सम्पूर्ण अंगों में अतिशय रोमांच हो उठता है, को सदा सेवन करने वाले श्रीराधा-माधव (श्रीप्रियाजी एवं श्रीलालजी) का, वृन्दावन के नये-नये फूलों का चयन करके एवं उन फूलों से निर्मित रहस्य कुञ्ज के भीतर, शैशव अवस्था के गुड्डा-गुड़िया के खेल की तरह, मेरे द्वारा विवाहोत्सव का कार्य कब सम्पन्न होगा ?

विपञ्चितसुपञ्चमं रुचिरवेणुना गायता प्रियेण सह वीणया मधुरगानविद्यानिधिः ।
करीन्द्रवनसम्मिलन्मदकरिण्युदारक्रमा कदा नु वृषभानुजा मिलतु भानुजारोधसि ॥५७॥



पंचम स्वर संचर वेणु रुचिर,
वीणानि नाद मृदु रस गंभीर
प्यारी संगीत कला कोविद,
प्रियतम सुजान बिहवल अधीर
करणी करींद्र से मत्त युगल,
कलक्रीडा रत गति सुधि शरीर
लोचन गोचर होगी कब यों,
वृषभानुसुता भानुजातीर
॥57॥

भावार्थ

जो गजराज से वन में मिलती हुई मतवाली हथिनी के समान मंद गति वाली हैं, जो मधुर गायन करने की विद्या में अतिशय निपुण हैं; वे वृषभानु की पुत्री (श्रीप्रियाजी), वेणु-वादन कर रहे अपने प्रियतम (श्रीलालजी) के साथ, विपची नामक वीणा में संगत करने के साथ-साथ पंचम स्वर से सुन्दर गायन करती हुई, श्रीयमुनाजी के तट पर मुझे कब मिलेंगी?

सहासवरमोहनाद्भुतविलासरासोत्सवे विचित्रवरताण्डवश्रमजलार्द्रगण्डस्थलौ ।
कदा नु वरनागरीरसिकशेखरौ तौ मुदा भजामि पदलालनाल्ललितवीजनं कुर्वती ॥५८॥



अति अद्भुत हास्य विलास रम्य,
रासोस्तव महा मधुर मनहर
नर्तन नव नव विचित्र तांडव,
गण्डस्थल सिक्त स्वेद सीकर
नागरी प्रवीण रसिक शेखर,
सेवा समोद पाऊँ रसभर
रस वलित ललित जीवन होगा,
कब युगल लाल पद लालनकर
॥58॥

भावार्थ

हास-परिहास से युक्त परम मनोहर एव अद्भुत विलासमय रासोत्सव में वैचित्रीपूर्ण ताण्डव नृत्य से जिन दोनों के कपोल प्रान्त श्रम-जल से गीले हो रहे हैं, उन नागरियों में श्रेष्ठ (श्रीप्रियाजी) एवं रसिकशेखर (श्रीलालजी) के चरणों केलालन (चाँपने) की सेवा, अपने जीवन को सुन्दर बनाती हुई, आनन्द पूर्वक, मैं कब करूँगी ?

वृन्दारण्यनिकुञ्जमञ्चलगृहेष्वात्मेश्वरीं मार्गयन् हा राधे सविदग्धदर्शितपथं किं यासि नेत्यालपन् ।
कालिन्दीसलिले च तत्कुचतटीकस्तूरिकापङ्किले स्नायं स्नायमहो कुदेहजमलं जह्यां कदा निर्मलः ॥५९॥



वृन्दावन मंजुल निकुंज गृह,
नित्य स्वामिनी का अन्वेषण
दिखलाये पथ पर न चलो क्यों,
श्रीराधे पुकार कर क्रंदन
उर कस्तुरी पंकिल सलिला,
फिर फिर कर कलिंदजा मंजन
त्याग को देहज मन निर्मल,
कब पाऊँगी राधा दासी बन
॥59॥

भावार्थ

अहो ! श्रीवृन्दावन के सुन्दर निकुञ्ज मन्दिर में अपनी स्वामिनी (श्रीप्रियाजी) की खोज करती हुई एवं मिलने पर उनसे इस प्रकार कहते हुए कि "हे श्रीराधे ! विदग्ध (श्रीलालजी) के सहित मेरे द्वारा बताये गये मार्ग पर क्यों नहीं जाती हो ?" और फिर उनकी (श्रीप्रियाजी की) कुच तटी में लगी हुई कस्तूरी की कीच से मिश्रित श्रीयमुनाजी के जल में बार-बार स्नान करके, श्रीवन की कर्पूर की धूल से धूसरित देह से उत्पन्न प्रस्वेद मिश्रित धूल को त्याग कर, मैं कब निर्मल बनूँगी ?

पादस्पर्शरसोत्सवं प्रणतिभिर्गोविन्दमिन्दीवर – -श्यामं प्रार्थयितुं सुमञ्जुलरहः कुञ्जआंश्च सम्मार्जितुम् ।
-मालाचन्दनगन्धपूगरसवत्ताम्बूलसत्पानका –न्यादातुं च रसैकदायिनि तव प्रेष्या कदा स्यामहम् ॥६०॥



निभृत निकुंज सदन मार्जन कर,
सानुराग सज्जित संसाधन
रुचिर पेय ताम्बूल सरस शुचि,
सौरभ सुमन माल वर्जन कर
देने चलूँ नलिन सुन्दर को,
नवल रासोस्तव का आमंत्रण
रसदायिनी स्वामिनी करोगी,
कब निज नर्म नव्य दासीजन
॥60॥

भावार्थ

रस की एकमात्र देने वाली हे श्रीराधिके ! अत्यन्त दैन्य से युक्त प्रणामों द्वारा, आपके श्रीचरणों के स्पर्श मात्र को ही रसोत्सव मानने वाले, नील कमल जैसे श्याम श्रीगोविन्द (श्रीलालजी) से आपकी प्रार्थना कराने के लिये और अत्यन्त मनोहर एकान्त कुञ्जों का सम्मार्जन करने के लिये तथा फूलों की माला, चन्दन, इत्रदान, रसयुक्त पान और अनेक प्रकार के स्वादिष्ट मधुर पेय पदार्थ लाने के लिये, मैं आपकी अन्तरंगा दासी कब बनूँगी ?

लावण्यामृतवार्त्तया जगदिदं सम्प्लावयन्ती शरद्राकाचन्द्रमनन्तमेव वदनज्योत्स्नाभिरातन्वती ।
श्रीवृन्दावनकुञ्जमञ्जुगृहिणी काप्यस्ति तुच्छामहो कुर्वाणाखिलसाध्यसाधनकथां दत्त्वा स्वदास्योत्सवम् ॥६१॥



रसमंजित कर रही जगत को,
लावण्यामृत वाणी पावन
राका चंद्र प्रभा अनंत सी,
विलसित वदन ज्योति बृज कानन
निभृत निकुंज मंजु गृह देवी,
कोई सर्वोपरि वृन्दावन
दे कर दासोस्त्तव कर देती,
तुच्छ समस्त साध्य सब साधन
ll61ll

भावार्थ

अहो ! इस प्रेम-जगत् किंवा रस-देश को अपने अमृतमय सौन्दर्य एवं वार्तालाप से सराबोर करते हुए, अपने मुख-चन्द्र की चाँदनी से शरद पूर्णिमा के अनन्त चन्द्रमाओं के प्रकाश का विस्तार करती हुई एवं मुझे अपने दास्य रूपी उत्सव काआनन्द देकर समस्त साधन-साध्य की चर्चाओं को अत्यन्त नगण्य बनाते हुए, वृन्दावन के सुन्दर कुञ्ज-सदन की कोई अनिर्वचनीय स्वामिनी विराजमान है।

दिष्ट्या यत्र क्वचन विहिताम्रेडने नन्दसूनोः प्रत्याख्यानच्छलत उदितोदारसङ्केतदेशा ।
धूर्तेन्द्र त्वद्भयमुपगता सा रहो नीपवाट्याम् नैका गच्छेत् कितव कृतमित्यादिशेत् कर्हि राधा ॥६२॥



एकांत मिलन याचना निरत,
हो नंदलाल अनुरक्त नयन
प्रतिवाद व्याज नागरी करें,
संकेत दिशा का निर्देशन
कब मुझे कहेंगी, कह दे सखी,
हे धूर्त शिरोमणि मधुर वचन
तुमसे भयभीत न जावेगी,
यह निर्जन नव कदम्ब उपवन
॥62॥

भावार्थ

ऐसा कब होगा, जब नन्दनन्दन (श्रीलालजी), अपनी आँखों के माध्यम से, किसी एकान्त कदम्ब वाटिका में मिलने के लिये, आपसे अनुनय विनय करेंगे और आप उसे अस्वीकार करने के बहाने, किसी दूसरे सर्वसुखद स्थल का संकेत करेंगी और मुझे उनसे यह कहने की आज्ञा प्रदान करेंगी कि "हे धूर्तेन्द्र ! हे कपटी ! तुमसे भय को प्राप्त हुई हमारी स्वामिनी श्रीराधा उस कदम्ब वाटिका में अकेली नहीं जायेंगी।"

सा भ्रूनर्तनचातुरी निरुपमा सा चारुनेत्राञ्चले लीलाखेलनचातुरी वरतनोस्तादृग्वचश्चातुरी ।
सङ्केतागम चातुरी नवनवक्रीड़ाकला चातुरी राधाया जयतात् सखीजनपरीहासोत्सवे चातुरी ॥ ६३॥



वह अनुपम भ्रू भ्रंग चातुरी,
नैनांचल सलील चालन
वह मृदु वचन चातुरी संयुत,
नव निकुंज गृह नवागमन
नव नव क्रीड़ा कला चातुरी,
सरस चातुरी सहित मिलन
परिकरपर हासोसत्तव जीवन,
जयति चारु चातुरी सदन
॥63॥

भावार्थ

श्रेष्ठ अंगों वाली श्रीराधिका की, वह भृकुटियों को अनुपमेय ढंग से नचाने की चातुरी, वह सुन्दर नेत्रों के लीलापूर्वक संचालन की चातुरी, वैसी ही बोलने की चातुरी, संकेत-स्थल में आने की चातुरी, नई-नई क्रीड़ाओं को कलात्मक रूप से प्रस्तुत करने की चतुरता और सखियों से उत्साह एवं उमंग के साथ हास-परिहास करने की चतुरता - ये सभी सर्वोत्कृष्ट हैं, इनकी जय हो।

उन्मीलन्मिथुनानुरागगरिमोदारस्फुरन्माधुरी – धारासारधुरीणदिव्यललितानङ्गोत्सवैः खेलतोः ।
राधामाधवयोः परं भवतु नश्चित्ते चिरार्तिस्पृशोः कौमारे नवकेलिशिल्पलहरीशिक्षादिदीक्षारसः ॥६४॥



उदित नवल अनुराग परस्पर,
उर नभ सुरस घटा उमड़ी
लगी सुललित अनंगोस्तव की,
विश्व प्लावनि सुधा झणि
चिरवियुक्त राधा मोहन की,
दान मान मनुहार भरी
चपल चित्त सर में लहरायें,
नव नव केलि शिल्प लहरी
।।64।।

भावार्थ

जिनमें गहनता से पूर्ण कामनाशून्य अनुराग का विकास हो रहा है, जिनसे माधुर्य की धारा के सार रूपी स्रोत का प्रस्फुटन हो रहा है, जो दिव्य और ललित काम-क्रीड़ाओं को अत्यन्त उमाह एवं उत्साह से खेल रहे हैं और जो उदीयमान किशोरावस्था (मुकुलित वय नव किशोरावस्था) में चिर उत्कंठा को धारण किये हुए हैं; उन राधा-माधव (श्रीप्रियाजी-श्रीलालजी) की नई-नई केलियों की रचना करने की शिक्षा-दीक्षा का वह रस ही असीम रूप से हमारे चित्त में प्रकट हो।

कदा वा खेलन्तौ व्रजनगरवीथीषु हृदयम् हरन्तौ श्रीराधाव्रजपतिकुमारौ सुकृतिनः ।
अकस्मात् कौमारे प्रकटनवकैशोरविभवौ प्रपश्यन् पूर्णः स्यां रहसि परिहासादिनिरतौ ॥६५॥



खेलते कभी बृज
नगर डगर,
वृषभानु लली
बृजराज कुंवर
कर प्रकट सनातन
नव किशोर,
तन रसघन निज
जन चित्तचोर
एकांत ढूंढते युगल कांत,
मधुसिक्त करेंगे हृदय प्रान्त
116511

भावार्थ

जो अभी-अभी व्रज-नगर (श्रीवृन्दावन) की वीथियों में कुमार अवस्था के खेलों को खेलते हुए सुकृतीजनों (राधाकिंकरियों) के हृदय का अपहरण कर रहे हैं, अचानक ही वे उदीयमान किशोरावस्था (मुकुलित वय नव किशोरावस्था) के वैभव को प्रकट करते हुए एकान्त हास-परिहास में संलग्न हो रहे हैं। उन श्रीराधा और व्रजपति कुमार (श्रीप्रियाजी-श्रीलालजी) के भली-भाँति से दर्शन करती हुई, क्या कभी मैं पूर्णता को प्राप्त होऊँगा/होऊँगी ?

धम्मिल्लं ते नवपरिमलैरुल्लसत्फुल्लमल्ली – मालं भालस्थलमपि लसत्सान्द्रसिन्दूरविन्दुम् ।
दीर्घापाङ्गच्छविमनुपमां चारुचन्द्रांशुहासम् प्रेमोल्लासं तव तु कुचयोर्द्वन्द्वमन्तः स्मरामि ॥६६॥



नव पराग उल्लसित मल्लिका,
मालालंकृत अलकजाल
बालविभाकर सदृश सुभग,
सिन्दूर बिंदु संवलित भाल
अनुपम केलि कटाक्ष छटा,
मृदुहास चन्द्रिका रति रसाल
प्रियतम प्राण रत्न सम्पुट सुध,
आतें स्वर्णिम घट विशाल
॥66॥

भावार्थ

हे श्रीराधे ! नवीन, सुगन्धित एवं खिली हुई मालती की माला से गूंथी हुई आपकी वेणी को, अत्यन्त लाल सिन्दूर की वेंदी से सुशोभित आपके भालस्थल को, आपके बड़े-बड़े नेत्रों के अनुपम कटाक्षों की शोभा को, चन्द्रमा की किरणों के समान आपके मनोहर हास्य को एवं प्रेम के उल्लास से भरे हुए आपके दोनों उरोजों को, मैं हृदय में धारण करती हूँ।

लक्ष्मीकोटिविलक्ष्यलक्षणलसल्लीलाकिशोरीशतै – राराध्यं व्रजमण्डलेतिमधुरं राधाभिधानं परम् ।
ज्योतिः किञ्चन सिञ्चदुज्ज्वल रसप्राग्भावमाविर्भवद् राधे चेतसि भूरिभाग्यविभवैः कस्याप्यहो जृम्भते ॥ ६७॥



लक्ष्मी कोटि सुभग सुशील,
लीला किशोरतायें शत शत
अद्भुत काम कल्प पादप पद,
आराधन के हेतु प्रनत
अहा मधुर राधा रस उज्जवल,
ज्योति उदित ब्रज धाम सतत
भूरि भाग्य वे दुर्लभ जनमन,
नवल रंग बरसे अविरत
॥67॥

भावार्थ

अहो ! व्रज मण्डल में, करोड़ों लक्ष्मियों को विस्मय में डालने वाले लक्षणों से युक्त, लीलापूर्ण किशोर वय वाली शत-शत किशोरियों से आराधित, अति मधुर श्रीराधा नामक कोई अनिर्वचनीय परम ज्योति है। हे श्रीराधे ! वह, आद्यारति किंवा शुद्धारति के आविर्भाव पूर्वक प्रेम-रस का सिंचन करती हुई, किसी परम भाग्यशाली के हृदय में ही प्रकट होती है।

तज्जीयान् नवयौवनोदयमहालावण्यलीलामयम् सान्द्रानन्दघनानुरागघटितश्रीमूर्तिसम्मोहनम् ।
वृन्दारण्यनिकुञ्जकेलिललितं काश्मीरगौरच्छवि श्रीगोविन्द इव व्रजेन्द्रगृहिणीप्रेमैकपात्रं महः ॥६८॥



उदित महा लावण्य ललित नव,
नव लीलामय नव यौवन है
रचित सघन अनुराग मूर्ति,
श्रीमनमोहन की मनमोहन है
श्रीवृन्दावन कुञ्ज केलि रस,
स्निग्ध कोर केसर धुति तन है
श्रीगोविन्द समान यशोमति,
जीवन ज्योति जयति श्रीवन है
॥68॥

भावार्थ

जो नवीन यौवन के उदयकाल से अतिशय लावण्ययुक्त एवं लीलामय है, जो सघन आनन्द और घनीभूत अनुराग से रचना किये गये श्रीविग्रह (श्रीलालजी) को सम्यक रूप से मोहित करने वाला है, जो वृन्दावन की निकुञ्जों में होने वाली क्रीड़ाओं से लालित्यपूर्ण है, जिसके गौर अंग की कान्ति केशर के समान है और जो व्रजेन्द्र-गृहणी (श्रीयशोदाजी) के एकमात्र प्रेमपात्र श्रीगोविन्द की भाँति मेरा प्रेमपात्र है। वह श्रीराधा नामक तेज सर्वोत्कर्ष रूप से विराजमान हो।

प्रेमानन्दरसैकवारिधिमहाकल्लोलमालाकुला व्यालोलारुणलोचनाञ्चलचमत्कारेण सञ्चिन्वती ।
किञ्चित् केलिकलामहोत्सवमहो वृन्दाटवीमन्दिरे नन्दत्यद्भुतकामवैभवमयी राधा जगन्मोहिनी ॥६९॥



वे प्रेमानंद रसाम्बुधि की,
उन्मद कल्लोल मालिका सी
लोलारूण लोचन अंचल से,
संचालित करती केलिकला
श्रीवृन्दाटवी प्रणय मंदिर,
आनंदित अद्भुत कामद मणि
हैं विश्वमोहनी मोहन की,
श्रीराधा कौन कहै अबला
ll69ll

भावार्थ

प्रेमानन्द रस के अद्वितीय सागर की क्रीड़ाओं रूपी उत्ताल तरंगों से आकुल ह्रदय वाली, अतिशय चंचल और अरुण वर्ण वाले नेत्रों के कटाक्षों के चमत्कार से किसी अनिर्वचनीय केलि-कला के महोत्सव की वृद्धि करने वाली एवं अद्भुत काम-वैभव से युक्त विश्व को मोहित करने वाली, श्रीराधा, वृन्दावन के लता मन्दिर में आनन्दित हो रही है।

वृन्दारण्यनिकुञ्जसीमनि नवप्रेमानुभावभ्रमद् भ्रूभङ्गीलवमोहितव्रजमणिर्भक्तैकचिन्तामणिः ।
सान्द्रानन्दरसामृतस्त्रवमणिः प्रोद्दामविद्युल्लता – कोटिज्योतिरुदेति कापि रमणीचूडामणिर्मोहिनी ॥७०॥



नवल राग रंजित भ्रू भंगी,
लेश मुग्ध ब्रज नव नागर मणि
सान्द्रानंद सुधा निर्झर सी,
शरणागत जन की चिंतामणि
वृन्दारण्य निकुंज भवन की,
भुवन मोहिनी प्रणय प्राण मणि
कोटि दामिनी दीप्त देह द्ययुति,
उदित जयति रमणी चूड़ामणि
॥70॥

भावार्थ

जिन्होंने नवीन प्रेम की चेष्टाओं से चंचल बनी हुई भौहों के लेश मात्र नर्त्तन से व्रजमणि (श्रीलालजी) को मोहित किया हुआ है, जो भक्तों की एकमात्र चिन्तामणि हैं, जो सघन आनन्द के रस का निर्झरण करने वाली मणि हैं, जिनकी अंग-कान्ति अत्यन्त चंचल एवं प्रकाशमान करोड़ों बिजलियों के समान है; वे कोई अनिर्वचनीय, मोहिनी, रमणियों की चूड़ामणि, वृन्दावन की निकुञ्जों की सीमा में उदित हो रही हैं।

लीलापाङ्गतरङ्गितैरुदभवन्नेकैकशः कोटिशः कन्दर्पाः पुरुदर्पटङ्कतमहाकोदण्डविस्फारिणः।
तारुण्यप्रथमप्रवेशसमये यस्या महामाधुरी – -धारानन्तचमत्कृता भवतु नः श्रीराधिका स्वामिनी ॥७१॥



वह सहज सल्लज बंक चितवन,
प्रतिपल जनती शत कोटि मदन
अति दर्प पुष्पषर चढ़े चाप,
टंकार प्रकम्पित निखिल भुवन
तरुणाई उदित विगत बचपन,
माधुर्य प्रवाह सिक्त तनवन
कृत चकित चमत्कृत सचराचर,
पाऊँगी कब स्वामिनी शरण
ll71ll

भावार्थ

तरुणावस्था में प्रथम प्रवेश करते समय, जिनके एक-एक लीलापूर्ण कटाक्ष-पात रूपी तरंग से, बड़े अभिमान के साथ टंकारे गये महाधनुष को खींचने वाले कोटि-कोटि कामदेव उत्पन्न होते रहते हैं; वे महामाधुरी की अनन्त धाराओं से चमत्कृत, श्रीराधा हमारी स्वामिनी हों।

यत्पादाम्बुरुहैक रेणु कणिकां मूर्धा निधातुं न हि प्रापुर्ब्रह्म शिवादयोप्यधिकृतिं गोप्येकभावाश्रया । सापि प्रेमसुधारसाम्बुधिनिधी राधापि साधारणी भूता कालगतिक्रमेण बलिना हे दैव तुभ्यं नमः ॥७२॥



ब्रह्मा शिवादि भगवत स्वरुप,
पा सके ना जिनका पद रजकण
करुणा कटाक्ष भाजन होते,
केवल गोपी भावाश्रित जन
वे प्रेमाम्बुधि कालक्रम से,
अब हुई सुलभ जन साधरण
तेरा प्रभाव अद्भुत अमोघ,
हे देव हमारा तुझे नमन
॥72॥

भावार्थ

गोपियों के भाव का अनन्य आश्रय ग्रहण करने वाले ब्रह्माजी, शिवजी आदि भी, जिनके चरण-कमलों के एक रज-कण को, अपने सिर पर धारण करने का अधिकार निश्चय ही प्राप्त नहीं कर सके हैं; वे प्रेम-सुधा-रस-सागर की निधि श्रीराधा भी, बलशाली समय के प्रभाव से, साधारण लौकिक नायिका जैसी हो गई हैं। हे दैव ! तुझे नमस्कार है।

दूरे स्निग्धपरम्परा विजयतां दूरे सुहृन्मण्डली भृत्याः सन्तु विदूरतो व्रजपतेरन्यः प्रसङ्गः कुतः ।
यत्र श्रीवृषभानुजा कृतरतिः कुञ्जओदरे कामिना द्वारस्था प्रियकिङ्करी परमहं श्रोष्यामि काञ्चिध्वनिम् ॥७३॥



गुरुजन परिजन
हरि परिकरगण,
हों सभी सुशोभित
दूर दूर
श्रीराधा केलि
किंकणी बनूँ,
किंकिरी श्रवण घट सुधापूर
॥73॥

भावार्थ

कुञ्ज भवन के भीतरी भाग में, जहाँ पर वृषभानुनन्दिनी (श्रीप्रियाजी) अपने प्रीतम व्रजपति (श्रीलालजी) के साथ प्रेम की क्रीड़ायें करती हैं; वहाँ से उनके माता-पिता आदि स्नेहीजन दूर से ही अपने को भाग्यशाली अनुभव करें, उनकी मित्र-मण्डली भी दूर से ही शोभा पाती रहे, उनके भृत्य वर्ग के लोग और भी दूर रहें तथा इन दास्य, सख्य और वात्सल्य भाव के भावुकों के अतिरिक्त अन्यजनों की तो बात भी सोचना अप्रासंगिक है; किन्तु वहाँ के द्वार पर खड़ी रहने वाली, श्रीराधा की परम प्रिय किंकरी, मैं उनकी किंकिणी की ध्वनि को सुनूँगी।

गौराङ्गे मृदिमास्मिते मधुरिमा नेत्राञ्चलेद्राधिमा वक्षोजे गरिमा तथैव तनिमा मध्ये गतौ मन्दिमा ।
श्रोण्यां च प्रथिमा भ्रुवोः कुटिलिमा बिम्बाधरे शोणिमा श्रीराधे हृदि ते रसेन जडिमा ध्यानेऽस्तु मे गोचरः ॥७४॥



दो दया कर दान स्वामिनी,
लाड़ली वृषभानु की
हो तुम्हारी छवि छटाएँ,
सम्पदा मन प्राण की
गौर अंगों की मृदुलता,
मधुरता मुस्कान की
दीर्घता द्रग युगल की,
गुरुता उरज उत्तान की

भावार्थ

हे श्रीराधे! आपके गौर अंगों की कोमलता, मन्द हास्य की मधुरिमा, नेत्र- प्रान्त की विशालता, उरोजों की गुरुता, कटि-प्रदेश की सूक्ष्मता, चलने की, धीरता, नितम्बों की स्थूलता, भौहों की कुटिलता, बिम्बफल जैसे अधरों की अरुणता एवं हृदय की रसावेश जनित जड़ता, मेरे ध्यान में प्रकट हो।

गौराङ्गे मृदिमास्मिते मधुरिमा नेत्राञ्चलेद्राधिमा वक्षोजे गरिमा तथैव तनिमा मध्ये गतौ मन्दिमा ।
श्रोण्यां च प्रथिमा भ्रुवोः कुटिलिमा बिम्बाधरे शोणिमा श्रीराधे हृदि ते रसेन जडिमा ध्यानेऽस्तु मे गोचरः ॥७४॥



क्षीणता कटि की ललित,
मदमत्तता अभियान की
पृथुलता श्रोणि सरस की,
भ्रूलता धुन तान की
अधर पुट की लालिमा,
जड़िमा हृदय रसखान की
॥74॥

भावार्थ

हे श्रीराधे! आपके गौर अंगों की कोमलता, मन्द हास्य की मधुरिमा, नेत्र- प्रान्त की विशालता, उरोजों की गुरुता, कटि-प्रदेश की सूक्ष्मता, चलने की, धीरता, नितम्बों की स्थूलता, भौंहों की कुटिलता, बिम्बफल जैसे अधरों की अरुणता एवं हृदय की रसावेश जनित जड़ता, मेरे ध्यान में प्रकट हो।

प्रातः पीतपटं कदा व्यपनयाम्यन्यांशुकस्यार्पणात् कुञ्ज विस्मृतकञ्चुकीमपि समानेतुं प्रधावामि वा ।
बध्नीयां कवरीं युनज्मि गलितां मुक्तावलीमञ्जये नेत्रे नागरि रङ्कैश्च पिदधाम्यङ्गव्रणं वा कदा ॥७५॥



प्रातः पीताम्बर उतार,
कब नीलाम्बर पहनाऊँगी
शयन कुञ्ज में रही कंचुकी,
लेने को कब जाऊँगी
रतिरण जनित अंग शत कुमकुम,
लेपन सहज छिपाऊँगी
काजल केश सँवार हार,
दृग देख देख सुख पाऊँगी
।।75।।

भावार्थ

हे नागरी (श्रीप्रियाजी) ! ऐसा कब होगा, जबकि प्रातःकाल मैं, रात्रि में रस-विहार के समय, भ्रमवश पहने हुए प्रीतम (श्रीलालजी) के पीताम्बर को उतारकर, आपको अन्य वस्त्र (नीलाम्बर) को धारण करा दूँगी, कुञ्ज में भूलवश छोड़कर आयी हुई कंचुकी को दौड़कर ले आऊँगी, खुली हुई वेणी को बाँध दूँगी, टूटी हुई मुक्तावली को गूँथ गूंथ दूँगी, दूंगी, नेत्रों के मिट गये अंजन को पुनः लगा दूँगी एवं आपके श्रीअंग में लगे नखक्षतों को कस्तूरी और कुमकुम आदि के रंगों द्वारा छिपा दूँगी ?

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्र

यद् वृन्दावनमात्रगोचरमहो यन्न श्रुतीकं शिरो – प्यारोढुं क्षमते न यच्छिवशुकादीनां तु यद् ध्यानगम् ।
यत् प्रेमामृतमाधुरीरसमयं यन्नित्यकैशोरकम् तद् रूपं परिवेष्टुमेव नयनं लोलायमानं मम ॥७६॥



जिनके वर्णन में रहै मूक,
निगमागम अष्टादश पुराण
शिव शुकदेवादि भागवत भी,
पा सके ना छवि का क्षणिक ध्यान
वृन्दावन नित्य किशोर केलिरत,
रसिक युगल शोभायमान
रूपामृत पान हेतु उनके,
लोचन मेरे लोलायमान
॥76॥

भावार्थ

अहो ! जो केवल श्रीवृन्दावन में ही दिखाई देता है, जिस तक पहुँचने में श्रुति के शिरोभाग उपनिषद् भी असमर्थ हैं, जो शिवजी, शुकदेवजी आदि के ध्यान में भी नहीं आता, जो प्रेम के अमृतमय माधुर्य से पूर्ण और रसमय है और जो नित्य किशोरावस्था से सम्पन्न है; उस रूप को देखने के लिये ही, मेरे नेत्र व्याकुल हो रहे हैं।

धर्माद्यर्थचतुष्टयं विजयतां किं तद् वृथावार्तया सैकान्तेश्वरभक्तियोगपदवी त्वारोपिता मूर्द्धनि ।
यो वृन्दावनसीम्नि कश्चन घनाश्चर्यः किशोरीमणिस् तत्कैङ्कर्यरसामृताद् इह परं चित्ते न मे रोचते ॥७७॥



पुरुषार्थ चतुष्ट्य तेरी जय,
क्यूँ करें बात विस्तृत असार
हो भक्ति अनन्य सदा हरि की,
मेरे मस्तक का अलंकार
अद्भुत तथापि वृन्दावन में,
रस रूप प्रेम सर्वस्व सार
कुछ और ना अब रुचिकर केवल,
सेवन श्यामा मणि कुञ्जं द्वार
।।77।।

भावार्थ

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष- ये चारों पुरुषार्थ उत्कृष्ट रूप से विराजमान बने रहें, इनसे सम्बन्धित बातों की चर्चा करना हमारे लिये व्यर्थ है। ईश्वर की उस एकान्त भक्ति-योग की पद्धति का भी हम आदर तो करते है, किन्तु वह हमें रुचिकर नहीं है। हमारे चित्त को तो, वृन्दावन की सीमा में विराजमान, जो कोई एक अत्यन्त आश्चर्यपूर्ण किशोरियों में शिरोमणि है, उसके कैंकर्य रूपी रसामृत के अतिरिक्त अन्य कुछ भी अच्छा नहीं लगता।

प्रेम्णः सन्मधुरोज्ज्वलस्य हृदयं शृङ्गारलीलाकला – -वैचित्रीपरमावधिर्भगवतः पूज्यैव कापीशता ।
ईशानी च शची महासुखतनुः शक्तिः स्वतन्त्रा परा श्रीवृन्दावननाथपट्टमहिषी राधैव सेव्या मम ॥७८॥



मधुरोज्जवल पावन प्रणय हृदय,
अनुपम कल केलि कलानिधान
ईशानी शची महासुख तनु,
वे पराशक्ति परतर विधान
क्षण क्षण वंदन आराधन रत,
हरि निज आराध्या इष्ट जान
वृन्दावननाथ पट्ट महिषी,
श्रीराधा पद तल बसे प्राण
॥78॥

भावार्थ

पुराणों, तंत्रों एवं भक्ति-ग्रंथों में श्रीराधा को, षटैश्वर्य संपन्न भगवान की पूज्या तथा कोई अनिर्वचनीय शासन करने वाली, इंद्राणी, पार्वती, अत्यंत सुख स्वरूप विग्रह वाली, पराशक्ति एवं स्वतन्त्रा शक्ति कहा गया है; किन्तु मेरे लिए तो वह श्रीराधा ही सेव्य हैं, जो अति मधुर एवं उज्जवल प्रेम की हृदय स्वरूपा हैं (अर्थात जो रस स्वरूपा हैं), जो श्रृंगार-लीला-कलाओं के वैचित्र्य की अन्तिम सीमा हैं एवं जो श्रीवृन्दावननाथ (श्रीलालजी) के हृदय रूपी सिंहासन की रानी हैं।

राधादास्यमपास्य यः प्रयतते गोविन्दसङ्गाशया सोऽयं पूर्णसुधारुचेः परिचयं राकां विना काङ्क्षति ।
किं च श्याम रति प्रवाहलहरीबीजं न ये तां विदुः ते प्राप्यापि महामृताम्बुधिमहो बिन्दुं परं प्राप्नुयुः ॥७९॥



कृष्णानुराग रस की निधि जो,
सकरुण नयना आह्लाद सिंधु
राधा पद दास्य बिना कोई,
हो अभिलाषी गोविन्द बंधु
वह राका बिना चाहता है,
सम्पूर्ण कला सम्पन्न इंदु
पा कर भी महा सुधानिधि को,
पा सका मात्र बस एक बिंदु
॥79॥

भावार्थ

जो श्रीराधा के दास्य को छोड़कर, गोविन्द (श्रीलालजी) के संग-लाभ की आशा रखते हैं, वे मानों पूर्णिमा की तिथि न होने पर भी पूर्ण चन्द्र का दर्शन करना चाहते हैं, और क्या कहा जाय, वे यह नहीं जानते कि श्यामसुन्दर (श्रीलालजी) की रति-प्रवाह-लहरियों का बीज तो श्रीराधा ही है। आश्चर्य है कि वे अमृत का महान् समुद्र पाकर भी केवल एक बूँद ही ले पाते हैं।

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्र

कैशोराद्भुतमाधुरीभरधुरीणाङ्गच्छविं राधिकाम् प्रेमोल्लासभराधिकां निरवधि ध्यायन्ति ये तद्धियः ।
त्यक्ताः कर्मभिरात्मनैव भगवद्धर्मेप्यहो निर्ममाः सर्वाश्चर्यगतिं गता रसमयीं तेभ्यो महदुभ्यो नमः ॥८०॥



अद्भुत कमनीय किशोर कांति,
प्रति अंग छटा नयनाभिराम
अति प्रेमोल्लास भरी राधा का,
ध्यान निरंतर सहित नाम
त्यागे कर्मों ने जिन्हें स्वयं,
भागवत धर्म से भी नकाम
वे प्रेम रसाम्बुधि मग्न महत जन,
स्वीकारें मेरा प्रणाम
॥80॥

भावार्थ

जिनके अंग-अंग की कान्ति किशोरावस्था के अद्भुत माधुर्य की अधिकता से भरपूर है एवं जो अतिशय प्रेमोल्लास से भरी हुई हैं; उन श्रीराधिकाजी का जो अनन्यतापूर्वक ध्यान करते हैं, उन्हें कर्मों ने अपने आप ही छोड़ दिया है, आश्चर्य है कि वे भगवत्-धर्मों से भी कोई ममता नहीं रखते, वे सभी को आश्चर्य चकित कर देने वाली रसमयी अवस्था को प्राप्त कर चुके हैं, उन महापुरुषों को मेरा नमस्कार है।

लिखन्ति भुजमूलतो न खलु शङ्खचक्रादिकम् विचित्रहरिमन्दिरं न रचयन्ति भालस्थले ।
लसत्तुलसिमालिकां दधति कण्ठपीठे न वा गुरोर्भजनविक्रमात् क इह ते महाबुद्धयः ॥८१॥



चित्रित भुजमूल नहीं जिनके,
हैं शंख चक्र इत्यादि चित्र
अंकित न ललाट पटल ऊपर,
बहु तिलक छाप रचना विचित्र
आश्चर्य कंठ में लसित नहीं,
तुलसी कंठी माला पवित्र
श्रीगुरु के प्रबल प्रताप सिद्ध,
रति कहाँ महामति शुभ चरित्र
ll81ll

भावार्थ

श्रीगुरु द्वारा दिये गये भजन के पराक्रम से, जो निश्चय ही अपनी भुजाओं के मूल में शंख, चक्र आदि के चिन्ह नहीं बनाते, अपने भालस्थल पर विचित्र तिलक की रचना नहीं करते और गले में तुलसी की माला धारण नहीं करते; इस लोक में, वे महामति महानुभाव कौन हैं? अर्थात् विरले ही हैं।

कर्माणि श्रुतिबोधितानि नितरां कुर्वन्तु कुर्वन्तु मा गूढाश्चर्यरसाः स्रगादिविषयान् गृह्णन्तु मुञ्चन्तु वा । कैर्वा भाव रहस्यपारगमतिः श्रीराधिकाप्रेयसः किञ्चिज्ज्ञैरनुयुज्यतां बहिरहो भ्राम्यद्भिरन्यैरपि ॥८२॥



वे करें ना करें कदापि भले,
श्रुति विहित नित्य कर्त्तव्य कर्म
त्यागें अथवा स्वीकार करें,
माला चन्दन साधुता वर्म
श्रीराधावल्लभ रस रहस्य के,
पारंगत रत परम धर्म
अल्पज्ञ बहिर्मुख जन उनका,
क्या जान सकेंगे कभी मर्म
॥82॥

भावार्थ

रहस्यमय अद्भुतानन्दमूलक प्रेम-रस में निमग्न रसिकजन, श्रुतियों द्वारा प्रतिपादित कर्मों को करें अथवा न करें, माला-चन्दन आदि भोगों को ग्रहण करें अथवा छोड़ दें; अहो ! श्रीराधिकावल्लभलालजी के रहस्यमय भाव में पारंगत मति वाले रसिक, कभी अल्पज्ञ, बहिर्मुख अथवा किन्हीं अन्य लोगों का संग भी कर लें, तो भी उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

अलं विषयवार्त्तया नरककोटिबीभत्सया वृथा श्रुतिकथाश्रमो बत बिभेमि कैवल्यतः ।
परेशभजनोन्मदा यदि शुकादयः किं ततः परं तु मम राधिकापदरसे मनो मज्जतु ॥८३॥



रहने दो विषय कथा मित्रों,
शत शत नरकों से अधिक घृणित,
श्रुति कथा व्यर्थ श्रम है करती,
केवल्य कल्पना ही विचलित,
परमेश भजन उन्मद शुकादि,
मैं नहीं अत्यधिक आकर्षित,
मेरा मन भृंग अनवरत हो,
राधा पादाम्बुज मधु मज्जित
॥83॥

भावार्थ

करोड़ों नरकों से भी घृणित विषय भोगों की चर्चा समाप्त करो, श्रुतियों की कथायें भी व्यर्थ का श्रम ही है और मोक्ष से तो मुझे डर ही लगता है। यदि श्रीशुकदेवजी आदि महत्जन परमेश्वर के भजन में उन्मत्त हैं, तो मुझे उनसे क्या प्रयोजन ? मेरा मन तो श्रीराधा-चरणों के रस में ही स्नान करता रहे।

तत् सौन्दर्यं स च नववयोयौवनश्रीप्रवेशः सा दृग्भङ्गी स च रसघनाश्चर्यवक्षोजकुम्भः ।
सोऽयं बिम्बाधरमधुरिमा तत् स्मितं सा च वाणी सेयं लीलागतिरपि न विस्मर्यते राधिकायाः ॥८४॥



वह अपूर्व आभा बचपन में,
नव यौवन श्री का प्रवेश
वे सलोल लोचन रसमय,
अभिनव उरोज युग छवि अशेष
अरुण अधर पुट मंद मधुर,
सस्मित वाणी वीणा विशेष
वह मद मंथर गति श्यामा की,
नहीं भूलती लव निमेष
॥84॥

भावार्थ

श्रीराधिका का वह सौन्दर्य, वह नवीन वय और उसमें यौवन श्री का प्रवेश, नेत्रों की वह भंगिमा, रस से घनीभूत और आश्चर्यमय वे कुच-कलश, इसी प्रकार बिम्ब के फल जैसे अधरों की वह मधुरिमा, वह मन्द-मन्द हास्य, वह रसमयी वाणी और वैसी ही वह लीलापूर्ण चाल-इनमें से एक भी बात भुलाई नहीं जा सकती है।

यल्लक्ष्मीशुकनारदादिपरमाश्चर्यानुरागोत्सवैः प्राप्तं त्वत्कृपयैव हि व्रजभृतां तत्तत्किशोरीगणैः ।
तत्कैङ्कर्यमनुक्षणाद्भुतरसं प्राप्तुं धृताशे मयि श्रीराधे नवकुञ्जनागरि कृपादृष्टिं कदा दास्यसि ॥८५॥



जो लक्ष्मी शुक नारदादि के,
लिए एक आश्चर्य महान
ब्रज किशोरियों ने पाया,
जो अनुपम करुणा का अनुदान
उस अलभ्य उज्जवल रस की,
लालसा लोल मति मैं अज्ञान
नव निकुंज नागरी देखोगी,
सदै नैन कब निज जन जान
॥85॥

भावार्थ

हे नव कुञ्ज नागरी ! हे श्रीराधे ! मैंने आपके उस कैंकर्य को प्राप्त करने की आशा लगायी हुई है, जो प्रतिक्षण अद्भुत रस रूप है, जिसे व्रज बालाओं में से उन किन्हीं अनुराग-उत्सव परायण किशोरीगणों ने निश्चय ही आपकी कृपा से ही प्राप्त किया है तथा जो लक्ष्मीजी, शुकदेवजी, नारदजी आदि के लिये परम आश्चर्य रूप है।

लब्ध्वा दास्यं तदतिकृपया मोहनस्वादितेन सौन्दर्यश्रीपदकमलयोर्लालनैः स्वापितायाः ।
श्रीराधायाः मधुरमधुरोच्छिष्टपीयूषसारम् भोजं भोजं नवनवरसानन्दमग्ना कदा स्याम् ॥८६॥



अनुपम शोभा श्री के निधि हैं,
श्रीराधा के सुकुमार चरण
मृदु कर पलोट कर शयन कराते,
रसिक मुकुट मणि मनमोहन
अति कृपा पात्र पद दासी बन,
मैं कभी करूँगी संवाहन
अवशिष्ट प्रसाद स्वामिनी का,
पीयूष सार शत आस्वादन
॥86॥

भावार्थ

सौन्दर्य से सम्पन्न श्रीराधिका के चरण-कमलों के संवाहन द्वारा, उन्हें शयन कराने के रूप में, मोहन (श्रीलालजी) द्वारा आस्वादित उस दास्य को, उनकी (श्रीप्रियाजी की) अत्यन्त कृपा से प्राप्त करके एवं मधुरातिमधुर अमृत के सार स्वरूप उनके उच्छिष्ट का बार-बार भोजन करती हुई, मैं कब नित्य नवीन रसानन्द में डूब जाऊँगी ?

यदि स्नेहाद् राधे दिशसि रतिलाम्पट्यपदवीम् गतं मे स्वप्रेष्ठं तदपि मम निष्ठां शृणु यथा ।
कटाक्षैरालोके स्मितसहचरैर्जातपुलकम् समाश्लिष्याम्युच्चैरथ च रसये त्वत्पदरसम् ॥८७॥



यदि स्नेहवसाद कभी राधे,
प्रियतम को करो मुझे अर्पण
होगी तथापि निष्ठा मेरी,
कैसे कृपया तुम करो श्रवण
सस्मित कटाक्ष युत अवलोकन,
कर पुलकित करूँ सम आलिंगन
यह सब होने पर भी तब पद,
रस में मज्जित होगा मम मन
॥87॥

भावार्थ

हे श्रीराधे ! यदि आप स्नेह के वशीभूत होकर, अपने रति-लम्पट पदवी प्राप्त प्रीतम को मुझे सौंप दें, तब भी मेरी निष्ठा जैसी होगी, उसे सुनिये- मैं मन्द-मन्द मुसकान के साथ तिरछे नेत्रों से उन्हें देखूँगी और पुलकित होने पर गाढ़ आलिंगन भी करूँगी; ऐसी स्थिति में भी मुझे आपके चरण कमलों के रस का ही अनुभव होगा।

कृष्णः पक्षो नवकुवलयं कृष्णसारस्तमालो नीलाम्भोदस्तव रुचिपदं नामरूपैश्च कृष्णा ।
कृष्णे कस्मात् तव विमुखता मोहनश्याममूर्त्ता –वित्युक्त्वा त्वां प्रहसितमुखीं किन्नु पश्यामि राधे ॥८८॥



है कृष्ण पक्ष प्रिय नीलकमल,
प्रिय कृष्ण सार मृग श्यामल घन
प्रिय तरु तमाल सर्वाधिक प्रिय,
कृष्णा कलिंदीजा तट पावन
ये सब प्रिय हैं जिनके कारण,
क्यों अप्रिय श्याम मदन मोहन
ऐसा कह कर कब देखूंगी,
श्रीराधे तुम्हें प्रफुल्ल वदन
ll88ll

भावार्थ

हे श्रीराधे ! जब कृष्ण पक्ष, नव नील कमल, कृष्णसार मृग, श्याम तमाल, नील मेघ एवं कृष्ण नाम-रूप से साम्य रखने वाली कृष्णा (श्रीयमुनाजी) - ये सब आपकी प्रिय है, तब मोहन श्याम विग्रह कृष्ण (श्रीलालजी) से आपकी विमुखता किसलिये है? इस प्रकार कहकर, क्या मैं आपको हँसते हुए न देख सकूँगा?

लीलापाङ्गतरङ्गितैरिव दिशो नीलोत्पलश्यामला दोलायत्कनकाद्रिमण्डलमिव व्योम स्तनैस्तन्वतीम् ।
उत्फुल्लस्थलपङ्कजामिव भुवं रासे पदन्यासतः श्रीराधामनुधावतीं व्रजकिशोरीणां घटां भावये ॥८९॥



जिनकी लीला कटाक्ष धारा से,
खिलें चतुर्दिक नीलकमल
उन्नत उरोज शोभित नभ में,
जैसे अगणित सुमेरु चंचल
चरणों की थिरकन से प्रफुल्ल,
वसुधा पर अमित पुष्प पाटल
राधा अनुगत ब्रज वाला गण,
घन घटा करें मम् हृदय विमल
॥89॥

भावार्थ

लीलापूर्ण कटाक्षों रूपी तरंगों से दिशाओं को नील-कमल जैसी श्यामला बनाती हुई, कुचों के द्वारा आकाश को हिलते हुए स्वर्ण पर्वत के मण्डल जैसा बनाती हुई एवं रास में नृत्य करते समय चरणों के विन्यास रूपी कौशल से पृथ्वी को खिलते हुए गुलाब जैसा सुशोभित करती हुई, श्रीराधा का अनुगमन करने वाली व्रज-किशोरियों की मण्डली रूपी घटाओं की मैं भावना करता हूँ।

दृशौ त्वयि रसाम्बुधौ मधुरमीनवद् भ्राम्यतः स्तनौ त्वयि सुधासरस्यहह चक्रवाकाविव ।
मुखं सुरतरङ्गिणि त्वयि विकासि हेमाम्बुजम् मिलन्तु मयि राधिके तव कृपातरङ्गच्छटाः ॥९०॥



रस सागर में चपल मीन से,
भ्रमण शील तब नयन युगल
अहह सुधा सरसी में शोभित,
चक्रवाक कुच युग्म विमल
सुरत रंगीनी वदन तुम्हारा,
विकसित जैसे स्वर्ण कमल
मिलती रहै तुम्हारी राधे,
कृपा तरंग छटा अविरल
॥90॥

भावार्थ

हे श्रीराधिके ! रस के सागर जैसे आपके श्रीअंग में, आपके दोनों नेत्र मधुर रस के मधुर चांचल्य से पूर्ण मीन की भाँति क्रीड़ा कर रहे हैं; अहा हा! अमृत के सरोवर रूपी आपके श्रीविग्रह में, आपके दोनों कुच चकवा-चकवी की तरह सुशोभित हो रहे हैं; हे सुर-सरिता रूपिणी! आपके श्रीविग्रह में, आपका मुख विकसित स्वर्ण-कमल जैसी शोभा को प्राप्त कर रहा है। मुझे आपकी कृपा रूपी तरंगों की छटा प्राप्त हो।

कान्ताढ्याश्चर्यकान्ता कुलमणिकमला कोटिकाम्यैकपादा – म्भोजभ्राजन्नखेन्दुच्छविलवविभवा काप्यगम्या किशोरी ।
उन्मर्यादप्रवृद्धप्रणयरसमहाम्भोधिगम्भीरलीला – माधुर्योज्जृम्भिताङ्गी मयि किमपि कृपारङ्गमङ्गीकरोतु ॥९१॥



कांत धनी कांता कुल मणि,
कमनीय कामप्रद चरणकमल
नख चंद्र छटा की लेश लालसा,
लोल कोटि कमला प्रतिपल
मर्यादा रहित प्रबृद्ध प्रणय,
लीला रस महासिंधु उज्ज्वल
माधुर्य उल्लसित अंग किशोरी,
कृपा रंग मेरा सम्बल
।।91।।

भावार्थ

जो अपने प्रियतम (श्रीलालजी) से नित्य संयुक्त हैं, जो आश्चर्यमयीकान्ताओं के समूह की शिरोमणि हैं,
जिनके अद्वितीय चरण-कमलों के नख-चन्द्रों की छबि के कण का किंचित वैभव कोटि-कोटि कमलाओं द्वारा वांछनीय है,
जो असीम रूप से बढ़ते हुए किन्तु गम्भीर प्रेम-रस के महासागर के लीला-माधुर्य से उल्लसित अंगों वाली हैं;
वे कोई सबसे अगम्य किशोरी, अपनी अनिर्वचनीय कृपा के रंग में रँगकर, मुझे अंगीकार करें।

कलिन्दगिरिनन्दिनीपुलिनमालतीमन्दिरे प्रविष्टवनमालिना ललितकेलिलोलीकृते ।
प्रतिक्षणचमत्कृताद्भुतरसैकलीलानिधे निधेहि मयि राधिके निजकृपातरङ्गच्छटाम् ॥९२॥



श्री वनमाली कृत
केलि लोल,
कालिंदी तट
मालिती सदन
नव नव रस उद्दीपन
क्षण क्षण
लीला निधि राधे उदित करो,
निज कृपा तरंग छटा मम् मन
119211

भावार्थ

श्रीयमुनाजी के तट पर स्थित मालती लता के मन्दिर में प्रवेश करके वनमाली (श्रीलालजी) ने जिन्हें अपनी ललित क्रीड़ाओं से चंचल कर दिया है एवं जो क्षण-क्षण में चमत्कार पूर्ण एवं अद्भुत रस पूर्ण लीलाओं की एकमात्र निधि हैं; हे श्रीराधिके ! मुझे अपनी कृपा रूपी तरंगों की छटाओं से सम्पन्न बना दो।

यस्यास्ते बत किङ्करीषु बहुशश्चाटूनि वृन्दाटवी – -कन्दर्पः कुरुते तवैव किमपि प्रेप्सुः प्रसादोत्सवम् ।
सान्द्रानन्दघनानुरागलहरीनिस्यन्दपादाम्बुज – द्वन्द्वे श्रीवृषभानुनन्दिनि सदा वन्दे तव श्रीपदम् ॥९३॥



तब प्रीती प्रसाद हेतु प्रतिदिन,
जो निकट तुम्हारे दासीजन
श्रीवृंदावन कंदर्प श्याम,
करते है उनका सदा स्तवन
अनवरत प्रवाहित है जिनसे,
आनंद और अनुराग सघन
वृषभानुसुते मैं करती हूँ,
उन पदकमलों का अभिवन्दन
॥93॥

भावार्थ

किसी अनिर्वचनीय उत्सव जैसी आपकी प्रसन्नता की प्राप्ति के इच्छुक होकर ही, वृन्दावन के कामदेव (श्रीलालजी), किंकरीगणों के सामने ही, उन किंकरियों की तरह ही, आपकी अनेक प्रकार से चाटुकारी किया करते हैं। हे वृषभानुनन्दिनी (श्रीप्रियाजी)! आपके दोनों चरण-कमल सघन आनन्द और गहरे अनुराग की लहरियों को प्रवाहित करने वाले हैं। मैं आपके महिमाशाली चरणों की सदा वन्दना करती हूँ।

यज्जापः सकृद् एव गोकुलपतेराकर्षकस्तत्क्षणाद् यत्र प्रेमवतां समस्तपुरुषार्थेषु स्फुरेत् तुच्छता ।
यन्नामाङ्कितमन्त्रजापनपरः प्रीत्या स्वयं माधवः श्रीकृष्णोऽपि तदद्भुतं स्फुरतु मे राधेति वर्णद्वयम् ॥९४॥



आकर्षक है गोकुलपति का,
जिसका उच्चारण एक बार
लगते है जिसके जापक को,
पुरुषार्थ चत्तुष्टय भी असार
जिस नाम मंत्र का जप करते,
श्री कृष्ण स्वयं प्रेमावतार
मेरे उर में स्फुरित हो सदा,
वह वर्णयुग्म सारातिसार
ll94ll

भावार्थ

जिस नाम का एक बार का जाप, गोकुलपति (श्रीलालजी) को उसी समय अपनी ओर आकर्षित कर लेता है, जिस नाम से प्रेम करने वाले, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष- इन सभी पुरुषार्थों में तुच्छता का अनुभव करने लगते हैं एवं जिस नाम से अंकित मन्त्र को स्वयं माधव श्रीकृष्ण (श्रीलालजी) भी तत्परता के साथ जपते रहते हैं; वे अद्भुत 'रा और धा' - ये दो अक्षर मेरे हृदय में स्फुरित हों।

कालिन्दीतटकुञ्जरमन्दिरगतो योगीन्द्रवद् यत्पद – ज्योतिर्ध्यानपरः सदा जपति यां प्रेमाश्रुपूर्णो हरिः ।
केनाप्यद्भुतमुल्लसद्रतिरसानन्देन सम्मोहितः सा राधेति सदा हृदि स्फुरतु मे विद्या परा ब्यक्षरा ॥९५॥



कालिंदी कूल कुञ्ज मंदिर,
प्रांगण में हरि शोभायमान
प्रेमाश्रुपूर्ण हो जप करते,
योगीश भांति पद ज्योति ध्यान
कोई अद्भुत उल्लसित दिव्य,
रति रसामोद मोहक सुजान
युग अक्षरवती पराविद्या,
हों सदा हृदय में विद्यमान
॥95॥

भावार्थ

श्रीयमुनाजी के तट पर स्थित निकुञ्ज मन्दिर में जाकर, योगियों की तरह जिसकी चरण-ज्योति का ध्यान एवं किसी अद्भुत उल्लास से भरे हुए प्रेम-रस के आनन्द से सम्मोहित एवं प्रेम के अश्श्रुओं से पूरित नैंनों वाले श्रीहरि (श्रीलालजी) जिसके नाम का जाप किया करते हैं; वह 'रा और धा'- इन दो अक्षरों वाली परा विद्या मेरे हृदय में स्फुरित हो।

देवानामथ भक्तमुक्तसुहृदामत्यन्तदूरं च यत् प्रेमानन्दरसं महासुखकरं चोच्चारितं प्रेमतः ।
प्रेम्णाकर्णयते जपत्यथ मुदा गायत्यथालिष्वयम् जल्पत्यश्रुमुखो हरिस्तदमृतं राधेति मे जीवनम् ॥९६॥



है भक्त मुक्त देवता तथा,
हरी सुहृद वर्ग दुष्प्राप्य श्रवण
अति सुखकर प्रेमानंद रसप्रद,
प्रीतियुक्त हो उच्चारण
सुनते है अति सप्रेम जपते,
सखियों में करते संकीर्तन
करतें है कभी प्रलाप आप,
हरि राधा ही मेरा जीवन
119611

भावार्थ

जो देवताओं, भक्तों, मुक्तजनों एवं सुहृदजनों (माता, पिता, बन्धु, सखा तथा प्रेयसियों) से अत्यन्त दूर है, जो प्रेम के आनन्द से जनित रस रूप है, जो प्रेम से उच्चारण करने पर अतिशय सुख को देने वाला है, श्रीहरि (श्रीलालजी) स्वयं जिसे प्रेम पूर्वक सुनते हैं, जाप करते हैं, सखियों के मध्य में आनन्द से गान करते हैं तथा मुख पर आँसुओं को ढलकाते हुए गुनगुनाते रहते हैं; वह अमृतमय राधा नाम मेरा जीवन है।

या वाराधयति प्रियं व्रजमणिं प्रौढ़ानुरागोत्सवैः संसिध्यन्ति यदाश्रयेण हि परं गोविन्दसख्युत्सुकाः ।
यत् सिद्धिः परमापदैकरसवत्याराधनात्ते नु सा श्रीराधा श्रुतिमौलिशेखरलता नाम्नी मम प्रीयताम् ॥९७॥



प्रौढ़ानुराग रस उत्सव से,
जो करती व्रजमणि आराधन
जिनके आश्रय से होता है,
गोविन्द सखीत्व सुलभ साधन
जिनकी उपासना कर देती,
रससिद्ध परम पद का भाजन
वे श्रुति शेखर जीवनी लता,
श्रीराधा मुझे करें निज जन
॥97॥

भावार्थ

जो गम्भीर और पूर्ण अनुराग रूपी उत्सव के द्वारा अपने प्रियतम व्रजमणि (श्रीलालजी) का आराधन करती हैं, जो गोविन्द (श्रीलालजी) के साथ सख्य सम्बन्ध बनाने के लिये उत्सुक रहती हैं, जिनका एकमात्र आश्रय ग्रहण करने से निश्चय ही सभी कार्य सम्यक् रूप से सिद्ध होते हैं एवं जिनके आराधन से परम पद रूपा एकान्त रस से पूर्ण सिद्धि प्राप्त होती है; वही श्रुति मौलि शेखर (श्रीलालजी) की लता रूपिणी, श्रीराधा नाम वाली, मेरी प्रिय हों।

गात्रे कोटितडिच्छवि प्रविततानन्दच्छवि श्रीमुखे बिम्बौष्ठे नवविद्द्रुमच्छवि करे सत्पल्लवैकच्छविः ।
हेमाम्भोरुहकुङ्गलच्छवि कुचद्वन्द्वेऽरविन्देक्षणम् वन्दे तन्नवकुञ्जकेलिमधुरं राधाभिधानं महः॥९८॥



अंगों में कोटि दामिनी छवि,
आनंद कंद मुख छवि अपार
नव विद्रुम छवि बिम्बाधर में,
कोमल कर पल्लव छवि प्रसार
कुच युग में स्वर्ण कमल कलिका,
छवि नीलाम्बुज द्रिग चमत्कार
नव कुञ्ज केलिमय मधुर ज्योति,
छवि निधि राधा को नमस्कार
119811

भावार्थ

जिसके श्रीअंग में कोटि-कोटि विद्युतों जैसी चमक है, जिसके श्रीमुख मैं विस्तृत आनन्द की शोभा है, जिसके बिम्ब फल जैसे अधरों में नवीन मूँग की प्रभा है, जिसके हाथ नवीन पल्लवों जैसी कोमलता एवं अरुणता को लिये हुए हैं, जिसके कुच युगल में स्वर्ण-कमल की कलियों के समान कमनीयता है, जो कमल जैसे नेत्रों वाली है तथा जो नवीन कुञ्ज विहार से मधुर है; मैं उस राधा नामक ज्योति की वन्दना करता/करती हूँ।

मुक्तापङ्क्तिप्रतिमदशना चारुबिम्बाधरोष्ठी मध्ये क्षामा नवनवरसावर्त्तगम्भीरनाभिः ।
पीनश्रोणिस्तरुणिमसमुन्मेषलावण्यसिन्धुर् -वैदग्धीनां किमपि हृदयं नागरी पातु राधा ॥९९॥



दसनावली मोती की लड़ियाँ,
बिम्बाफल जैसे अरुण अधर
कटि छीण नितम्ब पीन सुन्दर,
नाभि गंभीर ज्यों सुरस भंवर
नव यौवन नित्य विकासशील,
अद्भुत लावण्य सार सागर
नागरता की निधि श्रीराधा,
दें शीघ्र मुझे अवलंबन कर
॥99॥

भावार्थ

जिनकी दन्तावली मोतियों की माला के समान कान्तिमान है, जिनके सुन्दर ओष्ठ बिम्ब फल के समान लालिमा लिये हुए हैं, जिनका कटि-प्रदेश अत्यन्त क्षीण है, जिनकी नाभि नई-नई रस की भँवरों से पूर्ण अतिशय गम्भीर और वर्तुलाकार है, जो स्थूल नितम्बों वाली हैं तथा जो नव यौवन के विकास से सौन्दर्य का सागर जैसी बनी हुई हैं; वे चतुरताओं की कोई सार सर्वस्व स्वरूपा अनिर्वचनीय नागरी श्रीराधा हम सबकी रक्षा करें।

स्निग्धाकुञ्चितनीलकेशि विदलद्बिम्बोष्ठिचन्द्रानने खेलत्खञ्जनगञ्जनाक्षि रुचिमन्नासाग्रमुक्ताफले ।
पीनश्रोणि तनूदरि स्तनतटीवृत्तच्छटात्यद्भुते राधे श्रीभुज वल्लिचारुवलये स्वं रूपमाविष्कुरु ॥१००॥



घुंघराले काले स्निग्ध केश,
बिम्बाधर विलसित चन्द्रवदन
नासाग्र अलंकृत मुक्ताफल,
द्रिग चंचल खंजन मदगंजन
कृश उदर स्थूल नितम्ब स्तन,
शोभानिधि कर मुखरित कंकण
क्या करुणा कर स्वामिनी कभी,
आश्रित जन को दोगी दर्शन
।।100।।

भावार्थ

चिकने, घुँघराले एवं काले केशों वाली, पके हुए बिम्ब-फल के समान अधरों वाली, चन्द्र जैसे मुख वाली, चंचल खंजनों के अभिमान को मर्दन करने वाली, नासिका के अग्रभाग में सुन्दर बेसर को धारण करने वाली, स्थूल नितम्बों वाली, क्षीण उदर वाली, उरोजों की वर्तुलाकार छटा से अति अनुपम शोभा वाली और शोभाशाली भुजाओं में सुन्दर कंकणों को धारण करने वाली, हे श्रीराधे ! अपने स्वरूप को प्रकट करो।

लज्जान्तःपटमारचय्य रचितस्मायप्रसूनाञ्जलौ राधाङ्गे नवरङ्गधाग्नि ललितप्रस्तावने यौवने ।
श्रोणीहेमवरासने स्मरनृपेणाध्यासिते मोहनम् लीलापाङ्गविचित्रताण्डवकलापाण्डित्यमुन्मीलति ॥१०१॥



मधुरस्मित पुष्पांजली सहित,
लज्जा का नूतन अवगुंठन
नवरंग भूमि श्रीराधा के,
अंगो में विकसित नवयौवन
अब हुआ विराजित मदन नृपति,
श्रोणि स्वर्णिम शुभ सिंहासन
लीला कटाक्ष अद्भुत तांडव,
चातुरी कलामय सम्मोहन
ll101ll

भावार्थ

नवीन नाट्य के रंगमंच रूपी श्रीराधा के श्रीअंग में, लज्जा के घूँघट रूपी परदे को डालकर, मन्द-मन्द मुसिक्यान रूपी फूलों की वर्षा करते हुए, यौवन रूपी ललित प्रस्तावना में, कामदेव रूपी राजा के नितम्ब रूपी श्रेष्ठ सोने के सिंहासन के ऊपर स्थित होने पर, सभी को मोहित करने वाले लीलापूर्ण कटाक्षों के द्वारा ताण्डव नृत्य की कला के विचित्र पाण्डित्य का प्रदर्शन हो रहा है।

सा लावण्यचमत्कृतिर्नववयो रूपं च तन्मोहनम् तत्तत्केलिकलाविलासलहरीचातुर्यमाश्चर्यभूः ।
नो किञ्चित् कृतमेव यत्र न नुतिर्नागो न वा सम्भ्रमो – राधामाधवयोः स कोऽपि सहजः प्रेमोत्सवः पातु वः ॥ १०२॥



वह नववय लावण्य चमत्कृति,
वह नव नव रूप महामोहन
वह नव नव केलि कला विलास,
आश्चर्य परम आनंद सदन
जहाँ नहीं अपराध स्तुति,
कृत्रिम आदर या अभिनन्दन
प्रणयोत्सव राधा माधव का,
सहज करें तब संरक्षण
॥102॥

भावार्थ

जहाँ वह लावण्य का चमत्कार है, वह नवीन वय है, वह मोहित करने वाला रूप है और वह आश्चर्यजनक केलि कलाओं की विलासमयी तरंगों की चतुरता है, जहाँ न तो लेश मात्र भी बनावटीपन ही है, न स्तुति है, न अपराध है और न संभ्रम ही है- श्रीराधा-माधव का ऐसा कोई अनिर्वचनीय स्वाभाविक प्रेमोत्सव तुम सबकी रक्षा करे।

येषां प्रेक्षां वितरति नवोदारगाढानुरागान् मेघश्यामो मधुरमधुरानन्दमूर्तिर्मुकुन्दः ।
वृन्दाटव्यां सुमहिमचमत्कारकारीण्यहो किम् तानि प्रेक्षेऽद्भुतरसनिधानानि राधापदानि ॥ १०३॥



अति उदार मधुरातीमधुर,
आनंद मूर्ति नव घन श्यामल
जिनके दर्शन के हेतु सदा,
रहतें हैं उत्कंठित प्रतिपल
वे अद्भुत चमत्कार अनुपम,
रस के निधान सुकुमार कमल
क्या कभी द्रष्टि गोचर होंगे,
वृन्दावन में राधा पद तल
ll103ll

भावार्थ

मधुर से भी मधुर आनन्द की मूर्त्ति एवं बादलों के समान श्याम वर्ण वाले मुकुन्द (श्रीलालजी); जिन्हें नवीन, असीम एवं प्रगाढ़ अनुराग के साथ एकटक दृष्टि से देखते रहते हैं, जो अत्यन्त महिमाशाली चमत्कार करने वाले हैं; उन अद्भुत रस के निधान श्रीराधा के चरणों को, क्या मैं देखूँगा/देखूँगी ?

बलान् नीत्वा तल्पे किमपि परिरभ्याधरसुधाम् निपीय प्रोल्लिख्य प्रखरनखरेण स्तनभरम् ।
ततो नीवीं न्यस्ते रसिकमणिना त्वत्करधृते कदा कुञ्जच्छिद्रे भवतु मम राधेनुनयनम् ॥ १०४॥



बलपूर्वक सुखद तल्प पर ले,
करके अद्भुत विधि आलिंगन
वे अधर सुधा का पान करेंगे,
प्रखर नख क्षत नवल स्तन
तदनन्तर तब कर कमल ग्रहण,
कर देंगे नीवी उन्मोचन
कब कुंज रंध्र से देखूँगी,
राधे प्रियतम का मधुर मिलन
ll104ll

भावार्थ

हे श्रीराधे ! रसिकमणि (श्रीलालजी) द्वारा बलपूर्वक आपको शैया पर ले जाकर, किसी अनिर्वचनीय रूप से आपका आलिंगन कर, आपके अधरों के अमृतका पान कर, अपने तीक्ष्ण नखों से आपके उरोजों को रेखांकित कर और फिर आपके हाथ से पकड़े हुए नीवी बन्धन पर अपना हाथ रखा गया हो- ये सब देखने के लिये, कुञ्ज के छिद्रों में, मेरे नयन क्या कभी लगेंगे ?

करं ते पत्रालिं किमपि कुचयोः कर्तुमुचितम् पदं ते कुञ्जषु प्रियमभिसरन्त्या अभिसृतौ ।
दृशौ कुञ्जच्छिद्रैस्तव निभृतकेलिं कलयितुम् यदा वीक्षे राधे तदपि भविता किं शुभदिनम् ॥ १०५॥



कर पत्रावली सुघर रचनामय,
हो नियुक्त तब नवल स्तन
पद प्रिय अभिसार करो जब तुम,
पश्चात तुम्हारे करें गमन
जब निभृत निकुंज केलिरत तुम,
हो कुञ्ज रंध्र से लगे नयन
श्रीराधे क्या देखूँगी मैं,
ऐसे भी आयेंगे शुभदिन
ll105ll

भावार्थ

क्या कभी ऐसा शुभ दिन भी देखने में आयेगा, जबकि मैं अपने हाथों से आपके कुचों पर कुछ अनिर्वचनीय पत्रावली की रचना कर रही होंगी, मेरे पैर, कुञ्जों में अपने प्रियतम (श्रीलालजी) से मिलने के लिये जाती हुई, आपका अनुगमन कर रहे होंगे एवं मेरे नेत्र, कुञ्ज के छिद्रों से लगकर, आपकी ऐकान्तिक केलि के दर्शन कर रहे होंगे ?

रहोगोष्ठीं श्रोतुं तव निजविटेन्द्रेण ललिताम् करे धृत्वा त्वां वा नवरमणतल्पे घटयितुम् ।
रतामर्दस्रस्तं कचभरमथो संयमयितुम् विदध्याः श्रीराधे मम किमधिकारोत्सवरसम् ॥ १०६ ॥



लम्पट प्रिय संग रहस्यमयी,
वार्ता तब मैं कर सकूँ श्रवण
करधर सादर नव रमण तल्प पर,
तुम्हें कराऊँ आरोहन
रति मर्दन विलुलित केश राशि का,
करूँ भली विधि से बंधन
क्या यह अधिकार प्रदान करोगी,
राधे कर निज दासी जन
ll106ll

भावार्थ

हे श्रीराधे ! आपकी एवं आपके प्रियतम लम्पट शिरोमणि (श्रीलालजी) के मध्य होने वाली सुन्दर गोपनीय वार्तालाप को सुनने, आपका हाथ पकड़कर आपको प्रियतम द्वारा रचित नवीन शैया तक पहुँचाने और रति-रण में खुल गये आपके केशपाशों को सँवारकर पुनः बाँधने- इन सबके उत्सवपूर्ण रसमय अधिकार का, क्या आप मेरे लिये विधान करोगी ?

वृन्दाटव्यां नवनवरसानन्दपुञ्ज निकुञ्जे गुञ्जद्भृङ्गीकुलमुखरिते मनुमञ्जुप्रहासैः ।
अन्योन्यक्षेपणनिचयनप्राप्तसङ्गोपनाद्यैः क्रीडज्जीयाद् रसिकमिथुनं क्लृप्तकेलीकदम्बम् ॥ १०७॥



वृन्दावन नव नव रसानंद घन,
पुंज सुगुंजित मत्त भ्रमर
मंजुल निकुंज कल केलि निरत,
रसनिधि राधिका रसिक शेखर
कंदूक क्षेंपण संग्रहण पुनः,
संगोंप नाद परिहास मुखर
क्रीड़ा विस्तार अपार छटायुत,
जयति युगल लीला मनहर
ll107ll

भावार्थ

वृन्दावन में, भ्रमर समूह की गुंजन से मुखरित एवं नई-नई रस केलियों से जनित आनन्द से पूर्ण निकुञ्ज में, मधुरातिमधुर हास परिहास पूर्वक प्रस्पर गेंद फेंकने, ग्रहण करने और प्राप्त करके छिपा लेने आदि-आदि जैसी श्रृंगार पोषक हास्यात्मक क्रीड़ा समूह की रचना कर खेलते हुए, रसिक युगल की जय हो।

रूपं शारदचन्द्रकोटिवदने धम्मिल्लमल्लीस्रजाम् आमोदैर्विकलीकृतालिपटले राधे कदा तेऽद्भुतम् ।
ग्रैवेयोज्ज्वलकम्बुकण्ठि मृदुदोर्वल्लीचलत्कङ्कणे वीक्षे पट्टदुकूलवासिनि रणन्मञ्जीरपादाम्बुजे ॥ १०८॥



अलीअवलि-विमोहित मल्लिमाल,
मंडित सुकेश शशिकोटि वदन
आभुषण-भूषित कम्बुकंठ,
सुकुमार-भुजा-भूषित कंकण
नवपाटम्बर परिधान ध्वनित,
नूपुर पादाम्बुज आर्तिहरण
वह अद्भुत रूपराशि राधे,
क्या कभी करोगी सुलभ नयन
ll108ll

भावार्थ

शरद ऋतु के करोड़ों चन्द्रमाओं के प्रकाश पुंज जैसे मुख वाली, वेणी में गुन्थित मालती की मालाओं की सुगन्ध से भ्रमरों को विकल करने वाली, कण्ठ के उज्ज्वल आभूषण से सुशोभित शंख जैसे कंठ वाली, कोमल भुजाओं में धारण किये हुए चंचल कंकणों वाली, श्रीअंग में रेशमी वस्त्र धारण करने वाली एवं बजते हुए नूपुरों से सुसज्जित चरण-कमलों वाली, हे श्रीराधे ! मैं आपके अद्भुत रूप को कब देखूँगी ?

इतो भयमितस्त्रपाकुलमितो यशः श्रीरितो हिनस्त्यखिलश्रृङ्खलामपि सखीनिवासस्त्वया ।
सगद्गदमुदीरितं सुबहुमोहनाकाङ्क्षया कथं कथमयीश्वरि प्रहसितैः कदा म्रेड्यसे ॥ १०९ ॥



सुयश-लाज-भय-कुल-मर्यादा,
त्यागे सकल लोक-बंधन
एक मात्र वे प्रणय मुग्ध हैं,
सखी निवास श्याम नवघन
यों अतिमोहन आकांक्षा से ,
सुन गदगद तब मधुर वचन
यह कैसे कैसे स्वामिनी,
कब पूछूँगी मैं हसित वदन
ll109ll

भावार्थ

“अनेक प्रकार से मुझे (श्रीप्रियाजी को) सम्मोहित करने की लालसा से, सखियों के बीच में रहने वाले श्रीलालजी ने भय, लज्जा, कुल, यश रूपी श्री-इन सबका ही नहीं, सभी प्रकार की श्रृंखलाओं का भी परित्याग कर दिया है।" - आपके (श्रीप्रियाजी के) अटक-अटक कर बोले गये इन वचनों को सुनकर, मैं आपसे परिहासपूर्वक इस प्रकार कब पूछेंगी, "हे स्वामिनी ! कैसे ? किस प्रकार ?"

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्र

श्यामे चाटुरुतानि कुर्वति सहालापान् प्रणेत्री मया गृह्णाने च दुकूलपल्लवमहो हुङ्कृत्य मां द्रक्ष्यसि ।
बिभ्राणे भुजवल्लिमुल्लसितया रोमस्रजालङ्कृताम् दृष्ट्वा त्वां रसलीनमूर्तिमथ किं पश्यामि हास्यं ततः ॥ ११०॥



जब कहें श्याम मृदु चाटुवचन,
तुम करतीं मुझसे संभाषण
जब वे अंचल का छोर धरें,
तुम 'हूँ' कर विमुख रहो अनमन
जब बाँह पकड़ लेंगें प्रियतम,
तुम हो जाओगी पुलकित तन
रसलीन मूर्ति वह देखूँगी,
क्या तुमको विकसित हास्य वदन
ll110ll

भावार्थ

जब श्रीश्यामसुन्दर (श्रीलालजी) आपकी चाटुकारी कर रहे हों, किन्तु आप मुझसे बातचीत करने में लगी रहें और जब वे आपके वस्त्र का कोई छोर पकड़ें, तब आप उन्हें हुंकारते हुए, मुझे देखती रहो तथा जब वे आपकी भुज लता को पकड़ें, तब आप उल्लास से पूर्ण होकर रोमांचित हो उठें।
आपकी ऐसी रस में निमग्न मूर्त्ति को देखने के पश्चात्, क्या मैं आपके हास्य को देख पाऊँगी ?

अहो रसिकशेखरः स्फुरति कोपि वृन्दावने निकुञ्जनवनागरीकुचकिशोरकेलिप्रियः ।
करोतु स कृपां सखीप्रकटपूर्णनत्युत्सवो निजप्रियतमापदे रसमये ददातु स्थितिम् ॥ १११ ॥



वृन्दावन-निकुंज में विलसित,
कोई नव किशोर नागर
नवल किशोरी कुच केलि-प्रिय,
अद्भुत महा रसिक शेखर
सखी समाज प्रणति-उत्सव-रत,
विनयशील शोभा सागर
अपनी प्राणप्रिया पद-युग की,
परिचर्या दें करुणा कर
ll111ll

भावार्थ

अहो ! कोई रसिक शिरोमणि (श्रीलालजी) वृन्दावन में विराजमान हैं, जिन्हें निकुञ्ज में स्थित नव नागरी (श्रीप्रियाजी) के कुचों के साथ मधुर रस की क्रीड़ा करना प्रिय है, जो सखियों के सामने ही, उनके (श्रीप्रियाजी के) प्रति अपने पूर्ण समर्पण को एक उत्सव की तरह मानते हैं; वे मुझ पर कृपा करें और अपनी प्रियतमा (श्रीप्रियाजी) के रसमय श्रीचरणों में मुझे स्थान दें।

विचित्रवरभूषणोज्ज्वलदुकूलसत्कञ्चकैः सखीभिरिति भूषिता तिलकगन्धमाल्यैरपि ।
स्वयं च सकलाकलासु कुशलीकृता नः कदा सुरासमधुरोत्सवे किमपि वेशयेत् स्वामिनी ॥११२॥



अद्भुत उज्जवल नव दुकूल,
कंचुक मनहर भूषित-भूषण
तिलक-गंध-मालादि-अलंकृत,
सुरुचि-सुसज्जित सहचरीगण
गायन-वादन-पारंगत कर,
देकर मुझे अनुचरी तन
मधुर रास-उत्सव में स्वामिनी,
कभी करायेंगी नर्तन ?
ll112ll

भावार्थ

जिन्हें सखियों के द्वारा विचित्र और श्रेष्ठ आभूषणों, उज्ज्वल वस्त्रों, सुन्दर कंचुकी, तिलक, इत्र आदि सुगन्धित द्रव्यों एवं मालाओं से अत्यन्त अद्भुत रूप से विभूषित किया गया है, जो स्वयं समस्त कलाओं में निपुण हैं तथा जिन्होंने हम सब सखियों को भी सम्पूर्ण कलाओं में चतुर बनाया है; वे स्वामिनी (श्रीप्रियाजी) सुन्दर रास के मधुर उत्सव में, हमें कब प्रवेश प्राप्त करायेंगी ?

कदा सुमणिकिङ्किणीवलयनूपुरप्रोल्लसन् महामधुरमण्डलाद्भुतविलासरासोत्सवे ।
अपि प्रणयिनो बृहद्भुजगृहीतकण्ठ्यो वयम् परं निजरसेश्वरीचरणलक्ष्म वीक्षामहे ॥ ११३॥



मणि-किंकणी वलय नूपुर से,
झंकृत महामधुर-मंडल
अद्भुत रास-विलासोत्सव में,
नृत्य-निरत प्रति अंग चपल
प्रियतम-भुजा-गृहीत- कंठ ,
मैं रसानंद-मज्जित प्रतिपल
सदा द्रष्टि-पथ में तथापि,
चित्रित अवनी राधा-पदतल
ll113ll

भावार्थ

महामधुर रास-मण्डल के अद्भुत विलासमय रास के उत्सव में सम्मिलत होने के लिये, सुन्दर माणिक्य, किंकिणी, चूड़ा-चूड़ी एवं नूपुरों से सुशोभित होकर वहाँ पहुँचने पर, यदि आपके प्रियतम (श्रीलालजी) की बड़ी-बड़ी भुजायें, हमारा आलिंगन करते हुए, हमारे कंठ को भी ग्रहण कर लें; तब भी हम सब केवल अपनी रसेश्वरी (श्रीप्रियाजी) के चरण-चिन्हों का दर्शन कब करेंगी ?

यद् गोविन्दकथासुधारसहदे चेतो मया जृम्भितम् यद् वा तद्गुणकीर्त्तनार्चनविभूषाद्यैर्दिनं प्रापितम् ।
यद् यत् प्रीतिरकारि तत्प्रियजनेष्वात्यन्तिकी तेन मे गोपेन्द्रात्मजजीवनप्रणयिनी श्रीराधिका तुष्यतु ॥११४॥



मैंने जो चित्त डुबाया है,
गोविन्द कथामृत-रस-सरवर
गुण-कीर्तन-अर्चन परिचर्या में,
समय बिताये अष्ट-प्रहर
उनके प्रियजनों परिकरों से,
यदि प्रीती निभायी हो निर्झर
तो ब्रजाधीशसुत-प्राण प्रिया,
श्रीराधा हों प्रसन्न मुझ पर
ll114ll

भावार्थ

श्रीगोविन्द (श्रीलालजी) की कथा के अमृतमय रस के सरोवर में, मैंने अपने चित्त को जितना कुछ भी डुबाया है, अथवा उनके गुणों के कीर्तन, पूजन तथा श्रृंगार-सेवा आदि करने में जो भी दिन लगाये हैं, अथवा उनके प्रियजनों में अत्यधिकरूप से प्रीति-सम्बन्ध स्थापित करने के लिए जो-जो किया है; उन सबके फलस्वरूप गोपराजकुमार (श्रीलालजी) की जीवन-दायिनी श्रीराधिका मुझ पर प्रसन्न हों।

रहो दास्यं तस्याः किमपि वृषभानोर्ब्रजवरी – यसः पुत्र्याः पूर्णप्रणयरसमूर्तेर्यदि लभे ।
तदा नः किं धर्मैः किमु सुरगणैः किं च विधिना किमीशेन श्यामप्रियमिलनयत्नैरपि च किम् ॥ ११५॥



क्या धर्माचरण
देव-अर्चन,
क्या विधि-हर-पूजन
श्याम मिलन
परिपूर्ण प्रणयरस
मूर्ति मिले,
यदि भानुनन्दिनी
पद सेवन
ll115ll

भावार्थ

यदि व्रजराज वृषभानु की पुत्री (श्रीराधिकाजी) की अनिर्वचनीय पूर्ण प्रेम-रस की मूर्त्ति (श्रीप्रियाजी) का एकान्त दास्य प्राप्त हो जाय, तब हमें धर्म से, देवताओं से, ब्रह्माजी, शिवजी तथा श्रीश्यामसुन्दर से मिलने के प्रयत्नों से भी क्या प्रयोजन है ?

चन्द्रास्ये हरिणाक्षि देवि सुनसे शोणाधरे सुस्मिते चिल्लक्ष्मीभुजवल्लि कम्बुरुचिरग्रीवे गिरीन्द्रस्तनि ।
भञ्जन्मध्यबृहन्नितम्बकदलीखण्डोरुपादाम्बुज – प्रोन्मीलन्नखचन्द्रमण्डलि कदा राधे मयाराध्यसे ॥११६॥



चंद्रवदन मृगनयन मृदुस्मित,
सुघर नासिका बिम्ब-अधर
सुन्दर भुजा कंबुग्रीवा कुच,
गिरिवर अतिशय क्षीण उदर
बृहद नितम्ब जघन कदली-सम,
पद-अंबुज नख-विधु -द्युतिहर
कब मम भाग्योदय होगा,
है श्रीराधे तब आराधन कर
ll116ll

भावार्थ

हे चन्द्रमुखी ! हे मृगनयनी ! हे देवि ! हे सुन्दर नासिका वाली ! हे लाल-लाल अधरों वाली ! हे मन्द-मन्द मुसिक्यान वाली ! हे दिव्य शोभायुक्त भुजाओं वाली ! हे शंख जैसी सुन्दर कंठ वाली ! हे गिरिराज जैसे स्तनों वाली ! हे क्षीण कटि वाली ! हे भारी नितम्बों वाली ! हे केले जैसे जंघों वाली ! हे खिलते हुए कमल जैसे चरणों वाली ! हे चन्द्रमाओं की मण्डली जैसे नखों वाली ! हे श्रीराधे! आप मेरे द्वारा कब आराधित होगी ?

राधापादसरोजभक्तिमचलामुद्वीक्ष्य निष्कैतवाम् प्रीतः स्वं भजतोऽपि निर्भरमहाप्रेम्णाधिकं सर्वशः ।
आलिङ्गत्यथ चुम्बति स्ववदनात् ताम्बूलमास्येर्पयेत् कण्ठे स्वां वनमालिकामपि मम न्यस्येत् कदा मोहनः ॥११७॥



अचल अकैतव देख कभी,
श्रीराधा-पद-सरोज सेवन
निज भक्तों से अधिक सर्वविध,
होंगे सदय नंदनंदन
आलिंगन चुम्बन कर मुख,
ताम्बूल पुनः कर के अर्पण
मेरे गले कभी अपनी,
वनमाल डाल देंगे मोहन
ll117ll

भावार्थ

श्रीराधा के चरण-कमलों में मेरी अटूट एवं कपट रहित भक्ति को देखकर, मोहन (श्रीलालजी) अपने भक्तों से भी अधिक प्रीति एवं सब प्रकार से महान् प्रेम के वशीभूत होकर मेरा आलिंगन करते हैं तथा चुम्बन करते हैं; वे (श्रीलालजी) अपने मुख से चबाये गये पान को मेरे मुख में कब अर्पित करेंगे तथा अपनी वनमाला को भी मेरे कंठ में कब डालेंगे ?

लावण्यं परमाद्भुतं रतिकलाचातुर्यमत्यद्भुतम् कान्तिः कापि महाद्भुता वरतनोर्लीलागतिश्चाद्भुता ।
दृग्भङ्गी पुनरद्भुताद्भुततमा यस्याः स्मितं चाद्भुतम् सा राधाद्भुतमूर्तिरद्भुतरसं दास्यं कदा दास्यति ॥ ११८॥



परमाद्भुत लावण्य सुरति की,
कला चातुरी अति अद्भुत
अद्भुत तन की कांति नित्यनव,
लीलागति अतिशय अद्भुत
अद्भुत रसमय द्रगभृंगी-मृदु,
मधुर हास्य अद्भुत अद्भुत
अद्भुत मूर्तिमयी राधा,
कब रस सेवा देंगी अद्भुत
ll118ll

भावार्थ

जिनका लावण्य परम अद्भुत है, जिनकी रतिकला की चतुरता अत्यन्त अद्भुत है, जिनके कमनीय श्रीअंग की अनिर्वचनीय कान्ति महा अद्भुत है, जिनकी लीलापूर्ण चलने की गति अद्भुत है, जिनके नेत्रों की भंगिमायें अद्भुत से भी अद्भुततम हैं और जिनका मन्द मन्द्र रूप से हँसना अद्भुत है; वे अद्भुत मूर्त्ति श्रीराधा अपने अद्भुत रस से पूर्ण दास्य को मुझे कब प्रदान करेंगी ?

भ्रमद्भ्रुकुटिसुन्दरं स्फुरितचारुबिम्बाधरम् ग्रहे मधुरहुङ्कृतं प्रणयकेलिकोपाकुलम् ।
महारसिकमौलिना सभयकौतुकं वीक्षितम् स्मरामि तव राधिके रतिकलासुखं श्रीमुखम् ॥ ११९॥



भौंहें चपल चलित बिम्बाधर,
प्रणय कुपित हुंकार मधुरतर!
सभय सकौतुक जिसे देखते,
रसिक शिरोमणि तुम्हें भुजाभर
वह रति केलि कला सुखमय मुख,
श्रीराधे तब स्मरण हृदय हर
॥119॥

भावार्थ

हे श्रीराधिके ! मैं आपके रतिकला के सुख से पूर्ण उस शोभाशाली मुख का स्मरण करता/करती हूँ, जिसमें भृकुटियों का सुन्दर नृत्य हो रहा है, जिसमें बिम्ब फल जैसे सुन्दर अधर कम्पायमान हो रहे हैं, जो प्रियतम (श्रीलालजी) के द्वारा आपकी भुजाओं के पकड़े जाने पर हुंकार से पूर्ण है, जो प्रेम-केलि के कोप से आकुल हो रहा है और जिसे महा रसिक शिरोमणि (श्रीलालजी) के द्वारा भय और कौतुक के साथ देखा जा रहा है।

उन्मीलन्मुकुटच्छटापरिलसद्दिक्चक्रवालं स्फुरत् केयूराङ्गदहारकङ्कणघटानिर्धूतरत्नच्छवि ।
श्रोणीमण्डलकिङ्किणीकलरवं मञ्जीरमनुध्वनि – -श्रीमत्पादसरोरुहं भज मनो राधाभिधानं महः ॥१२०॥



जिसकी झिलमिल मुकुट छटा से,
उदभासित हे दिगमंडल
केयूरांगद हारवलय छवि,
देख रत्न हों उठे विकल
ललित नितम्ब किंकणी कलरव,
नूपुर ध्वनिमृदु चरण कमल
राधा नामक मधुर ज्योति का,
भजन करो हे मन चंचल
ll120ll

भावार्थ

हे मेरे मन ! तू श्रीराधा नामक उस ज्योति का स्मरण कर, जिसके प्रकाशमान मुकुट की चमक से समस्त दिशाऐं विशेष रूप से शोभायमान हो रही हैं, जो अपने चमकते हुए केयूर, अंगद, हार और कंकणों के समूह की छवि से रत्नों की छवि को भी मलिन कर रही है, जिसका नितम्ब प्रदेश किंकिणी के कलरव से युक्त है, जो मधुर ध्वनि वाले नूपुरों से समलंकृत है एवं जिसके शोभाशाली चरण कमल के समान कोमल हैं।

श्यामामण्डलमौलिमण्डनमणिः श्यामानुरागस्फुरद् रोमोद्भेदविभाविताकृतिरहो काश्मीरगौरच्छविः ।
सातीवोन्मदकामकेलितरला मां पातु मन्दस्मिता मन्दाद्रुमकुञ्जमन्दिरगता गोविन्दपट्टेश्वरी ॥१२१॥



नव तरुणी मंडल मंडनमणि,
श्याम प्रणय रस पुलकित तन
केसर गौर कांति अति विलसित,
केलि चपल मदमत्त मदन
चंद्रवदन मंदस्मित शोभित,
काम कल्पतरु कुंज सदन
श्रीगोविन्द पट्टमहिषी हों,
रक्षक मुझ शरणागत जन
ll121ll

भावार्थ

अहो ! जो समस्त तरुणियों (ललितादिक सखियों) की शिरोभूषण मणि स्वरूपा हैं, जो श्यामसुन्दर (श्रीलालजी) के प्रति अपने अनुराग के कारण प्रकट हुए रोमांच से विशिष्ट भावमयी आकृति वाली हैं, जो केशर के समान गौर कान्ति वाली हैं, जो अत्यन्त ही उन्मत्ततापूर्ण कामकेलि से चंचल बनी हुई हैं एवं जो मन्द-मन्द रूप से हँस रही हैं; वे कल्पतरु के निकुञ्ज मन्दिर में स्थित, गोविन्द (श्रीलालजी) के हृदय रूपी सिंहासन पर विराजमान रहने वाली 'हृदय की रानी' श्रीराधा मेरी रक्षा करें।

उपास्यचरणाम्बुजे व्रजभृतां किशोरीगणैर् – महद्भिरपि पूरुषैरपरिभाव्यभावोत्सवे ।
अगाधरसधामनि स्वपदपद्मसेवाविधौ विधेहि मधुरोज्ज्वलामिव कृतिं ममाधीश्वरि ॥ १२२॥



सब महत् पुरुष
जन मन अचिन्त्य,
भावोत्सव रसमय
मधूरोज्जवल
ब्रजबाला वृंद समाराधित,
स्वामिनी सेवा दो
चरण कमल
ll122ll

भावार्थ

व्रज की श्रेष्ठ किशोरियाँ (ललितादिक सखियाँ) जिनके चरण-कमलों की उपासना नित्य किया करती हैं, महत् जनों के लिये जो मानसी-भावना रूपी उत्सव के द्वारा भी अचिन्तनीय हैं; हे स्वामिनी ! अगाध रस के धाम, अपने उन चरण-कमलों की सेवाविधि में, मेरे लिये मधुर और उज्ज्वल रस से पूर्ण कर्त्तव्य का विधान कीजिये।

आनम्राननचन्द्रमीरितदृगापाङ्गच्छटामन्थरम् किञ्चिद् दर्शिशिरोवगुण्ठनपटं लीलाविलासावधिम् ।
उन्नीयालकमञ्जरीः कररुहैरालक्ष्य सन्नागर – स्याङ्केऽङ्गं तव राधिके सचकितालोकं कदा लोकये ॥ १२३॥



नवनागर मणि अंक सुविलसित,
नमित अमित छवि चंद्रवदन
नयन कटाक्ष छटा गति मंथर,
शिथिल अंग पट अवगुंठन
कर नख अलक निवारण कर,
लीला विलास सीमा सुखक्षण
देखूंगी कब श्री राधे वह,
सुरस चकित तब अवलोकन
ll123ll

भावार्थ

हे श्रीराधिके ! अपने निकट स्थित नागरवर (श्रीलालजी) के श्रीअंग में धारण किये आभूषणों में, अपने श्रीअंग का प्रतिबिम्ब देखकर, जब आपका मुख-चन्द्र लज्जावश कुछ झुक गया हो, आपके नेत्रों की चंचलता कुछ धीमी पड़ गयी हो (अर्थात् आप श्रीलालजी को अपलक दृष्टि से देख रहीं हों) एवं आपके सिर पर थोड़ा सा ही घूँघट रह गया हो; तब अपनी अँगुलियों से, लीलामय विलासों से पूर्ण आपकी अलकावली को ऊपर उठाकर, आपकी चकित भाव से पूर्ण चितवन को मैं कब देखूँगी ?

राकाचन्द्रो वराको यदनुपमरसानन्दकन्दाननेन्दोस् -तत्तादृक्चन्द्रिकाया अपि किमपि कलामात्रकस्याणुतोऽपि ।
यस्याः शोणाधरश्रीविधृतनवसुधामाधुरीसारसिन्धुः सा राधा कामबाधाविधुरमधुपतिप्राणदा प्रीयतां नः ॥१२४॥



मुख छवि समक्ष
अति तुच्छ चंद्र,
नव सुधासार
निधि मधुराधर
हों मधुपति व्यथित
काम बाधा,
राधा प्राणदा
सदय मुझ पर
ll124ll

भावार्थ

जिनका मुख रूपी चन्द्रमा अनुपम रसानन्द का मूल है, उसकी चाँदनी भीवैसी ही है, उस चाँदनी की किसी अनिर्वचनीय कला के लेश मात्र के एक अणु से भी शरद् पूर्णिमा का चन्द्रमा तुच्छ प्रतीत होता है, जिनके लाल-लाल अधरों की शोभा नवीन सुधा-माधुरी के सार-समुद्र को धारण किये हुए है; वे काम के ताप से व्याकुल मधुपति (श्रीलालजी) को जीवन दान देने वाली, श्रीराधा हम पर प्रसन्न हों।

राकानेकविचित्रचन्द्र उदितः प्रेमामृतज्योतिषाम् वीचीभिः परिपूरयेदगणितब्रह्माण्डकोटिं यदि ।
वृन्दारण्यनिकुञ्जसीमनि तदाभासः परं लक्ष्यते भावेनैव यदा तदैव तुलये राधे तव श्रीमुखम् ॥ १२५॥



हों कोटि पूर्णिमा चंद्र उदित,
लेकर प्रेमामृतमय प्रकाश
भर दें अनंत ब्रह्माण्डों को,
वे सुधा रश्मि से अनायास
पर वृन्दाविपिन निकुंज देश में,
जिस मुखश्री का है विलास
तुलना में तो होंगे सुसिद्ध,
वे चंद्रवृंद भी तदाभास
॥125॥

भावार्थ

हो सकता है कि अनेक विचित्रताओं से साथ उदित हुआ शरद् पूर्णिमा का चन्द्रमा, अपनी प्रेमामृतमयी प्रकाश की किरणों से, अनन्त व्रह्माण्ड की श्रेणियों को परिपूर्ण कर दे, किन्तु मानसी भावना के द्वारा ही, जब आपके शोभाशाली मुख रूपी चन्द्रमा की तुलना, उस विचित्र चन्द्रमा की से की जाय, तब वृन्दावन की निकुञ्जर्जी के भीतर, उसका केवल आभास मात्र ही दिखाई पड़ता है।

कालिन्दीकूलकल्पद्रुमतल निलयप्रोल्लसत्केलिकन्दा वृन्दाटव्यां सदैव प्रकटतररहोवल्लवीभावभव्या ।
भक्तानां हृत्सरोजे मधुररससुधास्यन्दिपादारविन्दा सान्द्रानन्दाकृतिर्नः स्फुरतु नवनवप्रेमलक्ष्मीरमन्दा ॥ १२६॥



कालिंदी कूल कल्पतरु तल,
जो है विलसित अति केलिकंद
वृन्दावन सदा प्रकट दर्शित,
वल्लभीभाव भव्या अनिन्द्य
भक्तों के हृदय सरोज मधुर,
रस सुधा स्यंदि पादारबिन्द
वे सान्द्रानन्द प्रेमलक्ष्मी,
हों स्फुरित हमारे उर अमंद
॥126॥

भावार्थ

जो श्रीयमुनाजी के तट पर कल्पवृक्ष के नीचे स्थित निकुञ्ज भवन में अत्यधिक रूप से उल्लासपूर्ण प्रेम-केलियों को करने वाली हैं, वृन्दावन में जिनका नित्य नवीन रूप से प्राकट्य होता रहता है, जो एकान्त गोपी भाव (श्रीराधा किंकरी भाव) से अति सुन्दर रूप से दर्शनीय बनी रहती हैं, जिनके चरण-कमल रसिक भक्तों के हृदय-कमल में मधुर रस सुधा का निर्झरण करते रहते हैं; वे घनीभूत आनन्द की मूर्त्ति एवं प्रतिक्षण नवीन प्रेम की नित्य एक रस प्रकाशित लक्ष्मी (श्रीप्रियाजी) हमारे हृदय में स्फ़ुरित हों।

शुद्धप्रेमैकलीलानिधिरहह महातङ्कमङ्कस्थिते च प्रेष्ठे बिभ्रत्यदभ्रस्फुरदतुलकृपास्नेहमाधुर्यमूर्तिः ।
प्राणालीकोटिनीराजितपदसुषमामाधुरी माधवेन श्रीराधामामगाधामृत रसभरिते कर्हि दास्येभिषिञ्चेत् ॥ १२७॥



परिशुद्ध प्रेम लीला की निधि,
हैं नित्य प्रेष्ठ के अंक स्थित
यह अति आश्चर्य तथापि देखिये,
प्रिय वियोग भय आतंकित
वे अतुल कृपा माधुरी स्नेहवपु,
श्याम प्राण प्रिय परिपूजित
श्रीराधा अमृताम्बुधि अगाध,
पद दास्य से करें अभिसिंचित
॥127॥

भावार्थ

जो कामना शून्य प्रेम की लीलाओं की एकमात्र निधि हैं, जो अपने प्रियतम (श्रीलालजी) की गोद में स्थित होते हुए भी, विच्छेद की कल्पना से, अत्यधिकभयभीत हैं, जो अत्यधिक रूप से प्रकट होती हुई अनुपम कृपा, स्नेह और माधुर्य की मूर्त्ति हैं, जिनके अति सुन्दर चरणों की माधुरी पर, माधव (श्रीलालजी) अपने प्राणों को अनन्तानन्त बार न्यौछावर किया करते हैं, वे श्रीराधा, अगाध अमृत से भरे अपने दास्य रस से, मुझे कब अभिषिक्त करेंगी ?

वृन्दारण्यनिकुञ्जसीमसु सदा स्वानङ्गरङ्गोत्सवैर् – माद्यन्त्यद्भुतमाधवाधरसुधामाध्वीकसंस्वादनैः ।
विविन्दप्री विद्यादुमखीवृन्दैरनालक्षिता दास्यं दास्यति मे कदा नु कृपया वृन्दावनाधीश्वरी ॥ १२८॥



स्वानंग रंग उत्सव रत जो,
श्री वृन्दारण्य निकुंज देश
श्रीमाधव अधर सूरा प्रमत्त,
गोविंद सखा दुर्गम अशेष
सब सखी समूह अनालक्षित,
अधिदैवी वृंदावन विशेष
अनुकम्पा कर मुझको देंगी,
क्या कभी दास्य रस में प्रवेश
ll128ll

भावार्थ

जो नित्य ही, श्रीवृंदावन के निकुंजों के भीतर, अपने अनंग के रंगोत्सव द्वारा, प्रीतम (श्रीलालजी) के अधरामृत के अद्भुत आसव का सम्यक् रूप से आस्वादन करके उन्मत्त हो रहीं हैं, जो गोविंद (श्रीलालजी) के प्रिय वर्ग (माता-पिता आदि स्नेही जन, सखागण, कान्तागण) से दुर्गम हैं तथा जो सखी से अलक्षित हैं; वे श्रीवृंदावनाधीश्वरी (श्रीप्रियाजी) कृपया मुझे अपना दास्य कब प्रदान करें?

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्रं

मल्लीदामनिबद्धचारुकबरं सिन्दूररेखोल्लसत् सीमन्तं नवरत्नचित्रतिलकं गण्डोल्लसत्कुण्डलम् ।
निष्कग्रीवमुदारहारमरुणं बिभ्रद्दुकूलं नवम् विद्युत्कोटिनिभं स्मरोत्सवमयं राधाख्यमीक्षे महः ॥१२९॥



मल्लिका माल सज्जित कबरी,
सिन्दूर शीश शोभायमान
नवरत्न तिलक कुण्डल कपोल,
कल कंठ हार दोलायमान
नूतन परिधान अरुण आभा,
शोभा अनंत विद्युत् समान
मदनोत्सवमय श्रीधाम सदा,
दर्शित राधा ज्योतिर्निधान
ll129ll

भावार्थ

जिसकी सुन्दर वेणी चमेली की मालाओं से गुँथी हुई है, जिसकी माँग सिन्दूर की रेखा से सुशोभित है, जिसके मस्तक पर नवीन रत्नों से चित्रित तिलक लगा हुआ है, जिसके कपोलों पर कुण्डल चमक रहे हैं, जिसके कण्ठ में स्वर्णजटित पदिक एवं जिसके वक्षस्थल पर लम्बा हार पड़ा हुआ है, जिसने लाल रंग के नवीन वस्त्र धारण किये हुए हैं एवं जिसकी कान्ति करोड़ों बिजलियों के समान है; उस कामोत्सव परायण श्रीराधा नामक तेज का मैं दर्शन करती हूँ।

प्रेमोल्लासैकसीमा परमरसचमत्कारवैचित्र्यसीमा सौन्दर्यस्यैकसीमा किमपि नववयोरूपलावण्यसीमा ।
लीलामाधुर्यसीमा निजपरमदार्यवात् सलासीमा सा राधा सौख्यसीमा जयति रतिकलाकेलिमाधुर्यसीमा ॥१३०॥



उल्लसित प्रणय रस की सीमा,
उज्जवल रस चमत्कार सीमा
नववय लावण्य रूप सीमा,
अभिनव सौंदर्य सार सीमा
लीला माधुर्य चरम सीमा,
जन वत्सल अति उदार सीमा
रति केलि माधुरी की सीमा,
सर्वोपरि सुख अपार सीमा
ll130ll

भावार्थ

जो प्रेम के उल्लास की एकमात्र सीमा हैं, जो अद्भुत चमत्कार पूर्ण परात्पर रस की सीमा हैं, जो सौन्दर्य की एकमात्र सीमा हैं, जो किसी अनिर्वचनीय नित्य नवीन रहने वाली वय, रूप और लावण्य की सीमा हैं, जो माधुर्यमयी लीलाओं की सीमाहैं, जो अपने आश्रितजनों के लिये परम उदारतापूर्ण वात्सल्य भाव की सीमा हैं, जो सुख की सीमा हैं और जो रति की कलापूर्ण केलियों के माधुर्य की सीमा हैं; वे श्रीराधा सर्वोत्कृष्ट रूप से विराजमान हैं, उनकी जय हो।

यस्यास्तत्सुकुमारसुन्दरपदोन्मीलन्नखेन्दुच्छटा लावण्यैकलवोपजीविसकलश्यामामणीमण्डलम् ।
शुद्धप्रेमविलासमूर्तिरधिकोन्मीलन्महामाधुरी धारासारधुरीणकेलिविभवा सा राधिका मे गतिः ॥ १३१ ॥



जिनके पद नख
मणि छटालेश,
जीवी बृज नव
तरुणी मंडल
वे शुद्ध प्रणय
रस केलिमयी,
श्रीराधा मुझ
निर्बल की बल
॥131॥

भावार्थ

जिनके उन कोमल और सुन्दर चरणों के प्रकाशमान नख रूपी चन्द्रमाओं की छटा के लावण्य के अत्यन्त छोटे से कण से ही, समस्त श्यामामणिमण्डल (सखी परिकर) जीवन प्राप्त करता है, जो प्रेम के विलासों की मूर्त्ति हैं, जो अधिकाधिक रूप से प्रस्फुटित होती हुई महा माधुर्य की धारा के सार की आधारभूता हैं;
वे केलि के वैभव से युक्त श्रीराधिका मेरी गति हैं।

कलिन्दगिरिनन्दिनीसलिलबिन्दुसन्दोहभृन् मृदूगतिरतिश्रमं मिथुनमद्भुतक्रीडया ।
अमन्दरसतुन्दिल भ्रमरवृन्दवृन्दाटवी –निकुञ्जवरमन्दिरे किमपि सुन्दरं नन्दति ॥१३२॥



कालिंदी कूल
कुंज मंदिर,
मदमत्त भ्रमर
गुंजन मुखरित
रतिश्रम हर सलिल
बिंदु सज्जित,
हैं युग्म एक
अति आनंदित
॥132॥

भावार्थ

भ्रमर समूह से घिरे हुए, वृन्दावनस्थ श्रेष्ठ निकुञ्ज मन्दिर में, कोई अनिर्वचनीय सुन्दर युगल अद्भुत प्रेम-रस-क्रीड़ाओं के द्वारा आनन्दित हो रहे हैं। अत्यधिक मात्रा में रस-पान करने के कारण, वे अति रस-पुष्ट दिखाई पड़ रहे हैं। रति-क्रीड़ाओं में हुए श्रम के कारण, उनके मुख पर पसीने की कुछ बूँदें झलक रही हैं, जिनके निवारण के लिये उन्होंने अपने मुख पर श्रीयमुनाजी के जल के छींटें लगाये हुए हैं।

व्याकोशेन्दीवरविकसितामन्दहेमारविन्द श्रीमन्निस्यन्दनरतिरसान्दोलिकन्दर्पकेलि ।
वृन्दारण्ये नवरससुधास्यन्दिपादारविन्दम् ज्योतिर्द्वन्द्वं किमपि परमानन्दकन्दं चकास्ति ॥ १३३॥



विकसित इंदीवर
स्वर्ण कमल,
छवि सुरस केलि
आंदोलित तन
पद सुधा श्रवित
आनंद कंद,
युग ज्योति जयति
श्रीवृंदावन
।।133।।

भावार्थ

जो खिले हुए नील कमल और पूर्ण विकसित स्वर्ण कमल की शोभा से सम्पन्न हैं, जिनके हृदयों में प्रवाहित होने वाला प्रेम-रस चेतनावस्था में आकर काम की केलियों के रूप में दिखाई पड़ रहा है, जिनके चरण-कमल नव रस सुधा का निर्झरण करते रहते हैं एवं जो कोई अनिर्वचनीय परमानन्द की मूल है; ऐसी युगल ज्योति वृन्दावन में चमत्कार को प्राप्त हो रही है।

ताम्बूलं क्वचिदर्पयामि चरणौ संवाहयामि क्वचिन् मालाद्यैः परिमण्डये क्वचिदहो संवीजयामि क्वचित् ।
कर्पूरादिसुवासितं क्व च पुनः सुस्वादु चाम्भोमृतम् पायाम्येव गृहे कदा खलु भजे श्रीराधिकामाधवौ ॥१३४॥



मुख अर्पण कर ताम्बूल कभी,
सुकुमार चरण युग संवाहन
नव कुसुम माल से मंडित कर,
सानंद करूँगी कभी व्यंजन
कर्पूर सुवासित कभी पिलाऊँगी,
जल में लेकर रूचि मन
इस भांति कभी राधामाधव की,
सेवा मिले निकुंज भवन
॥134॥

भावार्थ

अहा हा ! कभी मैं पान की बीरी अर्पित करूँगी, कभी श्रीचरणों को पलोटूँगी, कभी माला आदि भूषणों से श्रृंगार करूँगी, कभी पंखे से हवा करूँगी और कभी कर्पूर आदि से सुवासित एवं अमृत की तरह स्वादिष्ट जल का पान कराऊँगी; इस प्रकार से मैं केलि भवन में ही श्रीराधा-माधव (श्रीप्रियाजी-श्रीलालजी) की सेवा कब करूँगी ?

प्रत्यङ्गोच्छलदुज्ज्वलामृतरसप्रेमैकपूर्णाम्बुधिर् -लावण्यैकसुधानिधिः पुरुकृपावात्सल्यसाराम्बुधिः ।
तारुण्यप्रथमप्रवेशविलसन्माधुर्यसाम्राज्यभूर -गुप्तः कोऽपि महानिधिर्विजयते राधारसैकावधिः ॥१३५॥



प्रति अंग उच्छलित उज्जवल रस,
पीयूष प्रणय शोभा सागर
लावण्य सुधानिधि अनुकम्पा,
वात्सल्य सार महिमा सागर
तारुण्य प्रवेश समय विलसित,
माधुर्य भूमि साम्राज्य शिखर
श्रीराधा नामक गुप्त महानिधि,
जयति सुजन जीवन रसभर
॥135॥

भावार्थ

जिसके प्रत्येक अंग से उज्ज्वल एवं अमृतमय प्रेम-रस का एक अद्वितीय सागर उच्छलित होता रहता है, जो सौन्दर्य का एकमात्र सुधा-सागर है, जो मुकुलित वय नव किशोरावस्था अर्थात् उदीयमान किशोरावस्था के विलासों के माधुर्य के साम्राज्य की भूमि है तथा जो रस की एकमात्र सीमा है; ऐसी कोई अनिर्वचनीय श्रीराधा नामक गुप्त महानिधि सर्वोत्कृष्ट रूप से विराजमान है।

यस्याः स्फूर्जत्पदनख मणिज्योतिरेकच्छटायाः सान्द्रप्रेमामृतरसमहासिन्धुकोटिर्विलासः ।
सा चेद् राधा रचयति कृपादृष्टिपातं कदाचिन् मुक्तिस्तुच्छीभवति बहुशः प्राकृताप्राकृतश्रीः ॥१३६॥



सान्द्रप्रेम अमृत
रसनिधि पद,
नखमणि ज्योति
छटा विलास
यदि कृपा कटाक्ष
करें राधा,
हों मुक्ति भुक्ति
सब तुच्छ घास
॥136॥

भावार्थ

जिनके चरणों के नखों रूपी चमकती हुई मणियों की ज्योति की एक छटा का विलास, सघन प्रेमामृत के करोड़ों महासागर के समान है; वे श्रीराधा यदि कभी मुझ पर अपनी कृपापूर्ण दृष्टि डाल दें, तो मुक्ति एवं अनेक प्रकार की लौकिक तथा अलौकिक सम्पत्तियाँ मेरे लिये नगण्य हो जायेंगी।

कदा वृन्दारण्ये मधुरमधुरानन्दरसदे प्रियेश्वर्याः केलीभवननवकुञ्जानि मृगये ।
कदा श्रीराधायाः पदकमलमाध्वीकलहरी – परीवाहैश्चेतो मधुकरमधीरं मदयिता ॥१३७॥



कब मधुर मधुर आनंद रसप्रद,
जाकर मैं श्री वृन्दावन
नव नव कुंजों में ढूँढूँगी,
स्वामिनी प्रिया का कुंज भवन
राधा पद पंकज मदिर सुधा,
लहिरी का कर अपूर्व सेवन
होगा क्या पान प्रमत्त कभी,
अतिशय चंचल मेरा अलि मन
ll137ll

भावार्थ

मधुर से भी मधुर आनन्द से पूर्ण रस को देने वाले श्रीवृन्दावन में, अपनी प्रिय स्वामिनी (श्रीप्रियाजी) के केलि-मन्दिर की नित्य नव कुञ्जों की खोज, मैं कब करूँगी ? तथा श्रीराधिकाजी के चरण-कमलों की उन्मादक मकरन्द लहरी के प्रवाह से, मैं अपने चंचल चित्त रूपी भ्रमर को कब उन्मत्त बना दूँगी ?

राधाकेलिनिकुञ्जवीथिषु चरन् राधाभिधामुच्चरन् राधाया अनुरूपमेव परमं धर्मं रसेनाचरन् ।
राधायाश्चरणाम्बुजं परिचरन् नानोपचारैर्मुदा कर्हि स्यां श्रुतिशेखरोपरि चरन्नाश्चर्यचर्या चरन् ॥१३८॥



राधा राधा उच्चारण युत,
राधाकेलि निकुंज भ्रमण
राधा के अनुरूप धर्म के,
आश्रित हो मेरा जीवन
नानाविधि उपचार सहित,
श्रीराधा पद पंकज अर्चन
श्रुतिशेखर आश्चर्मयी,
रसचर्या सहित बसूँ श्रीवन
॥138॥

भावार्थ

श्रीराधिकाजी की केलि-निकुञ्जों की गलियों में घूमते हुए, श्रीराधा नाम का उच्चारण करते हुए, श्रीराधा के अनुरूप ही अपने परम धर्म (श्रीहित धर्म) का प्रेम पूर्वक आचरण करते हुए, श्रीराधा के चरण-कमलों की विविध उपचारों के माध्यम से आनन्दपूर्वक सेवा करते हुए तथा आश्चर्य चकित कर देने वाले आचरणों को करते हुए, मैं वैदातीत पथ का आचरण करने वाला कब बनूँगा ?

यातायातशतेन सङ्गमितयोरन्योन्यवक्रोल्लसच् चन्द्रालोकनसम्प्रभूतबहुलानङ्गाम्बुधिक्षोभयोः ।
अन्तःकुञ्जकुटीरतल्पगतयोर्दिव्याद्भुतक्रीडयोः राधामाधवयोः कदा नु शृणुयां मञ्जीरकाञ्चीध्वनिम् ॥१३९॥



नव संगम उल्लसित परस्पर,
श्रीमुख विधु कर अवलोकन
अंग अंग जागृत उमंग,
अंबुधि अद्भुत रस संजीवन
अंतःकुंज कुटीर तल्पगत,
क्रीड़ारत आंदोलित तन
कब राधामाधव काँची नूपुर,
ध्वनि होगी सुलभ श्रवण
॥139॥

भावार्थ

मेरे द्वारा दोनों के पास सैकड़ों बार आने और जाने से जिनका मिलन सम्भव हुआ है, एक दूसरे के उल्लास से पूर्ण मुख रूपी चन्द्रमाओं के देखने से जिनके हृदयों में अत्यन्त तीव्र काम के समुद्र उफन रहे हैं; ऐसे श्रीराधा-माधव (श्रीप्रियाजी-श्रीलालजी) एकान्त कुञ्ज के भीतरी भाग में, सुन्दर शैया पर विराजित होकर, दिव्य और अद्भुत क्रीड़ा कर रहे हैं। मैं उनके नूपुर एवं किंकिणी की ध्वनि को कब सुनूँगी ?

अहो भुवनमोहनं मधुरमाधवीमण्डपे मधूत्सवसमुत्सुकं किमपि नीलपीतच्छवि ।
विदग्धमिथुनं मिथोदृढतरानुरागोल्लसन् मदं मदयते कदा चिरतरं मदीयं मनः ॥ १४०॥



मधु उत्सव उत्सुक
नीलपीत छवि,
कोई युगल
भुवन मोहन
अनुराग उल्लसित
अति विदग्ध,
कब मुग्ध करेंगे
मेरा मन
ll140ll

भावार्थ

अहो ! सुन्दर मालती लता के मण्डप में, वसन्तोत्सव अथवा विवाहोत्सव के लिये अत्यन्त उत्सुक, एक दूसरे के प्रति अत्यन्त प्रगाढ़ अनुराग के उल्लास के मद से उन्मत्त, तीनों लोकों को मोहित करने वाले, नीली एवं पीली कान्ति से युक्त, कोई अनिर्वचनीय कुशल युगल (श्रीप्रियाजी- श्रीलालजी) मेरे मन को अधिकाधिक रूप से कब प्रमत्त करेंगे ?

राधानामसुधारसं रसयितुं जिह्वास्तु मे विह्वला पादौ तत्पदकाङ्क्षितासु चरतां वृन्दाटवीवीथिषु ।
तत्कर्मैव करः करोतु हृदयं तस्याः पदं ध्यायतात् तद्भावोत्सवतः परं भवतु मे तत्प्राणनाथे रतिः ॥ १४१॥



राधा नाम सुधा रस विहवल,
रसना करे तृषातुर पान
राधापद अंकित वृन्दावन,
वीथी में पद हों गतिमान
राधा के कैंकर्य निरत कर,
हृदय रहे राधा पद ध्यान
भावोल्लास सहित राधा के,
प्रियतम में मन हो रतिवान
ll141ll

भावार्थ

मेरी जिह्वा श्रीराधा नाम के अमृत से पूर्ण रस के आस्वादन के लिये व्याकुल बनी रहे, मेरे चरण उनके चरणों से अंकित वृन्दावन की गलियों में चलते रहें, मेरे हाथ उनकी सेवा में लगे रहें, मेरा हृदय उनके श्रीचरणों का ध्यान करता रहे तथा उनके प्राणनाथ (श्रीलालजी) में मेरी प्रीति, केवल इस भाव रूपी उत्सव के साथ ही हो कि जिस प्रकार मेरी प्राणनाथ श्रीश्यामा (श्रीप्रियाजी) हैं, ठीक उसी प्रकार श्रीप्रियाजी के प्राणनाथ श्रीलालजी हैं।

मन्दीकृत्य मुकुन्दसुन्दरपदद्वन्द्वारविन्दामल – प्रेमानन्दममन्दमिन्दुतिलकाद्युन्मादकन्दं परम् ।
राधाकेलिकथारसाम्बुधिचलद्वीचीभिरान्दोलितम् वृन्दारण्यनिकुञ्जमन्दिरवरालिन्दे मनो नन्दतु ॥ १४२॥



प्रेमानंद अमंद इंदु शेखर,
वन्दित उर उन्मादित
मंदीकृत मुकुंद सुन्दर,
पादारबिन्द की प्रभा अमित
राधा केलि कथा रसनिधि,
अद्भुत लहरी से आंदोलित
वृन्दावन निकुंज मंदिर में,
मेरा मन हो आनंदित
ll142ll

भावार्थ

श्रीशिवजी आदि को अत्यधिक रूप से उन्मादित करने वाले, मुकुंद (श्रीलालजी) के दोनों चरण-कमलों के निर्मल एवं तीव्र प्रेमानंद को भी गौण अनुभव करते हुए, श्रीराधा-केली-कथा रूपी रस के सागर की चंचल तरंगों से आनंदित मेरा मन, वृंदावन के निकुंज मंदिर के श्रेष्ठ आँगन में आनंद का अनुभव प्राप्त करता रहता है।

राधानामैव कार्यं ह्यनुदिनमिलितं साधनाधीशकोटिस् -त्याज्यो नीराज्य राधापदकमलसुधासत्पुमर्थाग्रकोटिः ।
राधापादाब्जलीलाभुवि जयति सदा मन्दमन्दारकोटिः श्रीराधाकिङ्करीणां लुठतिचरणयोरद्भुता सिद्धिकोटिः ॥१४३॥



त्यज कोटि कोटि साधनाधीश,
भजनीय सदा राधिका नाम
राधा पद कमल सुधारस पर,
न्यौछावर सब पुरुषार्थ ग्राम
शतकोटि कल्पतरु तुच्छ करें,
श्रीराधा पद लीला ललाम
राधा किंकणी चरण लुंठित है,
सकल सिद्धियां अष्टयाम
ll143ll

भावार्थ

श्रीराधा के नाम को ही निरन्तर सुनने, जपने, गाने, स्मरण करने, चिन्तन-मनन करने जैसे कार्यों को करते रहने से, निश्चित रूप से करोड़ों श्रेष्ठतम साधन भी छोड़ देने योग्य हो जाते हैं तथा श्रीराधा के चरण-कमलों के अमृत पर, करोड़ों श्रेष्ठ पुरुषार्थ भी न्यौछावर करने योग्य हैं; क्योंकि श्रीराधा चरण-कमलों की लीलाभूमि वृन्दावन में, करोड़ों दिव्य कल्पवृक्ष सदा सर्वोत्कृष्ट रूप से विराजमान रहते हैं तथा श्रीराधा की किंकिरीगणों के चरणों में, करोड़ों अद्भुत सिद्धियाँ लोटती रहती हैं।

मिथोभङ्गीकोटिप्रवहदनुरागामृतरसो – त्तरङ्गभङ्गक्षुभितबहिरभ्यन्तरमहो ।
मदाघूर्णन्नेत्रं रचयति विचित्रं रतिकला – विलासंतत्कुञ्जे जयति नवकैशोरमिथुनम् ॥ १४४॥



भ्रूभ्रंग क्षुभित
बाह्याभ्यंतर,
मद घूर्णित नयन
कटाक्ष चपल
नव नव निकुंज
कल केलि कुशल,
वृन्दावन जयति
किशोर युगल
ll144ll

भावार्थ

अहो ! एक दूसरे से किये जा रहे कोटि-कोटि हाव-भावों से, एक दूसरे के प्रति हृदय में प्रवाहित होने वाले अनुराग रूपी अमृत से तथा तरंगायित भौहों के परिचालन से जिन दोनों के बहिरंग और अंतरंग अतिशय चंचल हो रहे हैं एवं जिनके नेत्र मद से घूम रहे हैं; ऐसे नवीन किशोरावस्था से सम्पन्न युगल (श्रीप्रियाजी-श्रीलालजी) निकुञ्ज में रति की कलाओं के अद्भुत विलासों की रचना कर रहे हैं, उनकी जय हो।

काचिद् वृन्दावननवलतामन्दिरे नन्दसूनोर् – -दृप्यद्दोष्कन्दलदृढपरीरम्भनिस्पन्दगात्री ।
दिव्यानन्ताद्भुतरसकलाः कल्पयन्त्याविरास्ते सान्द्रानन्दामृतरसघनप्रेममूर्तिः किशोरी ॥ १४५॥



वृन्दावन नव
निकुंज मंदिर,
श्री नंदलाल
आलिंगित तन
है नवल किशोरी
प्रेममूर्ति,
कोई आनंद
सुधारस घन
ll145ll

भावार्थ

सघन आनंदमय एवं अमृतमय रस तथाघनीभूत प्रेम की मूर्ति, दिव्य एवं अद्भुत रस से पूर्ण अनंत कलाओं की सृष्टि हुई, नंदनंदन (श्रीलालजी) की गर्वीली भुजाओं के प्रगाढ़ आलिंगन से निश्चेष्ट अंगों वाली, कोई अनिर्वचनीय किशोरी (श्रीप्रियाजी), श्रीवृंदावन के नवीन लता मंदिर में शोभायमान है।

न जानीते लोकं न च निगमजातं कुलपरं – परां वा नो जानात्यहह न सतां चापि चरितम् ।
रसं राधायामाभजति किल भावं व्रजमणौ रहस्ये तद् यस्य स्थितिरपि न साधारणगतिः ॥ १४६ ॥



जो नहीं जानता
लोक वेद,
कुल परम्परा
आचरण सुजन
रत राधा ब्रज मणि
भाव भजन,
क्या उसकी गति है
साधारण
ll146ll

भावार्थ

अहा हा ! जो निश्चित रूप से श्रीराधा में रस की स्थिति मानकर एवं व्रजमणि (श्रीलालजी) में श्रीराधा के प्राणनाथ होने का भाव रखते हुए, उनका भजन करता है; वह न तो इस लोक को, न वेदों को और न अपने कुल की परम्परा को ही जानता है, वह साधुजनों के लिये करने योग्य आचरणों को भी नहीं जानता है। जिसकी इस रहस्य में स्थिति होती है, वह भी सामान्य जनों जैसे आचरण न कर असाधारण गति वाला ही होता है।

ब्रह्मानन्दैकवादाः कतिचन भगवद्वन्दनानन्दमत्ताः केचिद् गोविन्दसख्याद्यनुपमपरमानन्दमन्ये स्वदन्ते ।
श्रीराधाकिङ्करीणां त्वखिलसुखचमत्कारसारैकसीमा तत्पादाम्भोजराजन्नखमणिविलसज्ज्योतिरेकच्छटापि ॥१४७॥



कोई ब्रह्मानंदी कोई,
भगवद वंदन आनंद मगन
कोई गोविन्द सख्य स्वादि,
कोई वत्सल रस आस्वादन
पर अखिलानंद सार सीमा,
श्रीराधा पादांबुज रसघन
नख मणि की एक छटा ऊपर,
न्यौछावर प्रिया किंकरीगण
ll147ll

भावार्थ

कोई तो केवल ब्रह्मानंदवादी हैं (अर्थात एकमात्र निर्गुण निराकार ब्रह्म की आराधना में लगे हैं), तो कोई भगवान की वंदन-भक्ति से प्राप्त आनंद में ही हैंमत्त हैं (अर्थात सगुण साकार भगवान की अर्चन-वंदन- दास्य आदि नवधा भक्ति के माध्यम से की गई पूजा से प्राप्त आनंद में ही संलग्न हैं), तो और कोई गोविंद का सख्य आदि भावों से भजन करके अनुपम परमानंद का आस्वादन करते हैं। अर्थात श्रीकृष्ण की वात्सल्य भाव , सखा भाव , गोपी भाव द्वारा की जाने वाली प्रेम लक्षणा भक्ति के माध्यम से सप्राप्त अनुपम परमानन्द में ही प्रमत्त हैं| किन्तु श्रीराधा की दासियों के लिए तो उनके चरण कमलों की प्रकाशमान नख मणियों से उल्लसित ज्योति की एक किरण मात्र ही संपूर्ण आनंद के चमत्कार के सार की एकमात्र सीमा है।है (अर्थात श्रीराधा की दासियों के लिए राधा-दास्य ही चमत्कार प्राण आनंद वाले अद्भुतानंद मूलक 'रस' का प्रदायक है)।

न देवैर्ब्रह्माद्यैर्न खलु हरिभक्तैर्न सुहृदा – दिभिर्यद् वै राधामधुपतिरहस्यं सुविदितम् ।
तयोर्दासीभूत्वा तदुपचितकेलीरसमये दुरन्ताः प्रत्याशा हर हर दृशोर्गोचरयितुम् ॥ १४८॥



ब्रह्मादि देव हरि
भक्त सुहृद,
राधामाधव रहस्य
अविदित
उनकी क्रीड़ा
दासी होकर,
मैं चली देखने
विधि वंचित
ll148ll

भावार्थ

निश्चय ही, जिन श्रीराधा और मधुपति (श्रीलालजी) के रहस्य को न ब्रह्माजी आदि देवताओं ने, न हरि (श्रीलालजी) के भक्तों ने और न उनके सुहृदों (माता-पिता आदि परिवारी जनों, सखाओं, गोपिकाओं, कान्ताओं आदि) ने ही अच्छी तरह से जाना है; उनकी दासी होकर, उनकी नित्य वर्द्धमान केलि को, असमय में भी अपने नेत्रों से देखने की, मैंने अनन्त दुर्लभ आशायें लगा रखी हैं।

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्र

त्वयि श्यामे नित्यप्रणयिनि विदग्धे रसनिधौ प्रिये भूयो भूयः सुदृढमतिरागो भवतु मे ।
इति प्रेष्ठेनोक्ता रमण मम चित्ते तव वचो वदन्तीति स्मेरा मम मनसि राधा विलसतु ॥ १४९॥



है श्यामे, नित्य प्रिये सूजान,
रस की निधान मम जीवनधन
तेरा क्षण प्रतिक्षण वर्द्धमान,
दृढ़ अनुरागी हो मेरा मन
है यही बात मेरे मन भी,
है सुन्दर वरप्रिय रसिक रमण
सस्मित मुख इस प्रकार कहती,
विलसे राधा मम हृदय सदन
ll149ll

भावार्थ

"हे श्यामे ! हे नित्य प्रेम करने वाली नागरी ! हे रस की सागर स्वरूपा प्रिये ! आप में मेरा निरन्तर न्या-नया एवं अत्यन्त सुदृढ़ अनुराग हो" - प्रीतम (श्रीलालजी) के द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर, श्रीप्रियाजी ने प्रत्युत्तर में कहा- "हे रमण ! मेरे हृदय में भी आपके प्रति आपके द्वारा कहे गये उक्त वचन ही हैं"। मन्द मन्द हास्य के साथ, इस प्रकार कहती हुई श्रीराधा मेरे मन में विलास करें।

सदानन्दं वृन्दावननवलतामन्दिरवरेष्व् – अमन्दैः कन्दर्पोन्मदरतिकलाकौतुकरसम् ।
किशोरं तज्ज्योतिर्युगलमतिघोरं मम भव – ज्वलज्ज्वालं शीतैः स्वपदमकरन्दैः शमयतु ॥ १५०॥



अति सुन्दर नवल लतामंदिर में,
सदा नंदमय वृन्दावन
उन्मद कंदर्प केलि कौतुक रत,
नवकिशोर युग ज्योति सदन
दुस्सह अति घोर जगज्वाला से,
दग्ध प्रायः मेरा जीवन
निज चरण कमल मकरंद दान कर,
भव आतप का करें शमन
ll150ll

भावार्थ

आनन्द के नित्य धाम श्रीवृन्दावन में, नवीन लताओं द्वारा बनाये गये सुन्दर मन्दिर में, काम के मद से उन्मत्त, रात की कलाओं के चमत्कार पूर्ण प्रदर्शन से रसस्वरूप दिखाई पडने वाली एवं किशोर वय वाली वह युगल ज्योति, अपने चरण-कमलों के अत्यन्त शीतल मकरन्द से, अत्यधिक भयानक रूप से प्रज्ज्वलित अग्नि के समान, मेरे आवागमनमय संसार चक्र को शान्त करे।

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्रं

उन्मीलन्नवमल्लिदामविलसद्धम्मिल्लभारे बृहच् -छोणीमण्डलमेखलाकलरवे शिञ्जत्सुमञ्जीरिणि ।
केयूराङ्गदकङ्कणावलिलसद्दोर्वल्लिदीप्तिच्छटे हेमाम्भोरुहकुङ्गलस्तनि कदा राधे दृशा पीयसे ॥ १५१ ॥



मल्लिका माल मंडित कुंतल,
किंकिणी ध्वनित श्रोणि मंडल
कंकण केयूर विभूषित कर,
मणि नूपुर मुखरित चरण कमल
नव कुच युग की शोभा असीम,
जैसे हों स्वर्ण कमल कुड्मल
यह रूप सुधा पीकर मेरे,
कब तृषित नयन होंगे शीतल
ll151ll

भावार्थ

केशपाश में नवीन खिलती हुई चमेली के पुष्पों की माला, भारी नितम्ब प्रदेश पर मधुर ध्वनि उत्पन्न करने वाली किंकिणी, चरणों में बजते हुए सुन्दर नूपुर एवं भुजाओं में चमकते हुए बाजूबन्द, अंगद तथा कंकणों को धारण करने वाली और सोने की कमल की कलियों के समान उरोजों वाली, हे श्रीराधे !
आपके ऐसे रूप-रस का पान, मैं अपने नेत्रों से कब करूँगी ?

अमर्यादोन्मीलत्सुरतरसपीयूषजलधेः तरङ्गैरुत्तुङ्गैरिव किमपि दोलायिततनुः ।
स्फुरन्ती प्रेयोङ्के स्फुटकनकपङ्केरुहमुखी सखीनां नो राधे नयनसुखमाधास्यसि कदा ॥ १५२॥



उल्लसित असीम
सुरत अंबुधि,
प्रति अंग सुधा
आंदोलित तन
प्रिय अंक चपल मुख
कनक कमल,
राधे तब अलिगण
तृषित नयन
॥152॥

भावार्थ

मर्यादाओं को तोड़कर, उमड़ते हुए सुरत-रस रूपी अमृत के सागर को अत्यन्त ऊँची तरंगों की तरह आन्दोलित, अपने अमृतमय अंगों से अनिर्वचनीय वपु वाली, प्रियतम (श्रीलालजी) की गोद में चमकती-दमकती हुई एवं खिले हुए सोने के कमल के समान मुख वाली, हे श्रीराधे ! आप हम सब सखियों के नेत्रों को कब सुख प्रदान करोगी ?

क्षरन्तीव प्रत्यक्षरमनुपमप्रेमजलधिम् सुधाधारावृष्टीरिव विदधती श्रोत्रपुटयोः ।
रसार्द्रा सन्मृद्धी परमसुखदा शीतलतरा भवित्री किं राधे तव सह मया कापि सुकथा ॥१५३॥



प्रति अक्षर क्षरित
प्रेमरस निधि,
ज्यों सुधा वृष्टि
हो रही श्रवण
अति मधुर मृदुल
होगा मुझसे,
क्या कभी तुम्हारा
संभाषण
॥153॥

भावार्थ

जिसके अक्षर-अक्षर से प्रेम के समुद्र का निर्झरण हो रहा हो, जो कानों में अमृत की धारा की वर्षा कर रही हो और जो रस से पूर्ण, अत्यन्त कोमल, परम सुखदायिनी एवं परम शीतल हो; हे श्रीराधे ! मेरे साथ आपको कोई अनिर्वचनीय सुन्दर रस-चर्चा, क्या कभी होगी ?

अनुल्लिख्यानन्तानपि सदपराधान् मधुपतिर् – महाप्रेमाविष्टस्तव परमदेयं विमृशति ।
तवैकं श्रीराधे गृणत इह नामामृतरसम् महिम्नः कः सीमां स्पृशति तव दास्यैकमनसाम् ॥ १५४॥



केवल तब नामामृत रस का,
यदि कोई करता सदापान
उसके अनंत महदपराधों को,
करते क्षमा क्षमानिधान
इसको क्या उचित देय होगा,
करते विमर्श श्रीहरि सुजान
तब दास्य लालसांवित जन की,
महिमा का राधे किसे ज्ञान
ll154ll

भावार्थ

हे श्रीराधे ! आपसे अत्यधिक मात्रा में किये जाने वाले प्रेम के आवेश से भरे हुए मधुपति (श्रीलालजी), जब आपके इस अमृतमय एवं रसमय नाम का एकमात्र आश्रय ग्रहण करने वाले व्यक्ति के, अनन्त महत् अपराधों का विचार न करते हुए, उसे सर्वोत्कृष्ट वस्तु देने का विचार करते हैं; तो फिर जिनके मन में एकमात्र आपके दास्य की ही कामना है, उनकी महिमा-सीमा का स्पर्श कौन कर सकता है, अर्थात् उनकी महिमा कौन जान सकता है।

लुलितनवलवङ्गोदारकर्पूरपूरम् प्रियतममुखचन्द्रोद्गीर्णताम्बूलखण्डम् ।
घनपुलककपोला स्वादयन्ती मदास्ये – -र्पयतु किमपि दासीवत्सला कर्हि राधा ॥ १५५॥



प्रियतम चर्वित
ताम्बूल खंड,
कर्पूर लवंग
सहित स्वादन
पुलकित कपोल
दासी वत्सल,
राधा कब देंगी
निज चर्वण
ll155ll

भावार्थ

प्रियतम (श्रीलालजी) के चन्द्र जैसे मुख के, नवीन लौंग के चूर्ण एवं सुखद कर्पूर से युक्त पान के टुकड़े को, अपने मुख में लेकर, उसका आस्वाद लेते हुए, अतिशय रोमांच से भरे हुए कपोलों वाली एवं अपनी दासियों पर अनिर्वचनीय वात्सल्य रखने वाली श्रीराधा, क्या कभी उस पान को मेरे मुख में डालेंगी ?

सौन्दर्यामृतराशिरद्भुतमहालावण्यलीलाकला कालिन्दीवरवीचिडम्बरपरिस्फूर्जत्कटाक्षच्छविः ।
सा कापि स्मरकेलिकोमलकलावैचित्र्यकोटिस्फुरत् प्रेमानन्दघनाकृतिर्दिशतु मे दास्यं किशोरीमणिः ॥१५६॥



अद्भुत सौंदर्य सुधानिधी सी,
लावण्य ललित लीला निधान
जिनकी कटाक्ष छवि कालिंदी की,
विस्तृत लहरों के समान
अति अनुपम कामकेलियों की,
जो कोमल कोटि कला सुजान
वे सुललित नवल किशोरी मणि,
अब अपना दास्य करें प्रदान
॥156॥

भावार्थ

जो सौन्दर्य रूपी अमृत की राशि हैं, जो अत्यन्त अद्भुत एवं लावण्यमयी लीलाओं की कला रूपा हैं, जिनके कटाक्षों की शोभा श्रीयमुनाजी की चंचल तरंगों की विशाल शोभा से भी अधिक चमत्कार पूर्ण है, जो काम-केलि की कोमल कलाओं में करोड़ों विचित्रताओं का विकास करने वाली हैं, जो सघन प्रेमानन्द की मूर्ति हैं; वे कोई अनिर्वचनीया किशोरियों की शिरोमणि (श्रीप्रियाजी) मुझे अपना दास्य प्रदान करें।

दुकूलमतिकोमलं कलयदेव कौसुम्भकम् निबद्धमधुमल्लिकाललितमाल्यधम्मिल्लकम् ।
बृहत्कटितटस्फुरन्मुखरमेखलालङ्कृतम् कदा नु कलयामि तत्कनकचम्पकाभं महः ॥१५७॥



अति मृदुल दुकूल कुसुम्भ रंग,
शोभित सुअंग अतिशय कोमल
मल्लिका माल मंडित निबद्ध,
घुंघराले काले केश चपल
मेखला अलंकृत कटि प्रदेश,
कल मुखर सुशोभित कांति नवल
नव चम्पक कनक सदृश आभामय,
ज्योति पुंज देखूं प्रतिपल
॥157॥

भावार्थ

जिसने कसूँभी रंग का अत्यन्त कोमल वस्त्र धारण कर रखा है, जिसकी वेणी पीत चमेली की सुन्दर मालाओं से गुँथी हुई है, जिसके विशाल कटि प्रदेश पर देदीप्यमान एवं कलरव करने वाली किंकिणी सुशोभित है; उस स्वर्ण चंपक जैसी कान्ति से युक्त ज्योति (श्रीप्रियाजी) को, क्या कभी मैं देखूँगी ?

कदा रासे प्रेमोन्मदरसविलासेऽद्भुतमये दृशोर्मध्ये भ्राजन्मधुपतिसखीवृन्दवलये ।
मुदान्तः कान्तेन स्वरचितमहालास्यकलया निषेवे नृत्यन्तीं व्यजननवताम्बूलशकलैः ॥ १५८॥



अद्भुत प्रेमोन्मद रस विलास,
शोभित सहचरी वृन्द मंडल
दो दो बृजबाल मध्य विलसित,
माधव नूपुर ध्वनि चरण चपल
अंतर्गत कांत सहित नर्तित,
राधा सुलास्य गति कला कुशल
कब सेवा सुलभ मुझे होगी,
बीजना सरस ताम्बूल शकल
॥158॥

भावार्थ

सखियों के समूह द्वारा बनाये गये वृत्ताकार मण्डल में, जिसकी दिशाओं के मध्य (अर्थात् वृत्ताकार मण्डल के केन्द्र) में मधुपति (श्रीलालजी) विराजमान हैं; प्रेम के उत्कट मद एवं चमत्कारों से पूर्ण रस के विलासों से युक्त रास में, प्रसन्नता से भरे हुए अपने प्रीतम (श्रीलालजी) के साथ, स्वयं द्वारा रचित महा लास्य की कला से नृत्य करती हुई श्रीप्रियाजी की, पंखे से हवा करने एवं उन्हें पान की नवीन बीरी सर्पित करने की सेवा, मैं कब करूँगी ?

मधुरमारी विदाई मधुरह प्रसाद विभूषाविलासे ।
पुलकितदयितांसे संवलद्वाहुपाशे तदतिललितरासे कर्हि राधामुपासे ॥ १५९॥



प्रसरित सुबास मधु मधुर हास्,
परिपूर्ण प्रणय सीमा विकास
प्रियतम के पुलकित अंसलसित,
भुज पाश दिव्य भूषण विलास
कब होंगी श्री राधा उपास्य
रसराशि ललित अति मध्य रास
ll159ll

भावार्थ

जिस रास में, नृत्य के समय दोनों (श्रीप्रियाजी-श्रीलालजी) के वस्त्र फहरा रहे हों, प्रेम अपनी पूर्णतम सीमा तक विकसित हो रहा हो, मधुर से भी मधुर हास-परिहास चल रहा हो एवं दिव्य आभूषणों का विलास सुन्दर संगीतमय ध्वनि निकलने के रूप में हो रहा हो एवं प्रियतम (श्रीलालजी) के रोमांचित कन्धों पर, श्रीप्रियाजी अपनी भुजाओं को रखकर, उनकी भुजाओं के बन्धन का सम्बल प्राप्त कर रही हों; ऐसे उस अति सुन्दर रास में, मैं श्रीराधा की उपासना कब करूँगी ?

यदि कनकसरोजं कोटिचन्द्रांशुपूर्णम् नवनवमकरन्दस्यन्दिसौन्दर्यधाम ।
भवति लसितचञ्चत्खञ्जनद्वन्द्वमास्यम् तदपि मधुरहास्यं दत्तदास्यं न तस्याः ॥ १६०॥



यदि कोटि चंद्रछवि छटापूर्ण,

हों स्वर्ण कमल सौंदर्य धाम

नव नव मकरंद प्रवाह सहित,

युग खंजन चपल लसित ललाम

मधु मधुर हास्य भूषित राधामुख,

दास्य ना पायेगा सकाम

ll160ll

भावार्थ

यदि कोई ऐसा स्वर्ण-कमल हो, जो करोड़ों चन्द्रमाओं की किरणों से पूर्ण हो, जिससे नव-नव मकरन्द का झरना झर रहा हो, जो सौन्दर्य का धाम हो एवं जिसमें दो चंचल खंजन खेल रहे हों; तो भी उसे, श्रीप्रियाजी के मधुर हास्य से पूर्ण मुख-कमल का, दास्य नहीं दिया जा सकता है, अर्थात् उस स्वर्ण-कमल की तुलना, श्रीप्रियाजी के मुख-कमल से करना, सर्वथा असम्भव है।

सुधाकरमुधाकरं प्रतिपदस्फुरन्माधुरी – धुरीणनवचन्द्रिकाजलधितुन्दिलं राधिके ।
अतृप्तहरिलोचनद्वयचकोरपेयं कदा रसाम्बुधिसमुन्नतं वदनचन्द्रमीक्षे तव ॥ १६१॥



प्रतिक्षण नव नव माधुर्य सदन,

निज कांति सुधाकर मुधाकरण

नूतन चंद्रिका जलधि समृद्ध,

हरि दृग चकोर का तृषाहरण

उज्जवल रस सागर उदित कभी,

होंगे राधा मुख विधु दर्शन

ll161ll

भावार्थ

हे श्रीराधे ! चन्द्रमा को सुधाकर भी कहा जाता है, किन्तु उसे सुधाकर कहना पूर्ण रूप से असत्य है, क्योंकि आपका मुख-चन्द्र, पल-पल में स्फुरित होते हुए अन्यतम और अमृतमय माधुर्य से पूर्ण तथा सागर के समान विस्तृत रूप से फैले हुए नव नवायमान आभा मण्डल रूपी ज्योत्सनाओं के भार से स्वयं में भारीपन का अनुभव कर रहा है एवं श्रीहरि (श्रीलालजी) अपने दोनों नेत्रों से जिसका अनवरत पान करते हुए भी प्यासे ही बने रहते हैं। रस-समुद्र से निकले हुए आपके ऐसे मुख-चन्द्र को मैं कब देखूँगी ?

अङ्गप्रत्यङ्गरिङ्गन्मधुरतरमहाकीर्तिपीयूषसिन्धोर् – इन्दोः कोटिर्विनिन्दद्वदनमतिमदालोलनेत्रं दधत्याः ।
राधायाः सौकुमार्याद्भुतललिततनोः केलिकल्लोलिनीनाम् आनन्दस्यन्दिनीनां प्रणयरसमयान् किं विगाहे प्रवाहान् ॥ १६२॥



प्रति अंग मधुरतर महा कीर्ति,
पीयूष सिंधु है प्रवहमान
अति मदालोल युग नयन वदन,
शतकोटि चंद्र शोभा निधान
अद्भुत सुकुमार ललित तन द्युति,
आनंद केलि सरिता समान
श्री राधा प्रणय प्रवाह मध्य,
क्या कभी करूँगी रस स्नान
ll162ll

भावार्थ

प्रत्येक अंगों से प्रदर्शित किये जाने वाले हाव-भाव, जिनके अमृत के सिन्धु के समान मिष्ट तथा अतिशय मधुरातिमधुर क्रीड़ा-कुशल रूप का सुयश प्रकट किया करते हैं, जिनका मुख कोटि-कोटि चन्द्रमाओं को लज्जित करने वाला है, जिनके नेत्र मद से भरे हुए एवं अतिशय चंचल हैं, जिनके श्रीअंग की कमनीयता एवं सुकुमारता अति अद्भुत है; श्रीराधा की उन आनन्द का निर्झरण करने वाली केलि सरिताओं के प्रेम-रस से पूर्ण प्रवाहों का, क्या मैं अवगाहन करूँगी ?

मत्कण्ठे किं नखरशिखया दैत्यराजोऽस्मि नाहम् मैवं पीडां कुरु कुचतटे पूतना नाहमस्मि ।
इत्थं कीरैरनुकृतवचः प्रेयसा सङ्गतायाः प्रातः श्रोष्ये तव सखि कदा केलिकुञ्जे मृजन्ती ॥ १६३॥



मैं दैत्य राज तो नहीं कर रहे,
मेरे कंठ नखाग्रघात
मेरा कुचतट पीड़ित न करो,
मैं नहीं पूतना असुर जात
शुक अनुकृत प्रिय संगम समयोचित,
श्री राधा मुख उक्तबात
मैं केलि कुञ्ज मार्जन करती,
क्या कभी सुन सकूँगी प्रभात
ll163ll

भावार्थ

"मेरे कंठ में नाखूनों का प्रहार क्यों कर रहे हो, मैं दैत्यराज तृणावर्त्त नहीं हूँ। मेरी कुचतटी पर इस प्रकार की पीड़ा मत करो, मैं पूतना नहीं हूँ।" - हे सखी! रात्रि में, प्रियतम (श्रीलालजी) के साथ संगम के समय, आपके द्वारा कहे गये इन वचनों को, तोते द्वारा ज्यों की त्यों नकल कर बार-बार बोलते हुए, प्रातः काल केलि-कुञ्ज की बुहारी लगाते समय, मैं कब सुनूँगी ?

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु स्फुरतु मे राधापदानच्छटा वैकुण्ठे नरकेथवा मम गतिर्नान्यास्तु राधां विना ।
राधाकेलिकथा सुधाम्बुधिमहावीचीभिरान्दोलितम् कालिन्दीतटकुञ्जमन्दिरवरालिन्दे मनो विन्दतु ॥ १६४॥



जागृत स्वप्न सुषुप्ति निरंतर,
राधा पद छवि छटा स्फुरित
हो बैकुंठ नरक में भी,
श्रीराधा बिना ना चित्तस्थित
राधा केलि कथामृत निधि के,
महा प्रवाह समांदोलित
कालिंदीतट कुंज भवन,
प्रांगण में रहूँ सदानन्दित
ll164ll

भावार्थ

जागते हुए, स्वप्न में तथा गहरी निद्रा में, श्रीराधा के चरण-कमलों की छटा ही मेरे हृदय में स्फुरित हो। वैकुण्ठ अथवा नरक में भी श्रीराधा-दास्य के अतिरिक्त मेरी अन्य कोई गति न हो। श्रीराधा की केलि-कथा रूपी अमृत के समुद्र की उत्ताल तरंगों से आन्दोलित मेरा मन, श्रीयमुनाजी के तट पर स्थित कुञ्ज मन्दिर के श्रेष्ठ आँगन में आनन्दित होता रहे।

अलिन्दे कालिन्दीतटनवलतामन्दिरगते रतामर्दोद्भूतश्रमजलभरापूर्णवपुषोः ।
सुखस्पर्शेनामीलितनयनयोः शीतमतुलम् कदा कुर्यां संवीजनमहह राधामुरभिदोः ॥ १६५॥



श्रीकालिंदी तट नवललता,
मंदिर के अति सुरम्य प्रांगण
नव नव रति केलि विलास जनित,
श्रम सलिल सिक्त प्यारी प्रियतम
गाढ़ालिंगन आनन्दोन्मीलित,
नयन युगल कर रहे शयन
तब क्या अतुलित सुखप्रद शीतल,
मैं स्वकर करुँगी कभी व्यजन
ll165ll

भावार्थ

अहा हा ! श्रीयमुनाजी के तट पर स्थित नवीन लताओं द्वारा निर्मित किये गये मन्दिर के आँगन में गये हुए, सुरत-संग्राम में निकले हुए पसीने से भींगे हुए शरीर वाले एवं एक दूसरे के सुखद स्पर्श से मुँदे हुए नेत्रों वाले, श्रीराधा-माधव (श्रीप्रियाजी-श्रीलालजी) को परम शीतलता का सुख देने के लिये, मैं उनकी पंखे से हवा कब करूँगी ?

क्षणं मधुरगानतः क्षणममन्दहिन्दोलतः क्षणं कुसुमवायुतः सुरतकेलिशिल्पैः क्षणम् ।
अहो मधुरसद्रसप्रणयकेलिवृन्दावने विदग्धवरनागरी रसिकशेखरौ खेलतः ॥ १६६॥



वे कभी हिंडोलें पर झूले,
करते हैं कभी गान मनहर
कर अद्भुत सुरत विहार कभी,
फिर सुमनवायु सेवन श्रमहर
अति रसमय प्रणय विलास निरत,
रहते वृन्दावन निशि वासर
अनुपम विदग्ध नागरी प्रिया,
प्रियतम अनुरूप रसिक शेखर
ll166ll

भावार्थ

अहो ! मधुर और आद्य रस की प्रेम-क्रीड़ाओं के क्रीड़ा-स्थल वृन्दावन में चतुर शिरोमणि नागरी (श्रीप्रियाजी) एवं रसिकशेखर (श्रीलालजी) - ये दोनों कभी मधुर स्वर से गाते हुए, कभी झूले पर जोर-जोर से झोटे लेते हुए, कभी फूलों की सुगन्ध से युक्त वायु का सेवन करते हुए और कभी सुरत-केलि की कलाओं का प्रदर्शन करते हुए खेल रहे हैं।

अद्य श्यामकिशोरमौलिरहह प्राप्तो रजन्या मुखे नीत्वा तां करयोः प्रगृह्य सहसा नीपाटवीं प्राविशत् । ।
श्रोष्ये तल्पमिलन्महारतिभरे प्राप्तेपि शीत्कारितम् तद्वीचीसुखतर्जनं किमु हरेः स्वश्रोत्ररन्ध्राश्रितम् ॥ १६७॥



देखा संध्या के समय आज,
वे नवलकिशोर श्याम सुन्दर
हो रहे कदम्ब विपिन प्रविष्ट,
अपने कर ले श्रीराधा कर
शैय्या पर नव संगम सुख तरल,
तरंग तिरस्कृत शीत्कृत स्वर
कब कुंज रंध्र आश्रित श्रवणों में,
संचित कर लूँगी रसभर
।।167।।

भावार्थ

अहा हा! आज सन्ध्या होने पर, किशोर शिरोमणि श्याम (श्रीलालजी) अचानक उनके (श्रीप्रियाजी के) दोनों हाथ पकड़कर और उन्हें लेकर कदम्ब के वन में प्रविष्ट हो गये। वहाँ शैया पर दोनों के मिलते ही, दोनों के रति-प्रवाह में अपरिमित वृद्धि होने पर, श्रीप्रियाजी के मुख से निकली आनन्दोद्रेक को अभिव्यक्त करने वाली शीत्कार ध्वनियों एवं उनके द्वारा श्रीहरि (श्रीलालजी) को दी गयी सुखद प्रताड़ना (डाँट) को, क्या मैं अपने कानों से सुनूँगी ?

श्रीमद्राधे त्वमथ मधुरं श्रीयशोदाकुमारे प्राप्ते कैशोरकमतिरसाद् वल्गसे साधुयोगम् ।
इत्थं बाले महसि कथया नित्यलीलावयःश्रीः जातावेशा प्रकटसहजा किं नु दृश्या किशोरी ॥ १६८॥



अब तो वे रसिक किशोर हुए,
श्री राधे बृजरानी कुमार
तुम भी तो अब बालिका नहीं,
बाला ही हो मेरे विचार
सुनते ही बाल्य विलुप्त प्रगट,
नवयौवन अद्भुत चमत्कार
वह नित्य किशोरी रूप कभी,
मैं देखूँगी सौंदर्य सार
ll168ll

भावार्थ

"हे श्रीमती राधे ! श्रीयशोदाकुमार (श्रीलालजी) किशोर अवस्था को प्राप्त हो चुके हैं, इसी प्रकार तुम भी रसाधिक्य के वशीभूत होकर मधुर रस की किशोरावस्था को प्राप्त हो गई हो। यह बड़ा सुन्दर साधुयोग है।" - इस प्रकार कहे जाने पर, जिनमें मुग्धावस्था में ही नित्य किशोर लीला की शोभा-सम्पत्ति का आविर्भाव हो गया है; ऐसी किशोरावस्था में नित्य प्रकट रहने वाली सहज किशोरी (श्रीप्रियाजी) क्या हमारे दृष्टिगोचर होंगी ?

एकं काञ्चनचम्पकच्छवि परं नीलाम्बुदश्यामलम् कन्दर्पोत्तरलं तथैकमपरं नैवानुकूलं बहिः ।
किं चैकं बहुमानभङ्गि रसवच्चाटूनि कुर्वत्परम् वीक्षे क्रीडनिकुञ्जसीम्नि तदहो द्वन्द्वं महामोहनम् ॥ १६९॥



एक कनक चम्पक आभामय,
अपर नील नीरज श्यामल
एक सरस प्रतिकूल दूसरा,
केलि तरल अतिशय चंचल
एक सगर्वमान भंगी युत,
अपर चाटुकारिता विकल
कब निकुँज गृह में देखूँगी,
ऐसे मोहन रसिक युगल
ll169ll

भावार्थ

अहो ! एक (श्रीप्रियाजी) की श्रीअंग की शोभा स्वर्ण चम्पक के पुष्प के समान है, तो दूसरे (श्रीलालजी) का वर्ण नीले बादलों के समान श्यामांग है; एक (श्रीलालजी) काम के आवेश के कारण अत्यन्त चंचल है, तो दूसरा (श्रीप्रियाजी) हृदय से अनुकूल होते हुए भी बाहर से प्रतिकूल ही बना रहता है; एक (श्रीप्रियाजी) मान की अनेकानेक भंगिमाओं से पूर्ण है, तो दूसरा (श्रीलालजी) रसमय वचनों के द्वारा चाटुकारी करता रहता है; निकुञ्ज सीमा के अन्तर्गत क्रीड़ा परायण, ऐसे आश्चर्यमय महा मोहन युगल को, क्या मैं देखूँगी ?

विचित्ररतिविक्रमं दधदनुक्रमाद् आकुलम् महामदनवेगतो निभृतमञ्जुकुञ्जओदरे ।
अहो विनिमयन् नवं किमपि नीलपीतं पटम् मिथो मिलितमद्भुतं जयति पीतनीलं महः ॥ १७०॥



निभृत निकुंज मंजु अंतर्गृह,
अतिशय मदनाक्रान्त युगल
शोभित सरस कुसुम शैया पर,
नव नव केलि विलास कुशल
विविध विहार कला कर प्रस्तुत,
रति विक्रम विचित्र उज्जवल
अम्बर नीलपीत परिवर्तित,
पीत नील द्युति जयति युगल
ll170ll

भावार्थ

एकान्तिक सुन्दर कुञ्ज के भीतरी भाग में, काम के अतिशय आवेग से पूर्ण, पहले के बाद दूसरा तथा दूसरे के बाद फिर पहला, के क्रम से विचित्र रति के पराक्रम को प्रदर्शित करते हुए एवं अपने नीले तथा पीले रंग के वस्त्रों को आपस में बदलते हुए, कोई दो अनिर्वचनीय नील एवं पीत ज्योतियाँ, अद्भुत रूप से एक दूसरे से मिली हुई, सर्वोत्कृष्ट रूप से विराजमान हैं।

करे कमलमद्भुतं भ्रमयतोर्मिथोंऽसार्पित – स्फुरत्पुलकदोर्लतायुगलयोः स्मरोन्मत्तयोः ।
सहासरसपेशलं मदकरीन्द्रभङ्गीशतैर् – -गतिं रसिकयोर्द्वयोः स्मरत चारुवृन्दावने ॥ १७१ ॥



पुलकित भुजमाल कंठ विलसित,
अद्भुत अरविंद फिराते कर
उन्मत्त मदन आनंद प्रफुल्ल,
मृदु मधुर सुहास सरस सुन्दर
मदमत्त गजेंद्र ललित गति,
श्रीवृन्दावन कुँज गमन मंथर
मेरे मन तू भव भ्रमण त्याग,
बन रसिक युगल पद कमल भ्रमर
ll171ll

भावार्थ

जिन्होंने अपनी रोमांचित भुजाओं को एक दूसरे के कन्धे पर रखा हुआ है, जो अपने हाथों में स्थित अद्भुत कमल को घुमा रहे हैं, जो काम से उन्मत्त बने हुए हैं, जो एक दूसरे से हास-परिहास करते हुए चमत्कारपूर्ण आनन्द से युक्त दिखाई पड़ रहे हैं; सुन्दर वृन्दावन में, ऐसे दोनों रसिकों (श्रीप्रियाजी एवं श्रीलालजी) की, मतवाले हाथी की सैकड़ों भंगियों से युक्त, चाल का स्मरण करो।

खेलन्मुग्धाक्षिमीनस्फुरदधरमणीविद्द्रुमश्रोणिभार – द्वीपायामोत्तरङ्गस्मरकलभकटाटोपवक्षोरुहायाः ।
गम्भीरावर्तनाभेर्बहलहरिमहाप्रेमपीयूषसिन्धोः श्रीराधायाः पदाम्भोरुहपरिचरणे योग्यतामेव मृग्ये ॥ १७२॥



दृग चपल मनोहर मीन युग्म,
विद्रुममणि विलसित अरुण अधर
कंदर्प तरंगित श्रोणि द्वीप,
करि शावक कुम्भ उरोज सुघर
गंभीर नाभि आवर्त सरस,
श्रीकृष्ण प्रेम रस की सागर
मैं राधा पद परिचर्या की,
योग्यता ढूँढती निशि वासर
ll172ll

भावार्थ

जो श्रीहरि (श्रीलालजी) के लिए प्रेम रूपी अमृत के अत्यन्त सघन एवं विशाल सागर स्वरूपा हैं, जिसमें उनके भोले नेत्र ही मर्छालयों की भाँति खेल रहे हैं, उनके अधर ही विद्रुम मणि की तरह चमक रहे हैं, उनका भारी कटि-प्रदेश ही द्वीप सदृश दिखाई पड़ रहा है, उनके उरोज ही उमंग भरे कामदेव रूपी हाथी के बच्चों के गण्डस्थलों जैसे लग रहे हैं एवं उनकी नाभि ही गंभीर भँवर के समान प्रतीत हो रही है; मैं ऐसी सिन्धु स्वरूपा श्रीराधा के चरण-कमलों की परिचर्या करने की योग्यता का ही अन्वेषण करती हूँ।

विच्छेदाभासमानादहह निमिषतो गात्रवित्रंसनादौ चंचत्कल्पाग्निकोटिज्वलितमिव भवेद् बाह्यमभ्यन्तरं च ।
गाढस्नेहानुबन्धग्रथितमिव ययोरद्भुतप्रेममूर्त्योः श्रीराधामाधवाख्यं परमिह मधुरं तद्द्वयं धाम जाने ॥ १७३॥



प्रज्ज्वलित प्रलय
की अग्नि सदृश्य,
है जिनको पलकांतर
वियोग
आराध्य प्रणय
रस रज्जु बद्ध,
राधा माधव का
नित्य योग
॥173॥

भावार्थ

आश्चर्य है कि किसी भी प्रकार से होने वाले शारीरिक विलगाव के निमिष मात्र के वियोगाभास से ही जिनके तन और मन प्रलय काल की कोटि-कोटि प्रचण्ड ज्वाला के समान प्रज्ज्वलित हो उठते हैं, जो इस लोक में श्रीराधा-माधव के नाम से जाने जाते हैं; वे दोनों अद्भुत प्रेम की मूर्ति हैं, परम मधुर हैं तथा प्रगाढ़ प्रेम की डोरी से कसकर बँधे हुए हैं। उस प्रकाश-युगल को मैं जानता हूँ।

कदा रत्युन्मुक्तं कचभरमहं संयमयिता कदा वा संधास्ये त्रुटितनवमुक्तावलिमपि ।
कदा वा कस्तूर्यास्तिलकमपि भूयो रचयिता निकुञ्जान्तर्वृत्ते नवरतिरणे यौवनमणेः ॥१७४॥



रतिरण उन्मुक्त सुकेशपाश,
कर भली प्रकार पुनर्बंधन
टूटी मुक्ता माला सहेज,
फिर गूँथ सजाऊँ अलंकरण
कस्तूरी तिलक सँवार सरस,
कर यौवनमणि भूषित भूषण
वृन्दावन नव निकुँज में कब,
मैं धन्य करूँगी निज जीवन
ll174ll

भावार्थ

निकुञ्ज के अन्तर्गत, नवीन सुरत-संग्राम में, युवतियों की शिरोमणि श्रीप्रियाजी के, रति-विलास के समय में, खुलकर छूटे हुए बालों को, मैं कब बाँधूँगी ? उनकी टूटी हुई नवीन मुक्ताओं से निर्मित माला को कब पिरोऊँगी ? तथा कस्तूरी के द्वारा, मिट गये तिलक की रचना, कब करूँगी ?

किं ब्रूमोऽन्यत्र कुण्ठीकृतक जनपदे धाम्यपि श्रीविकुण्ठे राधामाधुर्यवेत्ता मधुपतिरथ तन्माधुरीं वेत्ति राधा ।
वृन्दारण्यस्थलीयं परमरससुधामाधुरीणां धुरीणा तद्वन्द्वं स्वादनीयं सकलमपि ददौ राधिकाकिङ्करीभ्यः ॥१७५॥



तब औरों की क्या बात जँहा,
बैकुंठ हुआ कुंठित प्रदेश
राधा माधुर्य विघ्य मधुपति,
माधव मधुता राधा विशेष
परम उज्जवल रस माधुर्य मूल,
वृन्दावन में नव कुँज देश
दे दिया सहित आस्वाद युगल,
राधा किंकिरिगण को अशेष
ll175ll

भावार्थ

जब श्रीवृंदावन धाम की महिमा के सामने, श्रीवैकुंठ धाम भी तेजहीन प्रदेश बन गया, तब अन्यत्र की तो बात ही क्या कही जाए। श्रीराधा (श्रीप्रियाजी) के माधुर्य को केवल मधुपति (श्रीलालजी) ही जानते हैं और श्रीलालजी के माधुर्य को केवल श्रीराधा (श्रीप्रियाजी) ही जानती हैं। परम रस-सुधा-माधुरी के अन्यतम स्रोत इस श्रीधाम वृन्दावन ने, आस्वादनीय युगल (श्रीप्रियाजी एवं श्रीलालजी) को, सम्पूर्ण रूप से, श्रीराधा किंकरीगणों को प्रदान कर दिया है।

लसद्वदनपङ्कजा नवगभीरनाभिभ्रमा नितम्बपुलिनोल्लसन्मुखरकाञ्चिकादम्बिनी ।
विशुद्धरसवाहिनी रसिकसिन्धुसङ्गोन्मदा सदा सुरतरङ्गिणी जयति कापि वृन्दावने ॥ १७६ ॥



विलसित अति दिव्य वदन पंकज,
गंभीर नाभि भँवरी ललाम
शोभित नितम्ब वर पुलिन मुखर,
काँची अम्बुध मालाभिराम
उज्जवल रस केलि तरंगमयी,
रसिकेश सिंधु संगम सकाम
नव सुरतरंगिणि जयति सदा,
कोई श्री वृंदाविपिन धाम
ll176ll

भावार्थ

वृन्दावन में कोई एक अनिर्वचनीय सुरत के रंग रँगी हुई राधा रूपी देव नदी गंगा सर्वोत्कृष्ट रूप से सदैव विराजमान रहती है, जिसमें उनका शोभायमान श्रीमुख ही कमल है, उनकी नव गंभीर नाभि ही भँवर है, उनका कटि-प्रदेश ही पुलिन स्थली है, शोभा युक्त शब्दायमान किंकिणी ही तट पर स्थित हंसों की पंक्ति है। यह नदी विशुद्ध रूप से रस को प्रवाहित करने वाली है तथा श्रीलालजी रूपी रस के सागर से मिलने के लिये सदैव उन्मद बनी रहती है।

अनङ्गनवरङ्गिणीरसतरङ्गिणीसङ्गताम् दधत् सुखसुधामये स्वतनुनीरधौ राधिकाम् ।
अहो मधुपकाकलीमधुरमाधवीमण्डपे स्मरक्षुभितमेधते सुरतसीधुमत्तं महः ॥१७७॥



नव अनंग
रस तरंगिणी,
श्रीराधा को
उर पर सहेज
मधुकर गुँजित
माधवी लतागृह,
विलसित कोई
नील तेज
ll177ll

भावार्थ

आश्चर्य है कि भ्रमरों की मन्द मन्द गुंजार से गुंजरित एवं माधवी लता की सुगन्ध से पूरित सुन्दर मण्डप में, काम के ताप से संतप्त एवं सुरत-केलि से संप्राप्त होने वाले आनन्द रूपी अमृत में प्रमत्त, कोई ज्योति प्रतिक्षण बढ़ती जा रही है, अर्थात् श्रीलालजी अतिशय चंचल हो रहे हैं। उन्होंने अपने सुखमय एवं अमृतमय नीलाभशरीर रूपी समुद्र में, कामदेव को भी नव जीवन प्रदान करने वाली, संगम को प्राप्तहुई रस-सरिता रूपी श्रीप्रियाजी को धारण कर रखा है, अर्थात् श्रीलालजी ने श्रीप्रियाजी को अपनी गोद में विराजमान कर रखा है।

रोमालीमिहिरात्मजा सुललिते बन्धूकबन्धुप्रभा सर्वाङ्गे स्फुटचम्पकच्छविरहो नाभीसरः शोभना ।
वक्षोजस्तवका लसद्भुजलता शिञ्जापतच्छुङ्कृतिः श्रीराधा हरते मनो मधुपतेरन्येव वृन्दाटवी ॥१७८॥



रोमावली कालिंदी जैसी,
बंधुकबन्धु द्युतिभा समान
सर्वांग सुकोमल चम्पक छवि,
नाभि सरसी शोभायमान
कुच पुष्प गुच्छ भुजलता सुभूषण,
रव अली ज्यों गुंजायमान
माधव मन हरतीं श्रीराधा,
श्रीवृन्दावन शोभा समान
ll178ll

भावार्थ

श्रीराधा के रूप में, किसी दूसरे वृन्दावन ने मधुपति (श्रीलालजी) के मन को चुरा लिया है। इस राधा रूपी वृन्दावन में, उनकी रोमावली श्रीयमुनाजी हैं, उनके अधरों में दुपहरिया के फूलों की प्रभा है, उनके सर्वांग में खिले हुए चम्पा के फूलों की कान्ति है, उनकी नाभि सरोवर की शोभा दे रही है, उनके दोनों कुच फूलों के गुच्छे लग रहे हैं, उनकी भुजायें लताओं सदृश हैं एवं किंकिणी आदि आभूषणों की मधुर ध्वनि मानों मुनैया आदि पक्षियों का मधुर कलरव है।

राधामाधवयोर्विचित्रसुरतारम्भे निकुञ्जओदर – -स्रस्तप्रस्तरसङ्गतैर्वपुरलङ्कुर्वेऽङ्गरागैः कदा ।
तत्रैव त्रुटिताः स्रजो निपतिताः सन्धाय भूयः कदा कण्ठे धारयितास्मि मार्जनकृते प्रातः प्रविष्टास्म्यहम् ॥ १७९॥



राधा माधव केलि महोत्सव,
नित्य नवीन निकुंज सदन
जाऊँगी मैं जब प्रभात,
भीतर करने को सम्मार्जन
अंगराग मर्दित शैय्या से,
ले कर लूँगी उर लेपन
बिखरे पुष्प गूँथ कर माला,
कंठ करुँगी कब धारण
ll179ll

भावार्थ

प्रातः काल निकुञ्ज मन्दिर के भीतरी भाग में, झाड़ू-बुहारी आदि साज-सज्जा के कार्य के लिए प्रविष्ट होकर, श्रीराधा-माधव (श्रीप्रियाजी एवं श्रीलालजी) की, रात्रि में विचित्र सुरत-केलि के समय, अस्त-व्यस्त हो गयी शैया पर, लगे हुए अंगराग के द्वारा, मैं अपने शरीर को कब अलंकृत करूँगी ? तथा वहीं पर टूटकर गिरी हुई, उनकी मालाओं को फिर से पिरोकर, उन्हें अपने कंठ में कब धारण करूँगी ?

श्लोकान्प्रेष्ठयशोङ्कितान्गृहशुकानध्यापयेत्कर्हिचिद् गुञ्जमञ्जुलहारबर्हमुकुटं निर्माति काले क्वचित् ।
आलिख्य प्रियमूर्तिमाकुलकुचौ सङ्घट्टयेद् वा कदाप्य्-एवं व्यापृतिभिर्दिनं नयति मे राधा प्रियस्वामिनी ॥१८०॥



कभी प्रेष्ठ यश वलित पद्य से,
करतीं गृह शुक अध्यापन
मोर मुकुट वर गुंज माल,
अपने कर रचतीं हैं नूतन
सुन्दर चित्र बनाकर प्रिय का,
करती फिर फिर आलिंगन
एवं विध स्वामिनी हमारी,
करती विरह दिवस यापन
ll180ll

भावार्थ

कभी तो अपने प्रीतम (श्रीलालजी) के यश का गान करने वाले श्लोकों को, निकुञ्ज गृह के तोतों को पढ़ाती हैं, किसी समय उनके लिए सुन्दर गुंजाओं की माला और मोर मुकुट का निर्माण करती हैं और कभी उनकी प्रियमूर्ति का चित्रण करके, उसे अपने आकुल कुचों का स्पर्श कराती हैं; इस प्रकार के व्यापारों द्वारा, मेरी प्रिय स्वामिनी श्रीराधा अपना दिन (वियोग पूर्ण समय) व्यतीत करती हैं।

प्रेयः सङ्गसुधासदानुभविनी भूयोभवद्भाविनी लीलापञ्चमरागिणी रतिकलाभङ्गीशतोद्भाविनी ।
कारुण्यद्रवभाविनी कटितटे काञ्चीकलाराविणी राधैव गतिर्ममास्तु पदयोः प्रेमामृतस्राविणी ॥१८१॥



प्रियतम संग सुधा सदानुभविनि,
नित्य प्रणय भाविनी
लीला पंचम रागिनी रतिकला,
भंगी शतोदभाविनी
कारुण्यद्रव भाविनी सुकटि में,
काँची मधुर राविणी
राधा मम गति नित्य पदयुगल,
से प्रेमामृत स्त्राविनि
ll181ll

भावार्थ

जो सदा सर्वदा प्रियतम (श्रीलालजी) के संगम रूपी अमृत के आस्वादन का अनुभव किया करती हैं, जो पुनः पुनः नये-नये भावों से भव्य होती रहती हैं, जो लीला विशेष के साथ पंचम राग का गान करने वाली हैं, जो रति कला की सैकड़ों भंगियों को प्रकट करने वाली हैं, जो अपने जनों के प्रति सदा करुणा से द्रवित बनी रहती हैं, जो अपने कटि प्रदेश में धारण की हुई किंकिणी से सांगीतिक ध्वनियों को उत्पन्न करने वाली हैं तथा जो अपने युगल चरणों से प्रेमामृत का निर्झरण करती रहती हैं; वे श्रीराधा ही मेरी एकमात्र गति हों।

कोटीन्दुच्छविहासिनी नवसुधासम्भारसम्भाषिणी वक्षोजद्वितयेन हेमकलशश्रीगर्वनिर्वासिनी । ।।
चित्रग्रामनिवासिनी नवनवप्रेमोत्सवोल्लासिनी वृन्दारण्यविलासिनी किमुरहोभूयाद्धृदुल्लासिनी ॥१८२॥



कोटिन्दुचछवि हासिनी नव सुधा,
धारा मधुर भाषिणि
वक्षोजों से हेमकुम्भ युग का,
श्री गर्व निर्वासिनी
चित्र ग्राम निवासिनी नव नव,
प्रेमोत्सवोल्लासिनी
वृन्दारण्य विलासिनी कभी,
क्या होंगी उरोल्लासिनी
ll182ll

भावार्थ

जिनका हास्य कोटि-कोटि चन्द्रमाओं की शोभा से युक्त है, जिनकी वाणी से नवीन अमृत की वर्षा होती है, जो अपने कुचों की शोभा से स्वर्ण-कलशों की श्री का गर्व दूर करने वाली हैं, जो अनन्तानन्त नई-नई मधुर भावनाओं से सुचित्रित प्रीतम (श्रीलालजी) के हृदय में निवास करने वाली हैं एवं जो प्रतिक्षण नव-नव प्रेमोत्सव के उल्लास से भरी रहती हैं; वे वृन्दावन की निभृत निकुञ्जों में विलास करने वाली श्रीराधा, क्या कभी मेरे हृदय में उल्लसित होंगी ?

कदा गोविन्दाराधनललितताम्बूलशकलम् मुदा स्वादं स्वादं पुलकिततनुर्मे प्रियसखी ।
दुकूलेनोन्मीलन्नवकमलकिञ्जल्करुचिना निवीताङ्गी सङ्गीतकनिजकलाः शिक्षयति माम् ॥ १८३॥



श्रीगोविन्द प्रसाद ललित,
ताम्बूल कर रही आस्वादन
पुलकित तन प्रिय सखी केसरी,
रंग दुकूल किये धारण
नूतन वस्त्र विभूषण सज्जित,
वृंदा विपिन निकुंज सदन
श्रीललिता मुझको देंगी कब,
निज संगीत कला शिक्षण
।।183।।

भावार्थ

श्रीगोविन्द (श्रीलालजी) द्वारा प्रेम से समर्पित किये गये पान की बीरी के टुकड़े का बार-बार स्वाद लेते हुए, जिनका शरीर पुलकित हो रहा है एवं खिले हुए नवीन कमल की केशर की कान्ति वाले वस्त्र से सुसज्जित अंगों वाली, मेरी प्रिय सखी (श्रीप्रियाजी), मुझे अपनी संगीत-कला की शिक्षा कब देंगी ?

लसद्दशनमौक्तिकप्रवरकान्तिपूरस्फुरन् -मनोज्ञनवपल्लवाधरमणिच्छटासुन्दरम् ।
चरन्मकरकुण्डलं चकितचारुनेत्राञ्चलम् स्मरामि तव राधिके वदनमण्डलं निर्मलम् ॥ १८४॥



मुक्ता छवि विलसित दशनावली,

नव पल्लव आभा अरुण अधर

मकराकृत कुण्डल चपल नयन,

युग चकित कटाक्ष चारु मनहर

राधे तब निर्मल मुख मण्डल,

मैं स्मरण किया करती प्रतिपल

॥184॥

भावार्थ

हे श्रीराधिके ! आपकी दन्तावली अत्यन्त चमकदार श्रेष्ठ मोतियों की भाँति शोभित हो रही है, मनोहर एवं नवीन पल्लवों जैसे आपके अधर विद्रुम मणि की छटा से भी सुन्दर लग रहे हैं, आपने कानों में चंचल मकराकृत कुण्डल धारण कर रखे हैं एवं आपके नेत्र कटाक्ष युक्त तथा मृगछौनी जैसी चकित दृष्टि से पूर्ण बने हुए हैं; मैं आपके निर्मल मुख मण्डल का स्मरण करती हूँ।

चलत्कुटिलकुन्तलं तिलकशोभिभालस्थलम् तिलप्रसवनासिकापुटविराजिमुक्ताफलम् ।
कलङ्करहितामृतच्छविसमुज्ज्वलं राधिके तवातिरतिपेशलं वदनमण्डलं भावये ॥१८५॥



घुंघराली अलकावलि चंचल,
नव तिलक सुशोभित भाल स्थल
तिल पुष्प समान नासिका पुट,
शोभायमान वर मुक्ताफल
अनुपम पीयूष निधान सरस,
सर्वथा कलंक रहित उज्जवल
मम भव्य भावना में विलसित,
राधिके तुम्हारा मुख मंडल
ll185ll

भावार्थ

हे श्रीराधिके ! आपकी घुँघराली अलकें चंचल हो रही हैं, आपके भालस्थल पर तिलक सुशोभित है एवं तिल के फूल जैसी आपकी नासिका में बेसर का मोती जगमगा रहा है; कलंक से रहित चन्द्रमा से भी अत्यन्त उज्ज्वल एवं अमृत से पूर्ण तथा प्रेम-रस के सौन्दर्य से युक्त, आपके मुख मण्डल की, मैं भावना करती हूँ।

पूर्णप्रेमामृतरससमुल्लाससौभाग्यसारम् कुञ्ज कुञ्ज नवरतिकलाकौतुकेनात्तकेलि ।
उत्फुल्लेन्दीवरकनकयोः कान्तिचौरं किशोरम् ज्योतिर्द्वन्द्वं किमपि परमानन्दकन्दं चकास्ति ॥ १८६॥



उल्लासपूर्ण प्रेमामृत रस,
सौभाग्य सार अद्भुत विकास
नव नव कुंजों में नित्य केलि,
कौतुक रत जो करते निवास
उत्फुल्ल नीलवर स्वर्ण कमल,
की कांति चोर माधुर्य राशि
आनंद कंद कोई किशोर युग,
ज्योति करे उर पुरप्रकाश
ll186ll

भावार्थ

जो प्रेम के पूर्णतम रूप के अमृतमय, रसमय एवं उल्लासमय स्वरूप-सौन्दर्य का सार है, जो नई-नई रति-कलाओं के चमत्कार से युक्त होकर कुञ्ज-कुञ्जों में केलि परायण है, जो विकसित नील कमल और कनक कमल की कान्ति को हरण करने वाला है; ऐसा परमानन्द का मूल कोई अनिर्वचनीय किशोरावस्था वाला ज्योति युगल सुशोभित हो रहा है।

ययोन्मीलत्केलीविलसितकटाक्षैककलया कृतो बन्दी वृन्दाविपिनकलभेन्द्रो मदकलः ।
जडीभूतः क्रीडामृग इव यदाज्ञालवकृते कृती नः सा राधा शिथिलयतु साधारणगतिम् ॥ १८७॥



जिनके कटाक्ष
लव के बंदी,
वृन्दावन नव
गजमत्त श्याम
मेरी भव बाधा
हरण करें,
वे श्रीराधा
माधुर्य धाम
॥187॥

भावार्थ

जिन्होंने विविध क्रीड़ा विलासों का विकास करने वाले अपने कटाक्षों को एक कला से वृन्दावन के मदोन्मत्त गजराज (श्रीलालजी) को ऐसा बन्दी बना लिया है कि जिनकी आज्ञा का संकेत मात्र पाकर, स्वयं कुशल होने पर भी, आज्ञा का पालन करने के लिये, वे क्रीड़ा-मृग की भाँति जड़ जैसे बन जाते हैं; वे श्रीराधा हमारी साधारण गति को शिथिल करें।

श्रीगोपेन्द्रकुमारमोहनमहाविद्ये स्फुरन्माधुरी – -सारस्फाररसाम्बुराशिसहजप्रस्यन्दिनेत्राञ्चले ।
कारुण्यार्द्रकटाक्षभङ्गिमधुरस्मेराननाम्भोरुहे हा हा स्वामिनि राधिके मयि कृपादृष्टिं मनानिक्षिप ॥१८८॥



नेत्रांचल प्रसवित सहज,
माधुर्य सुधा रस सिंधुसार
है श्रीगोपेन्द्र कुमार मोहिनी,
कृपाद्रष्टि विस्तृत अपार
है करुणमयि स्वामिनी उदार,
अब सुनो आर्तजन की पुकार
निज मधुरस्मित मंडित मुख पंकज,
दिखलाओ तुम एक बार
ll188ll

भावार्थ

जो गोपेन्द्रकुमार (श्रीलालजी) को मोहित करने वाली महाविद्या रूपा हैं, जिनके नेत्र प्रान्त से, देदीप्यमान माधुरी सार को विस्तार करने वाला, रस का समुद्र सहज रूप से प्रवाहित होता रहता है, जिनके कटाक्ष करुणा से भींगे हुए एवं अनेक मधुर भंगियों से पूर्ण बने रहते हैं, जिनका मुख-कमल मन्द-मन्द हास्य से युक्त बना रहता है; ऐसी हा-हा स्वामिनी श्रीराधिके ! आप मुझ पर अपनी थोड़ी सी कृपा दृष्टि प्रदान कीजिये।

ओष्ठप्रान्तोच्छलितदयितोद्गीर्णताम्बूलरागा रागानुच्चैर्निजरचितया चित्रभङ्ग्योन्नयन्ती ।
तिर्यग्ग्रीवा रुचिररुचिरोदञ्चदाकुञ्चितभ्रूः प्रेयः पार्श्वे विपुलपुलकैर्मण्डिता भाति राधा ॥ १८९॥



ओष्ठ प्रान्त उच्छलित दयति,
उद्गीर्ण सरस ताम्बूल राग
कर के तिरछी ग्रीवा सुन्दर,
गा रही उच्च स्वर मधुर राग
भृकुटि बंक पुलक मंडित तन,
शोभित प्रियतम वाम भाग
श्रीराधा के दर्शन करके,
सौभाग्य हमारे उठे जाग
ll189ll

भावार्थ

जो प्रियतम (श्रीलालजी) को अपना चर्बित पान देने के लिये, उसे अपने अधरों तक लाई हैं, जिससे उनके ओष्ठ प्रान्त में, उस पान की लालिमा उच्छलित हो रही है, जो विचित्र भंगियों के साथ, चित्रभंगी नामक वीणा पर, उच्च स्वर से, स्वरचित गीत काव्य का गान कर रही हैं, उस समय उनकी ग्रीवा कुछ तिरछी सी हो रही है और दोनों भौंहें कुछ टेढ़ी सी होकर ऊपर चढ़ सी गयी हैं, रागानन्द की विपुल पुलकावलि से मण्डित श्रीराधा, प्रियतम (श्रीलालजी) के वाम भाग में सुशोभित हो रही हैं।

किं रे धूर्त्तप्रवर निकटं यासि नः प्राणसख्या नूनं बाला कुचतटकरस्पर्शमात्राद् विमुह्येत् ।
इत्थं राधे पथि पथि रसान् नागरं तेऽनुलग्नम् क्षिप्त्वा भङ्ग्या हृदयमुभयोः कर्हि संमोहयिष्ये ॥ १९०॥



क्यों रे धूर्त प्रवर करता है,
प्यारी सखी समीप गमन
कहीं छू लिया नवल स्तन तो,
हो जायेगा मूर्छित तन
प्रेम विवश पग पग पर,
प्रियतम अनुगामी होते प्रतिक्षण
व्यंग्य वचन से यों राधे कब,
मोहूँगी दोनों का मन
ll190ll

भावार्थ

"रे धूर्त्त शिरोमणि ! तुम हमारी प्राण सखी के निकट क्यों चले जा रहे हो ? उन बाला की कुच तटी को, अपने हाथों से स्पर्श करने मात्र से, निश्चय ही तुम विमुग्ध हो जाओगे।" - हे श्रीराधे ! पग-पग पर रस-विवश एवं आपका अनुगमन करने वाले नागर शिरोमणि (श्रीलालजी) को, इस प्रकार भंगी विशेष से या वचन चातुरी से डाँटते हुए, मैं आप दोनों के चित्त को कब विमोहित करूँगी ?

कदा वा राधायाः पदकमलमायोज्य हृदये दयेशं निःशेषं नियतमिह जह्यामुपविधिम् ।
कदा वा गोविन्दः सकलसुखदः प्रेमकरणाद् अनन्ये धन्ये वै स्वयमुपनयेत स्मरकलाम् ॥ १९१॥



कब श्री राधा चरण कमल मैं,
कर अपने उर में धारण
विधि निषेध को त्याग बनुँगी,
युगल किशोर कृपा भाजन
सर्व सुखद गोविंद जानकर,
मुझे अनन्य समाश्रित जन
स्वयं कृपा करके देंगे कब,
नव नव केलि कला शिक्षण
ll191ll

भावार्थ

श्रीराधिकाजी के कृपापूर्ण चरण-कमलों को अपने हृदय में धारण करके, संसार में आने और जाने के इस नियत किये गये विधि-विधान को, मैं सम्पूर्ण रूप से कब त्याग दूँगी ? तथा समस्त सुखों को देने वाले गोविन्द (श्रीलालजी), राधा की अनन्य होने के कारण स्वयं को धन्य मानने वाली मुझको, श्रीप्रियाजी की प्रेमपात्री जानकर, स्वयं ही काम-कला की शिक्षा कब प्रदान करेंगे ?

कदा वा प्रोद्दामस्मरसमरसंरम्भरभस – प्ररूढस्वेदाम्भः प्लुतलुलितचित्राखिलतनू ।
गतौ कुञ्जद्वारे सुखमरुति संवीज्य परया मुदाहं श्रीराधारसिकतिलकौ स्यां सुकृतिनी ॥ १९२॥



उद्दाम काम
संग्राम जनित,
जब स्वेदसिक्त
होंगे युग तन
राधा माधव
बयार सेवा,
कर धन्य करूँगी
कब जीवन
॥192॥

भावार्थ

प्रबल काम से युद्ध करने के लिये, उत्तेजनापूर्ण उतावलेपन के कारण, उत्पन्न हुई पसीने की बूँदों से, जिन दोनों के शरीर गीले, शिथिल एवं विचित्र हो रहे हैं, सुखद वायु प्राप्त करने के लिये, जो कुञ्ज के द्वार पर आकर खड़े हो गये हैं; उन श्रीराधा और रसिकशेखर (श्रीलालजी) की, परम प्रीति पूर्वक पंखे से हवा करते हुए, मैं कब भाग्यशाली होऊँगी ?

मिथः प्रेमावेशाद् घनपुलकदोर्वल्लिरचित – प्रगाढा श्लेषेणोत्सवरसभरोन्मीलितदृशौ ।
निकुञ्जक्लृप्ते वै नवकुसुमतल्पेऽभिशयितौ कदा पत्संवाहादिभिरहमधीशौ नु सुखये ॥ १९३॥



जब निभृत निकुंज भवन भीतर,
नव कुसुम सुकोमल शैय्या पर
अति प्रेमाविष्ट परस्पर पुलकित,
गाढ़ालिंगन नव रसभर
हो अर्धोन्मीलित नयन युगल,
कर रहे शयन प्राणाधीश्वर
कर पद संवाहनादि सेवा,
कब सुख पहुँचाऊँगी सत्वर
ll193ll

भावार्थ

निकुञ्ज के अभ्यन्तर नये-नये पुष्पों से सुसज्जित शैया पर लेटे हुए, एक दूसरे के प्रति प्रेम के आवेश से भरे हुए होने के कारण, जिन्होंने अपनी अतिशय रोमांचित भुजाओं से एक दूसरे को आवद्ध वक्ष किया हुआ है एवं प्रगाढ़ आलिंगन रूपी उत्सव से संप्राप्त रसानन्द की अधिकता के कारण, जिनके नेत्र कभी खुले तथा कभी बन्द हो रहे हैं; अपने उन प्राणेश युगल (श्रीप्रियाजी एवं श्रीलालजी) को, चरण-सम्वाहन आदि सेवाओं के द्वारा, मैं कब सुख पहुँचाऊँगी ?

मदारुणविलोचनं कनकदर्पकामोचनम् महाप्रणयमाधुरीरसविलासनित्योत्सुकम् ।
लसन्नववयः श्रिया ललितभङ्गिलीलामयम् हृदा तदहमुद्वहे किमपि हेमगौरं महः ॥ १९४॥



मद अरुण विलोचन अंग कांति,
करतीं है कनक दर्प मोचन
है प्रणय माधुरी रस विलास के,
हेतु सदा उत्कंठित मन
नव यौवन श्री उल्लास वलित,
अत्यंत ललित लीलायित तन
उस हेम गौर छवि ज्योति पुंज को,
करतीं हूँ उर में धारण
ll194ll

भावार्थ

मद में मत्त होने से लालिमा युक्त नेत्र वाले, स्वर्ण के गर्व को खण्डित करने वाले, अतिशय प्रेम के माधुर्य से युक्त रसमय विलासों को करने के लिए सदैव उत्कंठित बने रहने वाले, मुकुलित वय नव किशोरावस्था की श्री से सम्पन्न एवं लीलामय ललित भाव भंगियों से पूर्ण, उस किसी अनिर्वचनीय स्वर्ण के समान गौर तेज (श्रीप्रियाजी) को, मैं हृदय मैं धारण करता/करती हूँ।

मदाघूर्णन्नेत्रं नवरतिरसावेशविवशो – ल्लसद्गात्रं प्राणप्रणयपरिपाट्यां परतरम् ।
मिथोगाढाश्लेषाद् वलयमिव जातं मरकत – द्रुतस्वर्णच्छायं स्फुरतु मिथुनं तन्मम हृदि ॥ १९५॥



मदघूर्णित नयन युग्म नूतन,
रति रसावेश वश विलसित तन
प्राणाधिक प्रीती रीति पालक,
वलयित सुगात्र गाढ़ालिंगन
मरकत मणि द्रवित स्वर्ण शोभा,
हरिताभ लसित नव कुंज भवन
वह रसिक युगल की अनुपम छवि,
आलोकित हो मम हृदय सदन
ll195ll

भावार्थ

जिनके नेत्र मद से घूम रहे हैं, नवीन प्रेम-रस के आवेश से जिन दोनों के शरीर विवश तथा उल्लसित हो रहे हैं, जिन्हें प्रेम की परिपाटी अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय है तथा जो इसमें सर्वश्रेष्ठ हैं, जिन्होंने एक दूसरे का गाढ़ आलिंगन इस प्रकार से किया हुआ है कि वे कंकण की तरह गोल जैसे दिखाई पड़ रहे हैं; ऐसे इन्द्रनीलमणि (श्रीलालजी) एवं द्रवीभूत स्वर्ण की छवि के समान (श्रीप्रियाजी) - ये दोनों मेरे हृदय में स्फुरित हों।

परस्परं प्रेमरसे निमग्नम् अशेषसम्मोहनरूपकेलि ।
वृन्दावनान्तर्नवकुञ्जगेहे तन्नीलपीतं मिथुनं चकास्ति ॥ १९६॥



प्रणय सुधारस
मग्न परस्पर,
रूप केलि अति
सम्मोहन
नीलपीत द्युति
युग्म प्रकाशित,
वृन्दावन नव
कुंज सदन
ll196ll

भावार्थ

जो एक दूसरे के प्रेम-रस में डूब रहे हैं तथा जिनकी लीलायें एवं लीलाओं से निष्पन्न रूप-ये दोनों सम्पूर्ण विश्व को सम्मोहित करने वाले हैं; वह नील-पीत वर्ण वाला युगल (श्रीप्रियाजी एवं श्रीलालजी) तेज वृन्दावन के अन्तर्गत नवीन कुञ्ज भवन में देदीप्यमान हो रहा है।

आशास्य दास्यं वृषभानुजाया – स्तीरे समध्यास्य च भानुजायाः ।
कदा नु वृन्दावनकुञ्जवीथी – -ष्वहं नु राधे ह्यतिथिर्भवेयम् ॥१९७॥



चिर संचित पद
दास्य लालसा,
लेकर कालिंदी
तट पावन
कभी अतिथि
होऊँगी राधे,
कुंज धाम तब
श्रीवृंदावन
।।197।।

भावार्थ

हे श्रीराधे ! श्रीयामुनाजी के किनारे पर भलीभाँति से स्थित होकर एवं श्रीवृषभानुनन्दिनी (श्रीप्रियाजी) के दास्य भाव को मन में धारण करके, वृन्दावन की कुंज गलियों में, क्या मैं अतिथि होऊँगा?

कालिन्दीतटकुञ्ज पुञ्जीभूतं रसामृतं किमपि ।
अद्भुतकेलिनिधानं निरवधि राधाभिधानमुल्लसति ॥१९८॥



पुंजीभूत रसामृत
अनुपम,
कालिंदी तट
कुंज भवन
अद्भुत केलि निधान
असीमित,
राधा विलसित
वृन्दावन
॥198॥

भावार्थ

जो रस रूपी अमृत का घनीभूत रूप है एवं जो आश्चर्यजनक लीला-विलासों का भंडार है; ऐसा कोई अनिर्वचनीय राधा नामक तत्व श्रीयमुनाजी के तट पर स्थित कुञ्ज में उल्लसित हो रहा है।

प्रीतिरेव मूर्तिमती रससिन्धोः सारसम्पदिव विमला ।
वैदग्धीनां हृदयं काचन वृन्दावनाधिकारिणी जयति ॥ १९९॥



रस समुद्र की
सार संपदा,
मूर्तीमति ज्यों
प्रीति विमल
विदग्धता की
हृदय जयति,
वृन्दावन अधिदैवी
अविचल
ll199ll

भावार्थ

जो मूर्त्तिमान प्रीति ही है, जो रस के समुद्र की निर्मल सारभूत सम्पत्ति ही है एवं जो समस्त चतुरताओं की सार स्वरूपा है; ऐसी कोई अनिर्वचनीय वृन्दावन की स्वामिनी (श्रीप्रियाजी) सर्वोत्कृष्ट रूप से विराजमान हैं।

रसघनमोहनमूर्तिं विचित्रकेलिमहोत्सवोल्लसितम् ।
राधाचरणविलोडितरुचिरशिखण्डं हरिं वन्दे ॥ २००॥



अद्भुत केलि
महोत्सव विलसित,
मोहन मूर्ति
अमृत रसघन
राधा चरण विलुंठित
मोर मुकुटधर,
हरि को नित्य नमन
ll200ll

भावार्थ

जो घनीभूत रस की, मन को मोहित करने वाली मूर्त्ति जैसे हैं, जो अनूठे लीला-विलासों को, महोत्सव के रूप में मनाते हुए, नित्य उल्लसित बने रहते हैं एवं जो अपने सुन्दर मोर मुकुट को, श्रीराधा के श्रीचरणों में डुलाते रहते हैं; मैं उन श्रीहरि (श्रीलालजी) की वन्दना करता हूँ।

कदा गायं गायं मधुरमधुरीत्या मधुभिदश् -चरित्राणि स्फारामृतरसविचित्राणि बहुशः ।
मृजन्ती तत्केलीभवनमभिरामं मलयज – च्छटाभिः सिञ्चन्ती रसहृदनिमग्नास्मि भविता ॥२०१॥



गा गा कर मधुर
मृदुल स्वर से,
हरि की लीला
अद्भुत सुललित !
कब कुंज सदन
मार्जन सेवा कर,
होऊँगी रस
सर निपतित !!
||201||

भावार्थ

मधुसूदन (श्रीलालजी) के अत्यधिक रस से भरे अनूठे चरित्रों को मधुर से भी मधुर रीति से बार-बार गायन करते हुए, उनके उस केलि भवन की बुहारी आदि साज-सज्जा करती हुई एवं उसे चन्दनादि सुगन्धित जल से सींचती हुई, मैं रस-सरोवर में कब निमग्न हो जाऊँगी ?

उदञ्चद्रोमाञ्चप्रचयखचितां वेपथुमतीम् दधानां श्रीराधामतिमधुरलीलामयतनुम् ।
कदा वा कस्तूर्या किमपि रचयन्त्येव कुचयोर् – -विचित्रां पत्रालीमहमहह वीक्षे सुकृतिनी ॥ २०२॥



पुलकित कम्पित
अत्यंत मधुर,
श्रीराधा के युग
नवल स्तन !
मृगमद से पत्रावली रचती,
क्या कभी करूँगी मैं दर्शन ? !!
||202||

भावार्थ

अहा हा ! अतिशय पुलकित रोमावली से सुशोभित, कम्पायमान एवं अत्यन्त मधुर लीलामय वपु को धारण करने वाली श्रीराधिकाजी को, उनके कुच युगल पर कस्तूरी से कुछ अभूतपूर्व अनूठी पत्रावली की रचना करते हुए, मैं भाग्यशालिनी उनका दर्शन कब प्राप्त करूँगी ?

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्र

क्षणं सीत्कुर्वन्ती क्षणमथ महावेपथुमती क्षणं श्याम श्यामेत्यमुमभिलपन्ती पुलकिता ।
महाप्रेमा कापि प्रमदमदनोद्दामरसदा सदानन्दा मूर्तिर्जयति वृषभानोः कुलमणिः ॥ २०३॥



क्षण में सीत्कार कभी करतीं
क्षण में कम्पित फिर पुलकित तन !
करतीं हैं कभी प्रलाप आप ही,
"श्याम श्याम" कर उच्चारण !!
वह महा प्रेममय प्रमद मदन,
रस की दात्री अद्भुत रस घन !
सर्वदानंदमयी मूर्ति जयति,
वृषभानु गोप कुल की भूषण !!
||203||

भावार्थ

किसी क्षण शीत्कार करती हुई, किसी क्षण अत्यन्त कम्पित होती हुई तथा किसी क्षण रोमांचित होकर "हे श्याम ! हे श्याम !"- ऐसा उच्चारण करती हुई, महा प्रेम-स्वरूपा, गर्व से उन्मद मद वाले कामदेव के उद्दाम रस को देने वाली, सदैव मूर्त्तिमान आनन्द स्वरूपिणी, किसी अनिर्वचनीया वृषभानु के कुल की मणि स्वरूपा (श्रीप्रियाजी) की जय हो।

यस्याः प्रेमघनाकृतेः पदनखज्योत्स्नाभरस्नापित – -स्वान्तानां समुदेति कापि सरसा भक्तिश्चमत्कारिणी ।
सा मे गोकुल भूपनन्दनमनश्चोरी किशोरी कदा दास्यं दास्यति सर्ववेदशिरसां यत्तद्रहस्यं परम् ॥२०४॥



जिनकी पद नख मणि प्रभास्नात,
अतिभूरि भाग्यजन प्रणत हृदय !
होती है उनके भक्ति परम रस,
चमत्कारिणी का समुदय !!
नवप्रणय घनाकृति श्रीबृजराज,
किशोर चित्त की चोर सदय !
देंगी कब अपना दास्य किशोरी,
निगम शिरोमणि स्निग्ध प्रणय !!
||204||

भावार्थ

जो घनीभूत प्रेम की मूर्त्ति हैं, जिनके चरणों के नखों की चाँदनी के प्रवाह में स्नान किये हुए व्यक्ति के हृदय में कोई अनिर्वचनीय चमत्कारिणी सरस भक्ति-रसभक्ति-का सम्यक प्रकार से उदय हो जाता है, जो गोकुल भूप नन्दन (श्रीलालजी) के मन को चुराने वाली हैं एवं जो समस्त उपनिषदों के लिये परम रहस्यमय हैं; वे श्रीराधा मुझे अपना दास्य कब प्रदान करेंगी ?

कामं तूलिकया करेण हरिणा यालक्तकैरङ्किता नानाकेलिविदग्धगोपरमणीवृन्दे तथा वन्दिता ।
या सङ्गुप्ततया तथोपनिषदां हृद्येव विद्योतते सा राधाचरणद्वयी मम गतिर्लास्यैकलीलामयी ॥२०५॥



श्रीहरि कर कमलतूलिका से,
जो है यथेच्छ चित्रित रंजित !
नाना विधि केलिकलाप कुशल,
बृजबालाओं से अभिवन्दित !!
उपनिषदों के अन्तःस्तल में है,
गूढ़ रूप से आलोकित !
वे लीलालास्य निरत राधा,
पद युगल बसे मम् उर नर्तित !!
||205||

भावार्थ

जिन चरणों को श्रीहरि (श्रीलालजी) ने अपने हाथों द्वारा चित्र-लेखनी के माध्यम से अपनी इच्छानुसार महावर से चित्रित किया है, जो अनेक प्रकार की क्रीड़ाओं में चतुरा गोपिकाओं (सखियों) के समूह से वन्दित हैं एवं जो अत्यन्त गुप्त भाव से उपनिषदों के हृदय में ही विद्यमान हैं; लास्य नृत्य से पूर्ण अद्वितीय लीला करती हुई, उन श्रीराधा के दोनों चरण मेरी गति हैं।

सान्द्रप्रेमरसौघवर्षिणि नवोन्मीलन्महामाधुरी – -साम्राज्यैकधुरीणकेलिविभवत्कारुण्यकल्लोलिनि ।
श्रीवृन्दावनचन्द्रचित्तहरिणीबन्धस्फुरद्वागुरे श्रीराधे नवकुञ्जनागरि तव क्रीतास्मि दास्योत्सवैः ॥ २०६॥



नव विलसित महामाधुरी की,
साम्राज्य शिखर क्रीड़ा सरिते !
है सांद्र प्रेम प्रवाह वर्षिणी,
है अतिशय करुणा भरिते !!
तुम श्रीवृन्दावन चंद्र चित्त मृग,
हेतु समुज्ज्वल रज्जु रूप !
है नव निकुंज नागरी राधे,
मैं क्रीता रस दास्यानुरूप !!
||206||

भावार्थ

घनीभूत प्रेम-रस के प्रवाह की वर्षा करने वाली, प्रतिक्षण उमगते हुए महामाधुर्य के अद्वितीय साम्राज्य की सर्वश्रेष्ठ केलि-सम्पत्ति से सम्पन्न रहने वाली, करुणा से भरी हुई सरिता के स्वरूप वाली, वृन्दावनचन्द्र (श्रीलालजी) के चित्त रूपी हिरण को वश में करने के लिए देदीप्यमान रज्जु स्वरूपिणी, नव निकुञ्ज की नागरी, हे श्रीराधे ! मैं आपके दास्य रूपी उत्सव के लिए खरीद ली गई हूँ।

स्वेदापूरः कुसुमचयनैर्दूरतः कण्टकाङ्को वक्षोजेऽस्यास्तिलकविलयो हन्त घर्माम्भसैव ।
ओष्ठः सख्या हिमपवनतः सव्रणो राधिके ते क्रूरास्वेवं स्वघटितमहो गोपये प्रेष्ठसङ्गम् ॥२०७॥



स्वेदाम्बु सिक्त है अंग दूर तक,
किया आपने पुष्प चयन !
हो गया तिलक का सम्मार्जन !!
वक्षोज हुए हैं क्षत विक्षत,
लग गए बहुत से कंटक वन !
हिम आद्र पवन के कारण हैं,
हो गये अधर पर नूतन व्रण !
यों वचन चातुरी से राधे
मैं गुप्त रखूँगी श्याम मिलन !!
||207||

भावार्थ

अहह हे श्रीराधिके ! आपके स्वयं के द्वारा रची गई, प्रियतम (श्रीलालजी) के साथ होने वाली प्रेम-क्रीड़ाओं को, स्फुट परिहास करने वाली सखियों से, मैं इस प्रकार कहकर छिपा लूँगी कि - "मेरी प्राणसखी के श्रीअंग से जो पसीना बह रहा है, वह दूर प्रदेश से फूल चुनकर लाने के कारण ही है (विहार से नहीं)। इनके युगल कुचों पर जो निशान दिखाई पड़ रहे हैं, वे काँटे लगने के कारण ही हैं (नखक्षत के नहीं)। पसीने से ही इनका तिलक मिट गया है (प्रियतम के संग से नहीं)। हमारी सखी के अधर अत्यन्त शीतल पवन स्पर्श के कारण ही क्षत-विक्षत हो रहे हैं (दन्त क्षत से नहीं)।"

पातं पातं पदकमलयोः कृष्णभृङ्गेण तस्याः स्मेरास्येन्दोर्मुकुलितकुचद्वन्द्वहेमारविन्दम् ।
पीत्वा वक्राम्बुजमतिरसन्नूनमन्तः प्रवेष्टुम् अत्यावेशान् नखरशिखया पाट्यमानं किमीक्षे ॥२०८॥



फिर फिर पदाम्बुजों में गिरकर,
अनुनयरत हो नव श्याम भ्रमर !
मंदस्मित मंडित मुखमधु पी,
कर रहा घात कुच मंडल पर !!
निश्चय ही चाह रहा प्रवेश,
मुकुलिंद हैमारविन्द भीतर !
कब इस झाँकी के दर्शन कर
मैं होऊँगी मज्जित रस सर !!
||208||

भावार्थ

मन्द-मन्द हास्य से युक्त तथा चन्द्र जैसे मुख वाली, उन श्रीप्रियाजी के चरण-कमलों में बार-बार गिरकर, श्रीकृष्ण (श्रीलालजी) रूपी भ्रमर द्वारा उनके मुख-कमल का रस पान करने के पश्चात्, अत्यधिक आवेश में होकर, निश्चय ही उनके कुच-कमलों के भीतर प्रवेश पाने के लिए, कनक-कमल की बन्द कली जैसे उनके दोनों कुचों को, श्रीलालजी के नखों से विदीर्ण होते हुए, क्या मैं देखूँगी ?

अहो तेऽमी कुञ्जस्तदनुपमरासस्थलमिदम् गिरिद्रोणी सैव स्फुरति रतिरङ्गे प्रणयिनी ।
न वीक्षे श्रीराधां हर हर कुतोपीति शतधा विदीर्येत प्राणेश्वरि मम कदा हन्त हृदयम् ॥ २०९॥



ये कुंजे वही वही अनुपम हैं,
रासस्थल सुषमा मंडित !
रति रंग समर आह्लाद दायिनी,
गिरि कंदरा सभी शोभित !!
है और सभी कुछ ज्यों की त्यों,
पर कहीं ना श्रीराधा दर्शित !
यह सोच हृदय मम प्राणेश्वरी,
हा! कब होगा शतधा खंडित !!
||209||

भावार्थ

आश्चर्य है कि ये कुजें वे ही हैं, यह अनुपम रासस्थल भी वही है तथा रति के रंग में अत्यन्त प्रिय लगने वाली पर्वत की कन्दरायें भी वही हैं; किन्तु अतिशय खेद की बात है कि कहीं भी श्रीराधाजी के दर्शन नहीं हो रहे हैं। हे प्राणेश्वरी ! इस कष्ट से मेरा हृदय सौ-सौ टुकड़े होकर कब विदीर्ण हो जायेगा ?

इहैवाभूत् कुञ्ज नवरतिकलामोहनतनोर् – अहो अत्रानृत्यद् दयितसहिता सा रसनिधिः ।
इति स्मारं स्मारं तव चरितपीयूषलहरीम् कदा स्यां श्रीराधे चकित इह वृन्दावनभुवि ॥२१०॥



था इसी कुंज में कभी हुआ,
राधामोहन का प्रथम मिलन !
प्रियतम के साथ यहीं पर उन,
रसनिधि ने किया मुग्ध नर्तन !!
कर इस प्रकार मैं पुनः पुनः,
तब लीला चरितामृत स्मरण !
अति चकित थकित सी कभी रहूँगी,
श्रीराधे तब वृन्दावन !!
||210||

भावार्थ

अहा हा ! मोहनांगी श्रीप्रियाजी की नवीन-नवीन रति की कलायें, इसी कुञ्ज में प्रकट हुई थीं तथा रस की सागर स्वरूपा उन श्रीप्रियाजी ने अपने प्रियतम (श्रीलालजी) के साथ इसी स्थल पर नृत्य किया था। हे श्रीराधे ! इस प्रकार अमृत की तरंगों के समान आपके चरित्रों को स्मरण कर-करके, मैं इस श्रीवृन्दावन भूमि में आश्चर्यचकित होकर कब रहूँगा ?

श्रीमद्बिम्बाधरे ते स्फुरति नवसुधामाधुरीसिन्धुकोटिर् -नेत्रान्तस्ते विकीर्णाद्भुतकुसुमधनुश्चण्डसत्काण्डकोटिः ।
श्रीवक्षोजे तवातिप्रमदरसकलासारसर्वस्वकोटिः श्रीराधे त्वत्पदानात् स्रवति निरवधिप्रेमपीयूषकोटिः ॥२११॥



तब सुन्दर बिम्बाधर स्फुरित,
नव सुधा माधुरी सिंधु कोटि
द्रक्कोरों से निःसृत होते,
मन्मथ के तीखे तीर कोटि
वक्षोज युगल अत्यंत प्रमद,
रसकला सार सर्वस्व कोटि
राधे तब पद युग से झरते,
निस्सीम प्रेम पीयूष कोटि
||211||

भावार्थ

हे श्रीराधे ! आपके बिम्ब फल के समान लाल-लाल शोभा से युक्त अधरों में नई-नई अमृत माधुरी के करोड़ों समुद्र उमड़ते रहते हैं, आपकी तिरछी चितवन कामदेव के करोड़ों तीव्र और अमोघ वाणों को अद्भुत रूप से विखेरती रहती है, आपके शोभाशाली वक्षोजों में अत्यन्त उन्मादपूर्ण रस की कलाओं के सार सर्वस्व स्फुरित होते रहते हैं एवं आपके चरण-कमलों से असीम प्रेमामृत अखण्ड रूप से निर्झरित होता रहता है।

सान्द्रानन्दोन्मदरसघनप्रेमपीयूषमूर्तेः श्रीराधाया अथ मधुपतेः सुप्तयोः कुञ्जतल्पे ।
कुर्वाणाहं मृदुमृदुपदाम्भोजसंवाहनानि शय्यान्ते किं किमपि पतिता प्राप्ततन्द्रा भवेयम् ॥२१२॥



निस्सीम प्रेम पीयूष मूर्ति,
आनन्दोन्मद नव नव रसघन
श्रीराधा संग रसिक माधव,
हों कुँज तल्प कर रहे शयन
अति मृदुल मृदुल कर से करती,
युग पद पद्मों का संवाहन
उनके पद प्रान्त लुढ़क कर मैं,
कब हो जाऊँगी तन्द्रित तन
||212||

भावार्थ

निकुञ्ज की शैया पर शयन करते समय, निविड़ आनन्द के उन्माद में घनीभूत रस एवं प्रेमामृत की मूर्त्ति श्रीराधा और, मधुपति (श्रीलालजी) के चरण-कमलों को अत्यन्त कोमलता पूर्वक दबाते-दबाते, क्या कभी मैं शैया के अन्तः भाग में ही लुढ़ककर, निद्रा के वशीभूत हो जाऊँगी ?

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्र

राधापादारविन्दोच्छलितनवरसप्रेमपीयूषपुञ्जे कालिन्दीकूलकुञ्ज हृदि कलितमहोदारमाधुर्यभावः ।
श्रीवृन्दारण्यवीथीललितरतिकलानागरीं तां गरीयो गम्भीरैकानुरागां मनसि परिचरन् विस्मृतान्यः कदा स्याम् ॥२१३॥



राधा पादारबिंद निःसृत,
नव रसद प्रेम पीयूष पुंज
उर में धर मधुर उदार भाव,
कालिंदी कूल निवास कुँज
वृन्दावन वीथी ललित कला,
रति नागरी अनुरागी गंभीर
मानस परिचर्या मग्न कभी,
मैं होऊँगी विस्मृत शरीर
||213||

भावार्थ

श्रीयमुनाजी के तट पर स्थित कुञ्ज में स्थित होकर, अपने हृदय में परम सुन्दर, अत्यन्त उदार एवं महा मधुर भाव (श्रीराधाकिंकरीभाव) धारण करके तथा श्रीराधा-चरण-कमल से उच्छलित नवीन रसमय प्रेमामृत पुंज से सम्पन्न होकर, उन नागरी श्रीराधा, जो गरिमायुक्त अद्वितीय अनुराग से भरी रहती हैं एवं वृन्दावन की गलियों में रति की ललित कलाओं का प्रदर्शन किया करती हैं, की मानसिक सेवा करता हुआ, मैं अन्य सब कुछ कब भूल जाऊँगा ?

अदृष्ट्वा राधाङ्के निमिषमपि तं नागरमणिम् तया वा खेलन्तं ललितललितानङ्गकलया ।
कदाहं दुःखाब्धौ सपदि पतिता मूच्छितवती न तामाश्वास्यार्त्ता सुचिरमनुशोचे निजदशाम् ॥२१४॥



खेलते हुये अत्यंत ललित,
कंदर्प कला क्षण क्षण नवीन
श्री अंक निमेष मात्र को मैं,
नागरमणि के दर्शन विहीन
कब दुःख सागर में पतित देखकर,
हो जाऊँगी मूर्क्षित तन
उनको आश्वासन दे ना सकी,
हो पुनः पुनः यह अनुशोचन
||214||

भावार्थ

उन नागरमणि (श्रीलालजी) को निमिष मात्र के लिए, श्रीराधा के अंक में न देखकर अथवा उन (श्रीप्रियाजी) के साथ काम की अत्यन्त ललित कलाओं से खेलते हुए न देखकर, उन श्रीप्रियाजी को धीरज बँधाये बिना ही, उसी समय दुःख के सागर में डूबकर मेरे मूर्छित हो जाने की आत्म विस्मृत दशा के सम्बन्ध में, मैं चिरकाल तक पश्चाताप कब करूँगी ? (अर्थात् उस दुःख के समय में, स्वयं सावधान रहकर, मैंने श्रीप्रियाजी की सेवा-सँभाल क्यों नहीं की इस असावधानी की दशा पर कब विचार करूँगी ?)

भूयोभूयः कमलनयने किं मुधा वार्यतेऽसौ वाङ्मात्रेण त्वदनुगमनं न त्यजत्येव धूर्त्तः ।
किञ्चिद् राधे कुरु कुचतटीप्रान्तमस्य प्रदीयश् – चक्षुर्द्वारा तमनुपतितं चूर्णतामेतु चेतः ॥२१५॥



हे कमलनयनी क्यों वचन मात्र से,
करती हो इनका वारण
अनुगमन तुम्हारा नहीं छोड़ते,
धूर्तराज तो सुनो कथन
क्षण भर किंचित निज कुच तट का,
तुम इनको करवा दो दर्शन
इनके ही दृक पथ से गिरकर,
होगा विचूर्ण इनका मृदु मन
||215||

भावार्थ

हे कमलनयने (श्रीप्रियाजी) ! इन (श्रीलालजी) को आप बार-बार व्यर्थ ही क्यों रोक रही हो, ये धूर्त्त (श्रीलालजी) कहने मात्र से तो आपका पीछा करना छोड़ते ही नहीं हैं; अतः हे श्रीराधे ! आप इन (श्रीलालजी) को अपने कुच तटी प्रान्त की थोड़ी सी झाँकी दिखा दीजिये, जिससे कि इनका कोमल चित्त, इनके नेत्र मार्ग से, उसमें गिरकर, पूर्णतः चूर-चूर हो जाय।

किं वा नस्तैः सुशास्त्रैः किमथ तदुदितैर्वर्त्मभिः सद्गृहीतैर् -यत्रास्ति प्रेममूर्त्तर्नहि महिमसुधा नापि भावस्तदीयः । किं वा
वैकुण्ठलक्ष्म्याप्यहह परमया यत्र मे नास्ति राधा किन्त्वाशाप्यस्तु वृन्दावनभुवि मधुरा कोटिजन्मान्तरेपि ॥२१६॥



उन शास्त्रों उन पंथों से क्या,
अपनावे भले सभी सज्जन
जिनमें हैं प्रेममूर्ति श्यामा का,
महिमामृत ना भाव वर्णन
अद्भुत बैकुंठ धाम लक्ष्मी,
पर वहाँ ना श्रीराधा दर्शन
अतएव कोटि जन्मों में भी,
मेरा वांछित श्रीवृन्दावन
||216||

भावार्थ

हमें उन सुन्दर शास्त्रों से क्या प्रयोजन है तथा उनसे प्रतिपादित एवं साधुजनों द्वारा अपनाये गये मार्गों से भी क्या लेना है, जिनमें प्रेममूर्त्ति (श्रीप्रियाजी) की अमृतमयी महिमा का अभाव है और उनके प्रति भाव भी सर्वथा नहीं है। अहा हा! हमें उस सर्वोत्कृष्ट वैकुण्ठ धाम की शोभा-सम्पत्ति से भी क्या लाभ है, जहाँ पर हमारी श्रीराधा नहीं हैं; किन्तु कोटि-कोटि जन्मों में भी, श्रीवृन्दावन की भूमि में ही, हमारी ऐसी मधुर आशा बनी रहे।

श्याम श्यामेत्यनुपमरसापूर्णवर्णैर्जपन्ती स्थित्वा स्थित्वा मधुरमधुरोत्तारमुच्चारयन्ती ।
मुक्तास्थूलान्नयनगलितानश्रुबिन्दून्वहन्ती हृष्यद्रोमा प्रतिपदचमत्कुर्वती पातु राधा ॥२१७॥



श्याम श्याम अनुपम नामों का,
करती मृदु मृदु उच्चारण
मधुर मधुर उच्च स्वर से,
रह रह कर उठती है गायन
अश्रु बिंदु झरते नैनों से,
सुन्दर जैसे मुक्ताकण
तन पुलक चमत्कृत
श्रीराधा रक्षक हो,
मुझ शरणागत जन
||217||

भावार्थ

"हे श्याम ! हे श्याम !" - इस प्रकार अनुपम रस से पूर्ण वर्णों का जाप करती हुई, रुक-रुककर अति मधुर एवं उच्च स्वर से उसी नाम का उच्चारण करती हुई, बड़े-बड़े नेत्रों से मोतियों जैसे अश्रु-बिन्दुओं को ढलकाते हुए, रोमांच से भूषित एवं पल-पल में चमत्कार उत्पन्न करने वाली, श्रीराधा हमारी रक्षा करें।

तादृङ्मूर्तिर्व्रजपतिसुतः पादयोर्मे पतित्वा दन्ताग्रेणाथ धृततृणकं काकुवादान्ब्रवीति ।
नित्यं चानुव्रजति कुरुते सङ्गमायोद्यमं चे त्युद्वेगं मे प्रणयिनि किमावेदयेयं नु राधे ॥२१८॥



नित्य प्रति श्री ब्रिजपति कुमार
राधे,समस्त बृज जन मोहन
दातों तृणधर कर चरणों में,
गिर कहते हैं बहु विनय वचन
है प्रेममयी वे इस प्रकार,
उद्यम करते तब हेतु मिलन
मैं अपने मन की व्यथा आपसे,
करूँ किस तरह आवेदन
||218||

भावार्थ

हे प्रणयिनि ! हे श्रीराधे ! मोहन मूर्त्ति व्रजेशनन्दन (श्रीलालजी) मेरे चरणों में गिरकर एवं दाँतों में तिनका दबाकर मुझसे चाटुकारितापूर्ण दीन वचन बोलते रहते हैं और नित्य ही मेरे पीछे-पीछे चलते रहते हैं। ये सब यत्न, वे आपसे उनका सम्मिलन करवाने के लिए किया करते हैं। उस समय के, इस प्रकार के, अपने मानसिक उद्वेग को, मैं आपके सम्मुख कहाँ तक निवेदन करूँ ? (अर्थात् उस समय मैं बड़े असमञ्जस में पड़ जाती हूँ कि इस समय मैं क्या करूँ, क्यों कि मेरे सामने एक ओर तो प्रीतम की असहनीय दीन दशा होती है, तो दूसरी ओर आपके सुख की चिन्ता भी बनी रहती है।)

चलल्लीलागत्या क्वचिदनुचलद्धंसमिथुनम् क्वचित् केकिन्यये कृतनटनचन्द्रक्यनुकृति ।
लताश्लिष्टं शाखिप्रवरमनुकुर्वत् क्वचिदहो विदग्धद्वन्द्वं तद् रमत इह वृन्दावनभुवि ॥२१९॥



हंस हंसिनी की विचित्र,
लीला गति का अनुकरण करे
कहीं मोरनी के आगे
नर्तित मयूर अनुसरण करें
कहीं लता से आलिंगित,
नव तरु की वे भंगिमा धरे
श्री वृन्दावन रमणशील,
ये रसिक युगल मनहरण करें
||219||

भावार्थ

कभी तो लीलापूर्ण गति से चलते हुए हंस-हंसिनी की चाल का अनुसरण करते हैं, कभी किसी मयूरी के आगे नाचते हुए मोर का अनुकरण करने लगते हैं और कभी किसी लता से लिपटे हुए वृक्ष की ज्यों की त्यों नकल करते हैं। अहो ! वे विदग्ध युगल (श्रीप्रियाजी एवं श्रीलालजी) इस वृन्दावन की भूमि में विहार कर रहे हैं।

व्याकोशेन्दीवराष्टापदकमलरुचाहारि कान्त्या स्वया यत् कालिन्दीयं सुरभिमनिलं शीतलं सेवमानम् ।
सान्द्रानन्दं नवनवरसं प्रोल्लसत्केलिवृन्दम् ज्योतिर्द्वन्द्वं मधुरमधुरं प्रेमकन्दं चकास्ति ॥ २२० ॥



विकसित नील स्वर्ण अम्बुज छवि,
अंग कांति कर रही हरण
कालिंदी तट शीतल मंद,
सुगंध पवन करती सेवन
नव नव केलि कला विकसित,
कर मधुर मधुर आनंद सघन
प्रेमकंद वह ज्योति द्वन्द,
सर्वदा प्रकाशित वृन्दावन
||220||

भावार्थ

जो अपनी कान्ति से खिले हुए नील कमल एवं स्वर्ण कमल की शोभा को हरण करने वाला है, जो श्रीयमुनाजी की शीतल एवं सुगन्धित वायु का सेवन कर रहा है, जो सघन आनन्द की मूर्त्ति है, जो नई-नई रसमयी केलि की कलाओं को उल्लसित करने वाला है एवं मधुरातिमधुर प्रेम का मूल कारण है; ऐसा ज्योतिर्युगल प्रकाशित हो रहा है।

कदा मधुरसारिकाः स्वरसपद्यमध्यापयत् प्रदाय करतालिकाः क्वचन नर्तयत् केकिनम् । क्वचित्
कनकवल्लरीवृततमाललीलाधनम् विदग्धमिथुनं तदद्भुतमुदेति वृन्दावने ॥२२१॥



कभी मृदुल स्वर सारी को,
रसमय पद्यों का अध्यापन
करताली दे कभी मयूरों से,
करवाता रस नर्तन
कनकलता आलिंगित तरु,
तमाल लीला घन रसिक मिथुन
परम विदग्ध नित्य विलसित,
सर्वदा सुखद श्रीवृन्दावन
||221||

भावार्थ

कभी तो मधुर स्वर वाली मैनाओं को निज रस के पद्यों को पढ़ाते हुए, कभी अपने हाथ से ताली बजा-बजाकर मोरों को नचाते हुए और कभी कनक लता से लिपटे हुए तमाल वृक्ष के अनुकरण की लीला को, धन की तरह सर्वस्व मानते हुए, वह चतुर युगल वृन्दावन में अद्भुत रूप से प्रकाशित हो रहा है।

पत्रालीं ललितां कपोलफलके नेत्राम्बुजे कज्जलम् रङ्गं बिम्बफलाधरे च कुचयोः काश्मीरजालेपनम् ।
श्रीराधे नवसङ्गमाय तरले पादाङ्गुलीपङ्क्तिषु न्यस्यन्ती प्रणयादलक्तकरसं पूर्णा कदा स्यामहम् ॥ २२२॥



पत्रावली ललित कपोल पटल,
नयनाम्बुज काजल रंग अधर
पादांगुलियों में यावक रस,
केसर का लेपन कुच युग पर
नव संगम चपलें श्रीराधे,
नख शिख सर्वांग सुसज्जित कर
कब मैं कृतार्थ हो पाऊँगी,
कर प्रस्तुत तुम्हें अनंग समर
||222||

भावार्थ

नव संगम के लिए आतुर चित्त वाली हे श्रीराधे ! आपके कपोलों पर सुन्दर पत्रावली की रचना करते हुए, कमल जैसे नेत्रों में काजल लगाते हुए, बिम्ब फल के समान अरुण अधरों में रंग भरते हुए, दोनों कुचों पर केशर का लेप करते हुए एवं चरणों की अँगुलियों में प्रीति पूर्वक महावर लगाते हुए, मैं कब पूर्ण मनोरथा होऊँगी ?

श्रीगोवर्धन एक एव भवता पाणौ प्रयत्नाद् धृतो – राधावर्ष्माणि हेमशैलयुगले दृष्टेऽपि ते स्याद् भयम् ।
तद् गोपेन्द्रकुमार मा कुरु वृथा गर्व परीहासतः कह्येवं वृषभानुनन्दिनि तव प्रेयांसमाभाषये ॥२२३॥



कर बहुत प्रयत्न किया तुमने,
गोवर्धन एक मात्र धारण
डर जाओगे राधा उर पर,
युग स्वर्ण शैल के कर दर्शन
अतएव व्यर्थ मत करो गर्व,
तुम मेरी बात सुनो मोहन
श्रीराधे प्रियतम से कब यों,
कह पाऊँगी परिहास वचन
||223||

भावार्थ

"हे गोपेन्द्रकुमार (श्रीलालजी) ! आपने तो बहुत प्रयत्न से केवल एक गोवर्द्धन पर्वत को ही अपने हाथ पर उठाया था, श्रीराधा के शरीर में तो स्वर्ण के दो पर्वत हैं, जिन्हें देखते ही आपको भय लगने लगेगा; अतः आप व्यर्थ में गर्व मत करो।" - हे वृषभानुनन्दिनी (श्रीप्रियाजी)! मैं आपके प्रीतम (श्रीलालजी) से इस प्रकार परिहास करते हुए कब सम्भाषण करूँगी ?

अनङ्गजयमङ्गलध्वनितकिङ्किणीडिण्डिमः स्तनादिवरताडनैर्नखरदन्तघातैर्युतः ।
अहो चतुरनागरीनवकिशोरयोर्मञ्जुले निकुञ्जनिलयाजिरे रतिरणोत्सवो जृम्भते ॥ २२४॥



हो रहा जहाँ कल किंकिणी ध्वनि का,
विजय घोष मंगल मनहर
कुच ताड़नादि वर नख प्रहार,
संयुत माधक मधुपान अधर
अति नवल नागरी नवकिशोर का,
मधुर महोत्सव अति रसभर
मंजुल नव कुंज भवन प्रांगण,
शोभामय जयति अनंग समर
||224||

भावार्थ

अहा हा! निकुञ्ज भवन के सुन्दर आँगन में चतुर नागरी (श्रीप्रियाजी) एवं नव किशोर (श्रीलालजी) के मध्य सुरत-संग्राम का उत्सव विस्तार को प्राप्त हो रहा है, जहाँ पर किंकणी की ध्वनि, काम पर विजय प्राप्त करने का मंगल-गान कर रहे नगाड़े की भाँति लग रही है, स्तन आदि के स्पर्श पर दोनों के बीच हो रही कहन-सुनन रूपी श्रेष्ठ डाँट-फटकार, एक दूसरे को ताल ठोकने के शब्द के रूप में सुनायी पड़ रही है तथा नखों एवं दाँतों के निशान, घात-प्रतिघात के रूप में दिखाई पड़ रहे हैं।

यूनोर्वीक्ष्य दरत्रपानटकलामादीक्षयन्ती दृशो – वृण्वाना चकितेन सञ्चितमहारत्नस्तनं चाप्युरः ।
सा काचिद् वृषभानुवेश्मनि सखीमालासु बालावली मौलिः खेलति विश्वमोहनमहासारूप्यमाचिन्वती ॥ २२५॥



युवती युवकों के हाव भाव का,
कहीं क्षणिक कर अवलोकन
दीक्षित से हुए नयन सचकित,
आवृत कर लिए सुरत्न स्तन
सारूप्य महा संचित करती सी,
विश्व विमोहन मन मोहन
ब्रज नवल किशोरी मणि राधा,
हैं खेल रहीं वृषभानु भवन
||225||

भावार्थ

युवक एवं युवतियों के मध्य में होने वाले, भय एवं लज्जा से भरे हुए, नट-कला जैसे रति भाव प्रदर्शन को देखकर, जिन्होंने अपने नेत्रों को इस नट-कला से दीक्षित किया है तथा महा रत्नों के कोष रूपी स्तन मण्डल वाले वक्षस्थल को, अपने आँचल से, चकित भाव से, ढँक लिया है; संसार को विमोहित करने वाले रूप और लावण्य का संचय करती हुई, मुग्धा बालाओं की शिरोमणि, कोई अनिर्वचनीया श्रीराधा, वृषभानु के भवन में, सखियों के साथ खेल रही है।

ज्योतिःपुञ्जद्वयमिदमहो मण्डलाकारमस्याः वक्षस्युन्मादयति हृदयं किं फलत्यन्यदग्रे ।
भ्रू कोदण्डं नकृतघटनं सत्कटाक्षौघबाणैः प्राणान् हन्यात् किमु परमतो भावि भूयो न जाने ॥ २२६॥



युग ज्योति पुंज मंडलाकार,
इनके वक्षः स्थल पर शोभित
ये तो केवल दर्शन से ही,
कर रहे हृदय को उन्मादित
जब बिना कटाक्ष बाण के ही,
भ्रू चाप कर रहा हरण प्राण
इसके आगे फिर क्या होना,
हे उस भावी का किसे ज्ञान
||226||

भावार्थ

आश्चर्य है कि इन अज्ञात यौवना श्रीराधा के वक्षस्थल पर सुशोभित, मण्डलाकार ये दो ज्योति-पुंज, अभी ही हृदय को उन्मत्त बना रहे हैं, तो फिर आगे क्या फल देंगे (अर्थात् यौवन श्री से सम्पन्न होने पर क्या करेंगे); इसी प्रकार कुटिल कटाक्षों के अमोघ वाणों का संयोग प्राप्त किये बिना ही, ये भौंह रूपी धनुष, प्राणों का हनन कर रहे हैं, तो भृकुटि विलास युक्त होने पर, इससे अधिक क्या होगा, ये मैं नहीं जानता।

भोः श्रीदामन्सुबल वृषभ स्तोककृष्णार्जुनाद्याः किं वो दृष्टं मम नु चकिता दृग्गता नैव कुञ्ज ।
काचिद् देवी सकलभुवनाप्लाविलावण्यपूरा दूराद् एवाखिलमहरत प्रेयसो वस्तु सख्युः ॥२२७॥



हे सुबल सुदामा श्रीदामा,
अर्जुन इत्यादि सुहृद परिजन
तुमने देखा क्या कुंजों में,
जा सके न मेरे चकित नयन
अपने लावण्य प्रवाहों से
आप्लावित सी करती त्रिभुवन
कोई देवी कर गयी
दूर से ही मेरा सर्वस्व हरण
||227||

भावार्थ

हे श्रीदामा, सुबल, वृषभ, स्तोक कृष्ण, अर्जुन आदि सखाओ ! मेरी चकित दृष्टि तो कुंज के भीतर जा ही नहीं पाई, अपने लावण्य के प्रवाह में, सम्पूर्ण भुवनों को डुबा देने वाली, किसी अनिर्वचनीय देवी ने, दूर से ही, तुम्हारे प्रिय सखा मुझ कृष्ण की सम्पूर्ण वस्तुओं का हरण कर लिया है। क्या तुम सबने भी ये देखा है?

गता दूरे गावो दिनमपि तुरीयांशमभजद् वयं हातुं क्लान्तास्तव च जननी वर्मनयना ।
अकस्मात् तूष्णीके सजलनयने दीनवदने लुठत्यस्यां भूमौ त्वयि नहि वयं प्राणिणिषवः ॥ २२८॥



गौएँ अति दूर गयी दिन भी,
रह गया मात्र बस एक प्रहर
हम तुन्हें छोड़ कैसे जावें,
जननी हैं राह देखती घर
तब अकस्मात् इस मौन सजल,
दृग दीन वदन भू लुंठन पर
हम प्राण नहीं रख पाएँगे,
हे श्याम सुजान उठो सत्वर
||228||

भावार्थ

गायें दूर निकल गई हैं, दिन भी चतुर्थांश शेष रह गया है, हम लोग भी आपको छोड़कर नहीं जा सकते और तुम्हारी माताश्री की आँखें भी तुम्हारे आने की प्रतीक्षा में बाट देख रही होंगी; किन्तु इस प्रकार तुम्हारे अचानक ही चुप हो जाने, नैनों के अश्रुपूरित होने तथा म्लान मुख होकर भूमि में लोटने के कारण, हम सब भी अपने प्राणों को धारण करके नहीं रह सकते हैं।

नासाग्रे नवमौक्तिकं सुरुचिरं स्वर्णोज्ज्वलं बिभ्रती नानाभङ्गिरनङ्गरङ्गविलसल्लीलातरङ्गावलिः ।
राधे त्वं प्रविलोभय व्रजमणिं रत्नच्छटामञ्जरी चित्रोदञ्चितकञ्चकस्थगितयोर्वक्षोजयोः शोभया ॥२२९॥



नासाग्र नवल मुक्ता सुरुचिर,
कनकोज्जवल अतिशोभायमान
नव नव अनंग भंगिमा ललित,
लीला तरंग की तुम निधान
बहु रत्नावली चित्र अंकित,
कंचुकी अलंकृत अपरिमान
राधे उरोज युग की छवि से,
तुम मुग्ध करो बृजमणि सुजान
||229||

भावार्थ

हे श्रीराधे ! नासिका के अग्र भाग में स्वर्ण से भी उज्ज्वल, सुन्दरतम एवं नवीन बेसर को धारण किये हुए तथा भावों को अभिव्यक्त करने की अनेकानेक चेष्टाओं से युक्त, काम के रंग में रंगे हुए विलासों की लीलामयी तरंगों से सुशोभित तथा रत्नों की छटाओं के समूह से युक्त, चित्र-विचित्र बनी हुई एवं ऊपर की ओर उठी हुई, कंचुकी से ढके हुए उरोजों की शोभा से, आप व्रजमणि (श्रीलालजी) को सब प्रकार से प्रलोभित करो।

अप्रेक्षे कृतनिश्चयापि सुचिरं वीक्षेत दृक्कोणतो मौने दार्यमुपाश्रितापि निगदेत् तामेव याहीत्यहो ।
अस्पर्शे सुधृताशयापि करयोर्धृत्वा बहिर्यापयेद् राधाया इति मानदुः स्थितिमहं प्रेक्षे हसन्ती कदा ॥ २३०॥



हाँ देख रही दृग कोरों से,
कर नहीं देखने का निश्चय
फिर वहीं चले जाओ कहती,
लेकर के सुदृण मौन आश्रय
छूने का नहीं विचार किन्तु,
कर कमल पकड़ करती बाहर
वह मान दशा श्रीराधा की,
कब देखूँगी मैं हंस हंस कर
||230||

भावार्थ

आश्चर्य है कि प्रियतम (श्रीलालजी) की ओर न देखने का निश्चय करके भी, आप अपने नेत्रों के कोणों से उन्हें चिरकाल तक देख ही लेती हैं, मौन व्रत रहनेका दृढ़तापूर्वक आश्रय लेने पर भी, 'उसी के पास जाओ' - इस प्रकार कह उठती हैं एवं स्पर्श न करने का सुदृढ़ विचार करके भी, उनके दोनों हाथ पकड़कर, उन्हें कुञ्ज से बाहर निकाल देती हैं। श्रीराधा की ऐसी मानदायिनी स्थिति को मैं हँसते हुए कब देखूँगी ?

रसागाधे राधाहृदि सरसि हंसः करतले लसद्वंशस्त्रोतस्यमृतगुणसङ्गः प्रतिपदम् ।
चलत्पिच्छोत्तंसः सुरचितवतंसः प्रमदया स्फुरद्गुञ्जगुच्छः स हि रसिकमौलिर्मिलतु माम् ॥२३१॥



सिर शोभित
मोरमुकुट चंचल,
प्रमदा विरचित
श्रुतिकुण्डलवर
उर दीप्त गुंज मालाधारी,
अपनाये मुझे रसिक शेखर
||231||

भावार्थ

जो अथाह रस से भरे हुए, श्रीराधा के हृदय रूपी सरोवर के हंश हैं, हाथ में सुशोभित वंशी के स्रोतों से निकलने वाले श्रीप्रियाजी के अमृतमय गुणों से जिनका रोम-रोम तथा प्रत्येक इन्द्रिय प्रतिक्षण आसक्त बनी रहती है, जिनके सिर पर चंचल मोर मुकुट, कानों में श्रीप्रियाजी अथवा किसी सखी द्वारा सुरचित कानों के आभूषण एवं गले में प्रकाशमान गुंजाओं की माला सुशोभित है; वे रसिक शेखर (श्रीलालजी) ही मुझे मिलें।

अकस्मात् कस्याश्चिन् नववसनमाकर्षति परम् मुरल्या धम्मिल्ले स्पृशति कुरुतेन्याकरधृतिम् ।
पतन् नित्यं राधापदकमलमूले व्रजपुरे तदित्थं वीथीषु भ्रमति स महालम्पटमणिः ॥२३२॥



वे अकस्मात ही किसी एक का
करते हैं वस्त्राकर्षण
दूसरी किसी के केश पाश को,
मुरली से छूते क्षण क्षण
फिर अन्य किसी का कर ग्रहण,
पर राधा पद पंकज लुंठन
ब्रजपुर गलियों में इस प्रकार,
लम्पट मणि करते सदा भ्रमण
||232||

भावार्थ

अचानक किसी एक गोपी के नवीन वस्त्र को खींचते हैं, तो किसी दूसरी गोपी के केशपाश को मुरली से स्पर्श करते हैं तथा किसी अन्य गोपी के हाथ को ही पकड़ लेते हैं; किन्तु श्रीराधा के चरण कमलों के मूल में नित्य गिरते ही रहते हैं। इस प्रकार व्रजपुर की गलियों में, वे महा लम्पट शिरोमणि घूमते रहते हैं।

एकस्या रतिचौर एव चकितं चान्यास्तनान्ते करम् कृत्वा कर्षति वेणुनान्यसुदृशो धम्मिल्लमल्लीस्रजम् ।
धत्तेन्याभुजवल्लिमुत्पुलकितां सङ्केतयत्यन्यया राधायाः पदयोर्तुठत्यलममुं जाने महालम्पटम् ॥ २३३॥



रतिचोर किसी का अन्य किसी के,
चकित वदन कर कुच धारण
फिर अन्य किसी की कबरी स्थित,
मल्लिका वेणु से कर कर्षण
पुलकित भुज लता किसी की धर,
देता औरों को मिलन वचन
जानती भली विधि अतिलम्पट,
करता राधा पद तल लुंठन
||233||

भावार्थ

किसी एक गोपी के साथ लुक-छिपकर ही प्रेम करते हैं, किसी अन्य के स्तन पर चकित भाव से हाथ रखते हैं, किसी अन्य सुन्दर युवती की वेणी में लगी चमेली की माला को वेणु के द्वारा खींचते हैं, किसी अन्य की रोमांचित भुजलता को अपने ऊपर रख लेते हैं तथा किसी अन्य को अपने साथ किसी एकान्त कुञ्ज में मिलने का संकेत करते हैं; किन्तु श्रीराधा के चरणों में केवल लोटते ही रहते हैं। मैं ऐसे उस महा लम्पट को अच्छी तरह से जानती हूँ।

प्रियांसे निक्षिप्तोत्पुलकभुजदण्डः क्वचिदपि भ्रमन्वृन्दारण्ये मदकलकरीन्द्राद्भुतगतिः ।
निजां व्यञ्जन्नत्यद्भुतसुरतशिक्षां क्वचिदहो रहः कुञ्ज गुञ्जाध्वनितमधुपे क्रीडति हरिः ॥२३४॥



धर प्रिया स्कंध
रोमांचित कर,
हरि गजगति करते
कभी भ्रमण
फिर मधुकर गुंजित
केलिकुंज में,
नव नव सुरत
कला शिक्षण
||234||

भावार्थ

आश्चर्य है कि श्रीहरि (श्रीलालजी) कभी तो श्रीप्रियाजी के कन्धों पर अपनी रोमांचित भुजाओं को रखकर, मदोन्मत्त गजराज की भाँति, अद्भुत गति से, श्रीवृन्दावन में भ्रमण करते रहते हैं और कभी भौंरों की गुंजन से गुंजारित, एकान्त कुञ्ज में, अपनी अति विचित्र सुरत-शिक्षा को प्रकट करते हुए, खेलते रहते हैं।

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्र

दूरे सृष्ट्यादिवार्त्ता न कलयति मनाङ्गारदादीन् स्वभक्तान् श्रीदामाद्यैः सुहृद्भिर्न मिलति हरति स्नेहवृद्धिं स्वपित्रोः ।
किन्तु प्रेमैकसीमां मधुररससुधासिन्धुसारैरगाधाम् श्रीराधामेव जानन्मधुपतिरनिशं कुञ्जवीथीमुपास्ते ॥ २३५॥



सृजनादि वार्ता रही दूर,
अपने भक्तों का भी न ध्यान
सुहृदों से मिलन न पितृवर्ग के ,
स्नेह मान का रहा भान
केवल अगाध माधुर्य सुधा,
रस सिंधु मात्र का उन्हें ज्ञान
अतएव प्रेम सीमा राधा की,
कुंज सदा शोभित सुजान
||235||

भावार्थ

सृष्टि की रचना-पालन-संहार की बात तो दूर रही, श्रीनारदजी आदि अपने भक्तों का भी किंचित मात्र ध्यान नहीं करते,
श्रीदामा आदि सुहृदों से भी नहीं मिलते तथा अपने पितृ वर्ग माता-पिता आदि से भी स्नेह की वृद्धि नहीं करते;
किन्तु प्रेम की एकमात्र सीमा एवं अत्यन्त गंभीर मधुर रसामृत सागर की सार स्वरूपा, श्रीराधा को ही जानते हुए,
मधुपति (श्रीलालजी) निरन्तर कुञ्ज वीथियों की ही उपासना किया करते हैं।

सुस्वादुसुरसतुन्दिलमिन्दीवरवृन्दसुन्दरं किमपि ।
अधिवृन्दाटवि नन्दति राधावक्षोजभूषणं ज्योतिः ॥ २३६॥



सुस्वादु सुरस
परिपुष्ट नवल,
इंदीवर वृन्द
सदृश् सुन्दर
राधा उर भूषण
ज्योति पुंज,
आनंदित श्री वृन्दावन घर
||236||

भावार्थ

अत्यन्त स्वादिष्ट तथा मधुर रस से अत्यधिक भरी हुई, नील कमलों के समूह के समान सुन्दर एवं श्रीराधा के उरोजों की भूषण स्वरूपा, कोई अनिर्वचनीय ज्योति (श्रीलालजी), वृन्दावन में आनन्दित हो रही है।

कान्तिः कापि परोज्ज्वला नवमिलच्छ्रीचन्द्रिकोद्भासिनी रामाद्यद्भुतवर्णकाञ्चितरुचिर्नित्याधिकाङ्गच्छविः ।
लज्जानम्रतनुः स्मयेन मधुरा प्रीणाति केलिच्छटा सन्मुक्ताफलचारुहारसुरुचिः स्वात्मार्पणेनाच्युतम् ॥२३७॥



नव शोभामयी चन्द्रिका सी,
अद्भुत ललनामणि गण भूषण
मुक्ताफल चारु हार सुन्दर,
अंगच्छवि अधिकाधिक क्षण क्षण
लज्जा विनम्र मुख मधुरस्मित,
कल केलि कलाओं की निधान
कोई परमोज्जवल श्री प्रसन्न करतीं,
हरि को कर आत्मदान
||237||

भावार्थ

जो प्रतिक्षण नवल रूप में प्रकट होने वाली शोभा रूपी चाँदनी का प्रकाश करने वाली हैं, जो लक्ष्मी आदि सभी से अति अद्भुत वर्ण वाली स्वर्ण कान्ति से युक्त हैं, जिनके अंगों की छवि क्षण-क्षण में बढ़ती रहती है, जो लज्जा से झुकी हुई, मन्द-मन्द रूप से हँसती हुई और विविध लीला-विलासों की छटा से युक्त हैं, जोउज्ज्वल मोतियों से रचित रमणीय हार की सुन्दर कान्ति से सुशोभित हैं; वे कोई अनिर्वचनीय परम उज्ज्वल कान्ति से सम्पन्न श्रीराधा, अपने आत्म समर्पण के द्वारा, अपने अनन्य व्रत से कभी च्युत न होने वाले प्रीतम (श्रीलालजी) को प्रसन्न कर रही हैं।

यन् नारदाजेशशुकैरगम्यं वृन्दावने वञ्जुलमञ्जुकुञ्ज ।
तत् कृष्णचेतोहरणैकविज्ञमत्रास्ति किञ्चित् परमं रहस्यम् ॥२३८॥



श्री कृष्ण चित्त अपहरण कुशल,

नारद अज शिव शुक अति अगम्य

अद्भुत रहस्य हैं यहाँ एक,

वृन्दावन वंजुल कुंज रम्य

||238||

भावार्थ

जो नारदजी, ब्रह्माजी, शंकरजी और शुकदेवजी आदि से अगम्य हैं, वह श्रीकृष्ण (श्रीलालजी) के चित्त को चुराने में एकमात्र चतुर, कोई अनिर्वचनीय रहस्य (श्रीप्रियाजी), श्रीवृंदावन की मनोहर अशोक कुंज में विराजमान है।

लक्ष्या यश्च न गोचरीभवति यन्नापुः सखायः प्रभोः सम्भाव्योपि विरञ्चिनारदशिवस्वायम्भुवाद्यैर्न यः ।
यो वृन्दावननागरीपशुपतिस्त्रीभावलभ्यः कथम् राधामाधवयोर्ममास्तु स रहोदास्याधिकारोत्सवः ॥ २३९॥



श्री लक्ष्मी के न नयन गोचर,
हरि सखा वृन्द अज्ञात स्वाद
विधि नारद शिव स्वायम्भुव को,
जो प्राप्त नहीं दुर्लभ प्रसाद
वृन्दावन नवल नागरी गोपी,
भावाश्रित जन मात्र सुलभ
राधा माधव का सरस दास्य,
हो प्राप्त मुझे अतीव दुर्लभ
||239||

भावार्थ

जो लक्ष्मीजी के मन, वाणी और इन्द्रियों से दूर की बात है, जो प्रभु (श्रीलालजी) के सखागणों को भी प्राप्त नहीं है, जो ब्रह्माजी, नारदजी, शंकरजी और सनकादिकों के लिए भी सम्भावनीय नहीं है जो वृन्दावन की नागरी गोपियों के भाव (श्रीराधाकिंकरीभाव) से ही प्राप्त होता हैं; श्रीराधा-माधव (श्रीप्रियाजी एवं श्रीलालजी) के, उस ऐकान्तिक दास्य रूपी उत्सव का अधिकार, मुझे कैसे प्राप्त हो ?

उच्छिष्टामृतभुक्तवैव चरितं शृण्वंस्तवैव स्मरन् पादाम्भोजरजस्तवैव विचरन् कुञ्जआंस्तवैवालयान् ।
गायन् दिव्यगुणांस्तवैव रसदे पश्यंस्तवैवाकृतिम् श्रीराधे तनुवाङ्मनोभिरमलैः सोऽहं तवैवाश्रितः ॥ २४०॥



उच्छिष्टामृत तब भोजन लीला,
चरितामृत नित्य श्रवण
तब पादाम्बुज रज रस स्मरण,
नित्य प्रति कुञ्जालय विचरण
रसमय तब मधुराकृति दर्शन,
नव नित्य गुणावली का गायन
मन वचन कर्म रस दे राधे,
मैं मात्र तुम्हारा आश्रित जन
||240||

भावार्थ

हे रस को देने वाली श्रीराधे ! तुम्हारे अमृततुल्य उच्छिष्ट (जूँठन) का भोजन करती हुई, तुम्हारे ही चरित्रों को सुनती हुई, तुम्हारे ही चरण-कमलों की रज का स्मरण करती हुई, तुम्हारे ही कुञ्ज-भवनों में विचरण करती हुई, तुम्हारे ही दिव्य गुणों का गायन करती हुई एवं तुम्हारी ही मूर्त्ति का दर्शन करती हुई, मैं शुद्ध तन, मन और वाणी से, केवल तुम्हारी ही आश्रिता हूँ।

क्रीडन्मीनद्वयाक्ष्याः स्फुरदधरमणीविद्रुमश्रोणिभार – द्वीपायामोन्तरालस्मरकलभकटाटोपवक्षोरुहायाः ।
गम्भीरावर्त्तनाभेर्बहुलहरिमहाप्रेमपीयूषसिन्धोः श्रीराधायाः पदाम्भोरुहपरिचरणे योग्यतामेव चिन्वे ॥२४१॥



दृग चपल मनोहर मीन युग्म,
विद्रुम मणि सुन्दर अरुण अधर
कंदर्प तरंगित श्रोणि द्वीप,
करि शावक कुम्भ उरोज सुघर
गंभीर नाभि आवर्त सरस,
श्री कृष्ण प्रणय रस की सागर
मैं राधा पद परिचर्या की,
योग्यता ढूँढतीं निशि वासर
||241||

भावार्थ

जो श्रीहरि (श्रीलालजी) के लिए प्रेम रूपी अमृत के अत्यन्त सघन एवं विशाल सागर स्वरूपा हैं, जिसमें उनके दोनों नेत्र ही मर्छालयों की भाँति खेल रहे हैं, उनके अधर ही विद्रुम मणि की तरह चमक रहे हैं, उनका भारी कटि-प्रदेश ही द्वीप सदृश दिखाई पड़ रहा है, उनके उरोज ही उमंग भरे कामदेव रूपी हाथी के बच्चों के गण्डस्थलों जैसे लग रहे हैं एवं उनकी नाभि ही गंभीर भँवर के समान प्रतीत हो रही हैं; मैं ऐसी सिन्धु स्वरूपा श्रीराधा के चरण-कमलों की परिचर्या करने की योग्यता का अन्वेषण करती हूँ।

मालाग्रन्थनशिक्षया मृदुमृदुश्रीखण्डनिर्घर्षणा – देशेनाद्भुतमोदकादिविधिभिः कुञ्जान्तसम्मार्जनैः ।
वृन्दारण्यरहःस्थलीषु विवशा प्रेमार्तिभारोद्गमात् प्राणेशं परिचारिकैः खलु कदा दास्या मयाधीश्वरी ॥ २४२॥



माला गूँथन चन्दन घर्षण,
मोदक विधि मार्जन
कुञ्ज देश
प्रेमारति विवश
स्वामिनी कभी,
देंगी प्रिय परिचर्या निदेश
||242||

भावार्थ

श्रीवृन्दावन की एकान्त स्थलियों में, प्रेम की पीर के अतिशय मात्रा में उदित होने से विवश स्वामिनी श्रीराधा, माला गूँथने की शिक्षा देकर, धीरे-धीरे चन्दन घिसने का आदेश प्रदान करके, मोदक आदि बनाने की अद्भुत विधियों से परिचित कराकर, कुञ्ज के भीतर झाड़ू-बुहारी एवं उसकी साज-सज्जा करने की आज्ञा देकर तथा ऐसी ही विविध सेवाओं को मुझ दासी द्वारा कराकर, अपने प्रियतम को भलीभाँति कब प्रसन्न करेंगी ?

प्रेमाम्भोधिरसोल्लसत्तरुणिमारम्भेण गम्भीरदृग् -भेदा भङ्गिमृदुस्मितामृतनवज्योत्स्नाञ्चित श्रीमुखी ।
श्रीराधा सुखधामनि प्रविलसद्वृन्दाटवीसीमनि प्रेयोऽङ्के रतिकौतुकानि कुरुते कन्दर्पलीलानिधिः ॥ २४३॥



प्रेमाम्बुधि रस उल्लसित तरुणिमा,
समारंभ गंभीर नयन
भंगिमा सहित मृदु मधुरस्मित,
पियूष रश्मि श्री लसित वदन
कंदर्प कलानिधि श्रीराधा,
सुखधाम सुशोभित वृन्दावन
प्रियतम के अंक स्थित नव नव
कौतुक रत विलसित कुञ्ज भवन
||243||

भावार्थ

प्रेम-समुद्र के रस से उल्लसित यौवन के आरम्भ के कारण, जिनकी दृष्टि गम्भीर बन रही है, अनेक प्रकार की भंगियों के साथ, मन्द-मन्द मुसकान की अमृतमयी नवीन चाँदनी से, जिनका श्रीमुख व्याप्त हो रहा है; काम की कलाओं की निधि स्वरूपा वे श्रीराधा, शोभा सम्पन्न सुखधाम वृन्दावन की सीमा के अन्तर्गत प्रियतम (श्रीलालजी) की गोद में रति के आश्चर्यजनक खेलों को खेल रहीं हैं।

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्र

शुद्धप्रेमविलासवैभवनिधिः कैशोरशोभानिधिः वैदग्धीमधुराङ्गभङ्गिमनिधिर्लावण्यसम्पन्निधिः ।
श्रीराधा जयतान् महारसनिधिः कन्दर्पलीलानिधिः सौन्दर्यैकसुधानिधिर्मधुपतेः सर्वस्वभूतो निधिः ॥ २४४॥



उज्जवल प्रेम विलास विभव निधि,
नव किशोरवय शोभा की निधि
वैदग्धि मधुरांग भंगिनिधि,
रूप लावण्यता श्री सम्पद निधि
रसनिधि नव नव केलि कला निधि,
एकमात्र सौंदर्य सुधा निधि
श्री राधा वृषभानु भवन निधि,
जयति श्याम सर्वस्व प्राणनिधि
||244||

भावार्थ

शुद्ध प्रेम के विलासों रूपी वैभव की निधि, किशोरावस्था की शोभा निधि, चतुरता से भरी हुई मधुर-मधुर अंग-भंगिमाओं का निधि, लावण्य रूपी सम्पत्ति की निधि, महा रस की निधि, काम की लीलाओं की निधि, अमृतमय सौन्दर्य की एकमात्रनिधि एवं मधुपति (श्रीलालजी) की प्राणदायिनी निधि श्रीराधा की जय हो।

नीलेन्दीवरवृन्दकान्तिलहरीचौरं किशोरद्वयम् त्वय्येतत्कुचयोश्चकास्ति किमिदं रूपेण संमोहनम् ।
तन्मामात्मसखीं कुरु द्वितरुणीयं नौ दृढं श्लिष्यति स्वच्छायामभिवीक्ष्य मुह्यति हरौ राधास्मितं पातु नः ॥ २४५॥



नव नीलेंदी वर वृन्द कांति,
लहरी के चोर किशोर युगल
ये कौन यहाँ अतिशय मोहक है,
छिपे तुम्हारे वक्ष स्थल
तुम मुझको अपनी सखी करो,
ये करें हमारा आलिंगन
छाया विमुग्ध प्रिय देख प्रियास्मित,
करें हमारा संरक्षण
||245||

भावार्थ

"हे प्रिये ! आपके इन युगल कुचों में, नील कमलों के समूह की आभा की तरंगों को चुराने वाले तथा अपने रूप से सम्मोहित करने वाले, ये दोनों किशोर कैसे चमक रहे हैं, इसलिए अब आप मुझे अपनी सखी बना लीजिये, जिससे ये दोनों किशोर, हम दोनों युवतियों का गाढ़ आलिंगन करेंगे।" - इस प्रकार अपनी परछाँई को देखकर, हरि (श्रीलालजी) के मोहित होने पर, श्रीराधा का मन्द-मन्द रूप से हँसना, हम सभी की रक्षा करे।

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्र

सङ्गत्यापि महोत्सवेन मधुराकारां हृदि प्रेयसः स्वच्छायामभिवीक्ष्य कौस्तुभमणौ सम्भूतशोका कुधा ।
उत्क्षिप्यप्रियपाणिमेव विनयेत्युत्क्त्वा गताया बहिः सख्यै सास्त्र निवेदनानि किमहं श्रोष्यामि ते राधिके ॥ २४६॥



कौस्तुभ मणिगत प्रतिबिंब देख,
सुरतोत्सव में प्रियतम के उर
यह कौन सुंदरी यहाँ बसी है?
मुझसे भी आकार मधुर
"अन्यायी" कह प्रिय कर विमुक्त,
अतिरौष शोक के वश बाहर
सखियों से साश्रु निवेदन कब,
राधिके सुनुँगी विस्मय भर
||246||

भावार्थ

हे श्रीराधिके ! अत्यन्त उत्साह के साथ प्रियतम (श्रीलालजी) से मिलकर भी, प्रीतम के हृदय में सुशोभित कौस्तुभमणि में अपनी जैसी मधुर आकृति वाली परछाँई को देखकर, क्रोध के आवेश से शोक को प्राप्त होकर, प्रियतम के हाथ को दूर हटाकर एवं उन्हें 'अन्यायी' - ऐसा कहते हुए बाहर चले जाने पर, आपके द्वारा सख्य भाव से सखी से कही गई, शास्त्रों में कही गई न्याय सम्बन्धी बातों को, क्या मैं सुनूँगी ?

महामणिवरस्रजं कुसुमसञ्चयैरञ्चितम् महामरकतप्रभा प्रथित मोहित श्यामलम् ।
महारसमहीपतेरिव विचित्रसिद्धासनम् कदा नु तव राधिके कबरभारमालोकये ॥२४७॥



मणिमाला कुसुम
समूह रचित,
रस राज महीपति
सिद्धासन
श्यामल मनमोहन
राधे तब,
कब होंगे
केशपाश दर्शन
||247||

भावार्थ

हे श्रीराधिके ! महा मणियों की श्रेष्ठ मालाओं एवं फूलों से घिरे हुए, महा मरकत मणि के समान कान्ति वाले श्रीलालजी द्वारा गूँथे हुए एवं अपनी शोभा-सम्पत्ति से उन्हें मोहित करने वाले और महा रसराज श्रृंगार रूपी राजा के बैठने के विचित्र एवं सिद्ध आसन जैसे आपके केशपाश को, मैं कब देखूँगी ?

मध्ये मध्ये कुसुमखचितं रत्नदाम्ना निबद्धम् मल्लीमाल्यैर्घनपरिमलैर्भूषितं लम्बमानैः ।
पश्चाद्राजन्मणिवरकृतोदारमाणिक्यगुच्छम् धम्मिल्लं ते हरिकरधृतं कर्हि पश्यामि राधे ॥ २४८॥



रत्नों की माला से निबद्ध जो,
बीच बीच नव कुसुम रचित
अत्यंत सुवासित लम्बमान,
मल्ली मालाओं से मंडित
वर मणि माणिक्य गुच्छ ग्रंथित है,
पृष्ठभाग में परिशोभित
प्रियतम कर सज्जित वेणी नवल,
राधे कब देखूँगी विलसित
||248||

भावार्थ

हे श्रीराधे ! बीच-बीच में फूलों से खचित, रत्नों की माला से अच्छी प्रकार से बँधी हुई, अत्यन्त सुगन्धित और लटकती हुई चमेली की मालाओं से भूषित, निचले सिरे में श्रेष्ठ मणियों से रचित सुखप्रद माणिक्य के गुच्छों से सुशोभित एवं श्रीहरि (श्रीलालजी) के हाथों से रचित, आपकी वेणी को, मैं कब देखूँगी ?

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्र

विचित्राभिर्भङ्गीविततिभिरहो चेतसि परम् चमत्कारं यच्छंल् ललितमणिमुक्तादिललितः ।
रसावेशादुवित्तः स्मरमधुरवृत्ताखिलमहो – द्भुतस्ते सीमन्ते नवकनकपट्ट विजयते ॥ २४९॥



मणि मुक्ताओं से
जटित ललित,
तब कनक पट्ट
सीमंत स्थित
करता उर को
अति आह्लादित,
राधे विज्ञापक
सूरत चरित
||249||

भावार्थ

अहो ! आपकी (श्रीप्रियाजी की) माँग में, अनेक प्रकार की विचित्र विचित्र भंगियों के विस्तार से चित्त को चमत्कारपूर्ण आनन्द प्रदान करता हुआ, ललित मणि-मुक्ताओं से मनोहर बना हुआ एवं रस के आवेश से कामदेव के सम्पूर्ण मधुर चरित्रों से युक्त, अद्भुत नव कनकपट्ट सुशोभित हो रहा है।

अहो द्वैधीकर्तुं कृतिभिरनुरागामृतरस – प्रवाहैः सुस्निग्धैः कुटिलरुचिर श्याम उचितः ।
इतीयं सीमन्ते नवरुचिरसिन्दूररचिता सुरेखा नः प्रख्यापयितुमिव राधे विजयते ॥२५०॥



सीमंत स्थित
सिन्दूर रचित,
रेखा करती है
विज्ञापित
अति रुचिर कुटिल
श्यामल छवि को,
राधे हैं द्विधाकरण समुचित
||250||

भावार्थ

अहो श्रीराधे ! चतुरों के द्वारा अति स्निग्ध एवं अमृत स्वरूप अनुराग रस के प्रवाह से कुटिल और चमकते हुए श्याम केशों को दो भागों में विभक्त करना अथवा श्याम वर्ण श्रीलालजी को द्विविधा (चक्कर) में डालना उचित ही है; मानों इसी बात को हमें समझाने के लिए, माँग में नवीन सिन्दूर से रचित, यह सुन्दर रेखा, सर्वोपरि सुशोभित हो रही है।

चकोरस्ते वक्त्रामृतकिरणबिम्बे मधुकरस् -तव श्रीपादाने जघनपुलिने खञ्जनवरः ।
स्फुरन्मीनो जातस्त्वयि रससरस्यां मधुपतेः सुखाटव्यां राधे त्वयि च हरिणस्तस्य नयनम् ॥ २५१॥



मुख शरद सुधाकर के चकोर तब,
पादाम्बुज रस के मधुकर
तुम रस सरसी के चपल मीन,
तब जघन पुलिन के खंजनवर
तुम हो वन की रमणीय भूमि,
हरि नयन हरिण शोभायमान
हो सभी भांति तुम श्री राधे,
प्रियतम की सुखनिधि के समान
||251||

भावार्थ

हे श्रीराधे ! उन मधुपति (श्रीलालजी) के नेत्र, आपके अमृतमय किरणों को प्रवाहित करने वाले मुख रूपी चन्द्र मण्डल के चकोर, आपके शोभायमान चरण रूपी कमल के भ्रमर एवं आपकी श्रेष्ठ जघनस्थली रूपी पुलिनस्थली के खंजनहैं। यदि आप रस के सरोवर के समान हो, तो उनके नेत्र उस सरोवर के मीन की तरह हैं तथा यदि आप सुखदेने वाली वनस्थली जैसी हो, तो उनके नेत्र उस वनस्थली में हिरण की भाँति विचरण कर रहे हैं।

स्पृष्ट्वा स्पृष्ट्वा मृदुकरतलेनाङ्गमङ्गं सुशीतम् सान्द्रानन्दामृतरसहदे मज्जतो माधवस्य ।
अङ्के पङ्केरुहसुनयना प्रेममूर्तिः स्फुरन्ती गाढाश्लेषोन्नमितचिबुका चुम्बिता पातु राधा ॥२५२॥



कर पुनः पुनः मृदु कर स्पर्श,
प्रति अंग सुशीतल तन पुलकित
हो रहे सघन आनंदामृत रस,
सरवर में माधव मज्जित
वे अद्भुत प्रेममूर्ति पंकज नयनी,
राधा सुअंक विलसित
अति गाढ़ालिंगन उर्ध्व चिबुक
रक्षक हो प्रियतम परिचुंबित
||252||

भावार्थ

श्रीप्रियाजी के सुखद एवं शीतल अंग-प्रत्यंगों की अपने हाथों से बार-बार स्पर्श करके, घनीभूत आनन्द रूपी अमृतमय रस के सरोवर में निमग्न होते हुए, माधव (श्रीलालजी) की गोद में देदीप्यमान, गाढ़ आलिंगन के कारण जिनका चिबुक कुछ ऊपर उठा हुआ है एवं प्रीतम ने जिनका चुम्बन किया है; वे श्रीराधा हमारी रक्षा करें।

सदा गायं गायं मधुरतरराधाप्रिययशः सदा सान्द्रानन्दा नवरसदराधापतिकथाः ।
सदा स्थायं स्थायं नवनिभृतराधारतिवने सदा ध्यायं ध्यायं विवशहृदि राधापदसुधाः ॥ २५३॥



मधुमय राधाप्रिय
सुयश सदा,
रसप्रद राधापति कथा गान
नव निभृत
राधिका रतिवन में,
हों श्रीराधा पद सुधा ध्यान
||253||

भावार्थ

श्रीराधा की नित्य नवीन एवं एकान्त केलियों के स्थल वृन्दावन में निरन्तर निवास करते हुए, श्रीराधा-प्रिय (श्रीराधावल्लभलालजी) के मधुरातिमधुर यशों का गान करते हुए, श्रीराधापति (श्रीराधावल्ल्भलालजी) की सघन आनन्द एवं नवीनतम रस को देने वाली कथाओं का सदैव श्रवण करते हुए एवं श्रीराधा-पद-सुधा का विवश हृदय से हमेशा ध्यान करते हुए, अपना प्रकट जीवन व्यतीत करना चाहिये।

श्याम श्यामेत्यमृतरससंस्राविवर्णाञ्जपन्ति प्रेमौत्कण्ठ्यात् क्षणमपि सरोमाञ्चमुच्चैर्लपन्ती ।
सर्वत्रोच्चाटनमिव गता दुःखदुःखेन पारम् काङ्क्षत्यह्नो दिनकरमलं क्रुध्यती पातु राधा ॥२५४॥



"श्याम श्याम" इस सुधामधुर,
रसमय सुनाम का जप करती
क्षण क्षण पुलकित प्रेमोत्कंठित,
हो कर ऊँचे स्वर भरती
हे अतिशय उद्विग्न हृदय,
पल भर न कहीं पर टिकता मन
होती हे क्रुद्ध दिवाकर पर,
राधा रक्षक शरणागत जन
||254||

भावार्थ

"हे श्याम ! हे श्याम !" - अमृतमय रस को प्रवाहित करने वाले इन अक्षरों को जपती हुई, दूसरे ही क्षण प्रेम की उत्कंठा से रोमांचित होकर, उसी नाम का उच्च स्वर से उच्चारण करती हुई, अत्यन्त दुःख के कारण, सभी जगहों से उचटे हुए मन वाली, दिन की समाप्ति की आकाँक्षा करते हुए, सूर्य के प्रति अत्यन्त क्रोध से भरी हुई, श्रीराधा हमारी रक्षा करें।

कदाचिद् गायन्ती प्रियरतिकलावैभवगतिम् कदाचिद् ध्यायन्ती प्रियसहभविष्यद्विलसितम् ।
अलं मुञ्चामुञ्श्चेत्यतिमधुरमुग्धप्रलपितैर् -नयन्ती श्रीराधा दिनमिह कदानन्दयतु नः ॥२५५॥



प्रियतम की रति कला पूर्ण,
वैभव का करती कभी गान
कभी प्रेष्ठ के संग विगत,
भावी विलास का कभी ध्यान
छोड़ो छोड़ो बस रहने दो,
यों मधुर मुग्ध करतीं प्रलाप
इस भांति दिवस यापन करतीं,
राधे शरण्य हों सदा आप
||255||

भावार्थ

कभी प्रियतम (श्रीलालजी) की प्रीति की कलाओं की वैभवपूर्ण रीति का गान करती हुई, कभी उनके संग भविष्य में होने वाले विलास का ध्यान करते हुए "बस छोड़ो, छोड़ो" - इस प्रकार का मधुर और मनोहारी प्रलाप करते हुए, दिन को व्यतीत करती हुई, श्रीराधा हमें इस जीवन में, कब आनन्दित करेंगी ?

श्रीगोविन्द व्रजवरवधूवृन्दचूडामणिस्ते कोटिप्राणाभ्यधिकपरमप्रेष्ठपादाब्जलक्ष्मीः ।
कैङ्कर्येणाद्भुतनवरसेनैव मां स्वीकरोतु भूयो भूयः प्रतिमुहुरधिस्वामि संप्रार्थयेहम् ॥ २५६ ॥



ब्रज ललनामाणि सर्व शिरोमणि,
जो सर्वस्व सहचरी गण
जिनके पद पंकज की शोभा,
तुम्हें प्राणप्रिय वांछित धन
श्रीगोविन्द प्रार्थना मेरी तुमसे,
पुनः पुनः प्रतिक्षण
अनुपम राधा रस सेवा में,
करो नियुक्त किंकरी गण
||256||

भावार्थ

हे गोविन्द (श्रीलालजी) ! मैं आपसे बार-बार यही प्रार्थना करता हूँ कि व्रज की श्रेष्ठ वधूटियों की सिरमौर (श्रीप्रियाजी), जिनके चरण-कमल की शोभा आपको अपने कोटि-कोटि प्राणों से भी अधिक परम प्रिय है; वे श्रीराधा मुझे अपने नित्य नवीन रस से पूर्ण एवं अद्भुत कैंकर्य के द्वारा अपनी स्वीकार करें।

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्र

अनेन प्रीता मे दिशति निजकैङ्कर्यपदवीम् दवीयो दृष्टीनां पदमहह राधा सुखमयी ।
निधायैवं चित्तेकुवलयरुचिं बर्हमुकुटम् किशोरं ध्यायामि द्रुतकनकपीतच्छविपटम् ॥ २५७॥



द्रवित सुवर्ण सदृश्य पीताम्बर,
सिर पर मोर मुकुट शोभन
नील कमल सम अंग कांति करतीं,
किशोर मैं उर धारण
अतः प्रसन्न सुखमयी राधा,
अपनायें कर दासी जन
अविवेकी को सदा अगोचर,
सुलभ सदा सहृदय सज्जन
||257||

भावार्थ

"अहा हा! सामान्य जनों की दृष्टि से जिनका स्वरूप अत्यन्त दूर है, वे सुखमयी श्रीराधा, मेरे द्वारा श्रीलालजी का ध्यान किये जाने वाले कृत्य से प्रसन्न होकर, मुझे अपनी कैंकर्य पदवी प्रदान करें।"- इस बात को हृदय में रखकर, द्रवीभूत स्वर्ण के समान पीत वस्त्रों को धारण करने वाले, सिर पर मोरमुकुट धारण करने व्राले एवं नील कमल के समान कामि वाले, किशोर (श्रीलालजी) कन मैं ध्यान करती हूँ।

ध्यायंस्तं शिखिपिच्छमौलिमनिशं तन्नाम सङ्कीर्तयन् नित्यं तच्चरणाम्बुजं परिचरंस्तन्मन्त्रवर्यं जपन् ।
श्रीराधापददास्यमेव परमाभीष्टं हृदा धारयन् कर्हिस्यां तदनुग्रहेण परमोद्भूतानुरागोत्सवः ॥ २५८॥



ध्यान मयूर मुकुट धारी का,
नित्य नाम का संकीर्तन
पद पंकज परिचर्या प्रतिदिन,
मंत्रराज जप युक्त भजन
परम अभीष्ट प्रिया पद सेवा
करूँ सर्वदा उर धारण
कब उनकी अनुकंपा से होऊँगी,
अनुरागिणी चरण
||258||

भावार्थ

अहर्निशि उन मोरमुकुट को धारण करने वाले श्रीलालजी का ध्यान करताहुआ, निरन्तर उनके नामों का संकीर्त्तन करता हुआ, नित्य उनके चरण-कमलों की सेवा करता हुआ, उनके मन्त्रराज ' श्रीराधा' नाम का जप करता हुआ तथा परम अभीष्ट श्रीराधा-पद-दास्य को ही अपने हृदय में धारण करता हुआ, उनकी कृपा से प्रकट हुए, परम अद्भुत एवं उत्सव जैसे उत्साह से पूर्ण अनुराग से सम्पन्न, मैं कब बनूँगा?

श्रीराधारसिकेन्द्ररूपगुणवद्गीतानि संश्रावयन् गुञ्जमञ्जुलहारबर्हमुकुटाद्यावेदयंश्चाग्रतः ।
श्यामप्रेषितपूगमाल्यनवगन्धाद्यैश्च संप्रीणयंस् – त्वत्पादाननखच्छटारसह्रदे मग्ना कदा स्यामहम् ॥२५९॥



श्री राधा रसिकेन्द्र रूप गुण,
संयुत गीतावली का गान
गुंजाहार मयूर मुकुट का,
नित्य निवेदन कर निर्माण
श्याम सुभग प्रेषित माला,
गंधादि नित्य आदान प्रदान
तब पदाब्ज नख छठा सुधासर,
कब होगा मन मीन समान
||259||

भावार्थ

श्रीराधा और रसिकेन्द्र (श्रीलालजी) के रूप एवं गुणों का वर्णन करने वाले गीतों का गान करता हुआ, उनके सम्मुख गुञ्जाओं के सुन्दर हार तथा मोरमुकुट आदि समर्पण करता हुआ एवं श्रीश्याम (श्रीलालजी) द्वारा भेजी हुई सुपारी, माला और इत्रादि से आपको सम्यक् प्रकार से प्रसन्न करता हुआ, आपके चरण-कमल की नख-छटा रूपी रस-सरोवर में, मैं कब निमग्न हो जाऊँगा ?

क्वासौ राधा निगमपदवीदूरगा कुत्र चासौ कृष्णस्तस्याः कुचमुकुलयोरन्तरैकान्तवासः ।
क्वाहं तुच्छः परममधमः प्राण्यहो गर्ह्यकर्मा यत् तन् नाम स्फुरति महिमा एष वृन्दावनस्य ॥ २६०॥



वे निगम अगम्य
कहाँ राधा,
कुच कमल कृष्ण
एकांतवास
अति तुच्छ अधम
मैं जीव कहाँ,
प्रस्फुरण नाम
श्रीवन विलास
||260||

भावार्थ

कहाँ तो वैदिक पद्धति से अप्राप्य वह श्रीराधा, कहाँ उनके कुच-कमलों के मध्य में एकान्त निवास करने वाले कृष्ण (श्रीलालजी) और कहाँ मैं अत्यन्त अधम, निन्दनीय कर्म करने वाला तुच्छ प्राणी; आश्चर्य है कि इतने पर भी उन श्रीराधा का नाम, जो मेरे हृदय में स्फुरित हो रहा है, यह श्रीवृन्दावन की ही महिमा है।

वृन्दारण्ये नवरसकला कोमलप्रेममूर्तेः श्रीराधायाश्चरणकमलामोदमाधुर्य्यसीमा ।
राधां ध्यायन् रसिकतिलकेनात्तकेलीविलासाम् तामेवाहं कथमिह तनुं न्यस्य दासी भवेयम् ॥ २६१॥



मैं रसिक शिरोमणि विलासिनी,
राधा का करती हुयी ध्यान
वृन्दावन में तन त्याग करुँगी,
नित्य निकुंजालय प्रयाण
नूतन रसललित कला कोमल,
उन प्रेममूर्ति की आश्रित बन
श्रीराधा पद माधुरी सीम,
पाऊँगी कभी किंकरी तन
||261||

भावार्थ

श्रीवृन्दावन में रसिक तिलक (श्रीलालजी) के साथ क्रीड़ा विलासों को करने वाली, रस की नवीनतम एवं कोमल कलाओं से पूर्ण तथा प्रेम की मूर्त्ति श्रीराधा का ध्यान करता हुआ, अपने इस शरीर को त्यागकर, मैं किस प्रकार सुगन्धि और माधुर्य की सीमा स्वरूप, श्रीराधा के चरण-कमलों की दासी होऊँगा ?

हा कालिन्दि त्वयि मम निधिः प्रेयसा क्षालितोभूग भो भो दिव्याद्भुततरुलतास्तत्करस्पर्शभाजः ।
हे राधाया रतिगृहशुका हे मृगा हे मयूराः भूयो भूयः प्रणतिभिरहं प्रार्थये वोऽनुकम्पाम् ॥ २६२॥



हा कालिंदी हे तुम्हे स्मरण,
तुममें ही करवाते प्रतिदिन
प्रियतम प्राणप्रिया को मज्जन,
हे अद्भुत दिव्य लता तरुगण
तुम उनके कर स्पर्श भाजन,
हे राधा रतिग्रह शुक सारी
हे मृगों मयूरों बार बार
हे नमस्कार कर कृपा बताओ,
कहाँ प्राण जीवनाधार
||262||

भावार्थ

हे श्री यमुने ! मेरी निधि स्वरूपा (श्रीप्रियाजी) को प्रीतम (श्रीलालजी) ने आपके जल में नित्य स्नान कराया है। हे दिव्य और अद्भुत वृक्षो व लताओ ! आप सब उन श्रीप्रियाजी के हाथों का स्पर्श प्राप्त करने वाले हो। हे श्रीराधा के शैया भवन के शुको ! हे मृगो ! हे मयूरो ! मैं आप सबको बार-बार प्रणाम करते हुए, आपकी कृपा प्राप्ति के लिए, आपसे प्रार्थना करता हूँ।

वहन्ती राधायाः कुचकलशकाश्मीरजमहो जलक्रीडावेशाद् गलितमतुलप्रेमरसदम् ।
इयं सा कालिन्दी विकसितनवेन्दीवररुचि – स्सदा मन्दीभूतं हृदयमिह सन्दीपयतु मे ॥ २६३॥



राधा कुच कलश
ललित केसर,
नीलाम्बुज छवि
प्रवाह विलसित
श्रीकालिंदी
सर्वदा करें,
मम मंद हृदय को
आलोकित
||263||

भावार्थ

अहा हा ! जो जल-क्रीड़ा के आवेश से धुलकर छूटी हुई एवं अनुपम प्रेम-रस को देने वाली, श्रीराधा के कुच-कलशों में लगी केशर को बहाती रहती है तथा जिसकी कान्ति खिले हुए नील कमल के समान है; वह यह श्रीयमुनाजी, मेरे इस मन्दीभूत हृदय को, सदा प्रकाशित करें।

सद्योगीन्द्र सुदृश्यसान्द्ररसदानन्दैकसन्मूर्त्तयः सर्वेऽप्यद्भुतसन्महिम्नि मधुरे वृन्दावने सङ्गताः ।
ये क्रूरा अपि पापिनो न च सतां सम्भाष्य दृश्याश्च ये सर्वान् वस्तुतया निरीक्ष्य परमस्वाराध्यबुद्धिर्मम ॥२६४॥



जो क्रूर महापापी अयोग्य,
सज्जन के दर्शन संभाषण
सबका वास्तविक स्वरुप देख,
आराध्य बुद्धि हो मेरे मन
अद्भुत महिमामय मधुर धाम,
पाकर संगति श्रीवृन्दावन
होते वे भी योगीश दृश्य,
संमूर्ति सरस आनंद सदन
||264||

भावार्थ

जो व्यक्ति क्रूर हैं, पापी हैं और सज्जनों के साथ बातचीत तथा दर्शन के योग्य भी नहीं हैं, वे सभी अद्भुत महिमा वाले मधुर सत् स्वरूप वृन्दावन में निरन्तर निवास करने के लाभ को प्राप्त करके, श्रेष्ठ योगीन्द्रों के लिए भी दर्शनीय, सघन रस के दाता और आनन्द की एकमात्र श्रेष्ठ मूर्त्ति हो जाते हैं; उन सबको तत्व रूप में देखकर, उनमें मेरी परम आराध्य बुद्धि रहती है।

यद् राधापदकिङ्करीकृतहृदां सम्यग्भवेद् गोचरम् ध्येयं नैव कदापि यद् धृदि विना तस्याः कृपास्पर्शतः ।
यत् प्रेमामृतसिन्धुसाररसदं पापैकभाजामपि तद्वृन्दावनदुष्प्रवेशमहिमाश्चर्य हृदि स्फूर्जतु ॥ २६५॥



श्री राधा किंकरी भाव भावित,
को जो सम्यक गोचर
उनकी अनुकम्पा स्पर्श बिना,
साधन समस्त हैं आडम्बर
जो महापापियों को भी मज्जित,
कर देती प्रेमामृतसर
अद्भुत वृन्दावन की महिमा,
आलोकित हो मम उर अंतर
||265||

भावार्थ

जो श्रीराधा के चरणों के प्रति अपने हृदय में किंकरी का भाव रखने वालों को ही सम्यक् प्रकार से दृष्टिगोचर हो सकता है, जो उन श्रीराधा की कृपा के प्राप्त हुए बिना, कभी भी हृदय में ध्यान का विषय नहीं हो सकता है एवं जो एकमात्र पाप के ही पात्र हैं, ऐसे घोर पापियों को भी अमृतमय प्रेम-सिन्धु के सार रूप 'रस' का दान करने वाला है; उस श्रीवृन्दावन की गूढ़ातिगूढ़ महिमा मेरे हृदय में स्फुरित हो।

श्रीमद्राधासुधानिधिस्तोत्र

राधाकेलिकलासु साक्षिणि कदा वृन्दावने पावने वत्स्यामि स्फुटमुज्ज्वलाद्भुतरसे प्रेमैकमत्ताकृतिः ।
तेजोरूपनिकुञ्ज एव कलयन् नेत्रादिपिण्डस्थितम् तादृक्स्वोचितदिव्यकोमलवपुः स्वीयं समालोकये ॥२६६॥



श्री राधा केलि कला साक्षी,
अद्भुत उज्ज्वल रसमय पावन
मैं वास करुँगी वृन्दावन,
होकर प्रेमामृत मत्त मगन
तेजोमय नवल निकुंजों में,
कर निज नयनों को संयोजन
कब तदनुरूप अपना देखूँगी,
कोमल प्रिया किंकरी तन
||266||

भावार्थ

श्रीराधा की कलापूर्ण केलियों के साक्षी, प्रकट, उज्ज्वल, अद्भुत, रसमय एवं पवित्र वृन्दावन में, एकमात्र प्रेम में उन्मत्त होकर, मैं कब निवास करूँगा? तथा शरीर में स्थित नेत्रादि इन्द्रियों को, तेज युक्त निकुञ्जों में लगाता हुआ, तेजमय राधाकिंकरी भाव के अनुरूप, अपने दिव्य और कोमल राधाकिंकरी वपु को, मैं कब देखूँगा ?

यत्र यत्र मम जन्मकर्मभिर्नारकेऽथ परमे पदेऽथ वा ।
राधिकारतिनिकुञ्जमण्डली तत्र तत्र हृदि मे विराजताम् ॥ २६७॥



जहाँ जहाँ हो
जन्म हमारा,
नरकों में कि
परम पद में
श्रीराधा रति कुंज मंडली,
सदा सुशोभित हो मन में
||267||

भावार्थ

नरक में, स्वर्ग में अथवा कर्मों के अनुसार जहाँ-जहाँ मेरा जन्म हो; वहाँ-वहाँ श्रीराधिका के प्रीतिमय विलासों की निकुञ्जों का समूह, मेरे हृदय में विराजमान हो।

क्वाहं मूढमतिः क्व नाम परमानन्दैकसारं रसः श्रीराधाचरणानुभावकथया निस्यन्दमाना गिरः ।
लग्नाः कोमलकुञ्जपुञ्जविलसद्वृन्दाटवीमण्डले क्रीडच्छ्रीवृषभानुजापदनखज्योतिश्छटाः प्रायशः ॥२६८॥



परमानन्द सार रस नाम कहाँ,
मैं मूढ़ अल्पमति जन
राधा पद अनुभाव कथा,
नि:सृत तथापि ये सुरस वचन
कोमल कुंज पुंज विलसित,
आश्रित वृन्दावन भुवि मंडल
लीलायित श्रीवृषभानुसुता,
पद नख मणि ज्योति छटा निर्मल
||268||

भावार्थ

कहाँ तो मन बुद्धि मैं और कहाँ परमानन्द का एकमात्र सार 'रस' रूप वाला श्रीराधा का नाम! तथापि श्रीराधा के चरणों के प्रति अनंत मधुर भावों के कथन द्वारा, प्रसार को प्राप्त हुई मेरी वाणी, नित्य नवीन कोमल कुंजों के समूह से सुशोभित, श्रीवृंदावन में संलग्न है और जिसमें नित्य क्रीड़ा परायण प्रेममूर्ति श्रीवृषभानुनंदिनी (श्रीप्रियाजी) के चरणों के नखों की ज्योति की छटा प्रायः विद्यमान है।

श्रीराधे श्रुतिभिर्बुधैर्भगवताप्यामृग्य सद्वैभवे स्वस्तोत्रस्वकृपात एव सहजो योग्योप्यहं कारितः ।
पद्येनैव सदापराधिनि महन्मार्ग विरुध्य त्वदे – काशे स्नेहजलाकुलाक्षि किमपि प्रीतिं प्रसादीकुरु ॥२६९॥



बुधजन वेद वचन भगवद,
अन्वेषणीय तब रस वैभव
अपनी अनुकम्पा से सहज,
रचाया तुमने पद्य स्तव
अपराधी सन्मार्ग विरोधी,
किन्तु तुम्हारा आश्रित जन
प्रीती प्रसाद प्रदान करो राधे,
करुणा सुस्निग्ध नयन
||269||

भावार्थ

हे श्रीराधे ! आपका श्रेष्ठ वैभव श्रुतियों, बुधजनों एवं भगवान के लिए भी खोज का विषय है; किन्तु आपने अपनी कृपा के द्वारा ही, अपने स्तोत्र ग्रन्थ को, पद्यों के द्वारा छन्दवद्ध बनाने के लिए, मुझे सहज ही योग्य बना दिया है। हे स्नेह जल से भींगे हुए नेत्रों वाली ! महत् जनों के द्वारा प्रतिपादित मार्गों के विरुद्ध जाने वाले, अपराधों में सदा लिप्त रहने वाले एवं एकमात्र आपकी आशा रखने वाले, मुझ पर अपनी अनिर्वचनीय प्रीतिपूर्ण दृष्टि डालने की कृपा करें।

अद्भुतानन्दलोभश्चेन् नाम्ना रससुधानिधिः ।
स्तवोऽयं कर्णकलशैर्गृहीत्वा पीयतां बुधाः ॥२७०॥



हो अपूर्व आनंद
लोभ यदि,
है बुधजन
सहृदय सूजान
वृन्दावनी कर्ण
कलशों से करो,
सुधा निधि सुरस पान!
||270||

भावार्थ

हे बुधजनों ! यदि आपके चित्त में चमत्कार प्राण अद्भुतानन्दमूलक 'रस' का लोभ हो, तो 'रस (राधा)-सुधा-निधि' नामक इस स्तोत्र को, अपने कानों रूपी कलशों में भरकर, रस का पान करो।

!! "जै जै श्रीवृन्दावनेश्वरी

चरण कमल कृपावलंब जृंभित

श्रीहित हरिवंशचंद्र

गोस्वामिना विरचितं

श्री राधा सुधा निधि स्रोत्रं की

जै जै श्री हित हरिवंश" !!

!! श्री ललिता जू की जय !!

!! श्री विशाखा जू की जय !!

!! श्री चम्पकलता जू की जय !!

!! श्री चित्रा जू की जय !!

!! श्री तुङ्गविद्या जू की जय !!

!! श्री इंदुलेखा जू की जय !!

!! श्री रंगदेवी जू की जय !!

!! श्री सुदेवी जू की जय !!

!! समस्त सहचरी वृन्द की जय !!

!! श्री सदगुरुदेव भगवान की जय !!